Chapter- 3

तृतीय अध्याय

"गुजराती की दलित कहानियाँ में नारी संवेदना"

अध्याय–3

गुजराती की दलित कहानियाँ में नारी संवेदना

साहित्य एक निष्ठा का कार्य होता है। जो भी साहित्य का सृजन करता है, उसका निष्ठावान होना आवश्यक है। सृजनात्मक कार्य में लिखना ही नहीं किंतु उन प्रत्येक वस्तु को नाम देना होता है और उसके होने के रहस्य को जानना है, जो उसमें नियमित रुप से स्पंदित हो रहा है। इसीलिए साहित्य में अपनी एक संमोहक शक्ति होती है, ऐसा कहा जाता है। सर्वप्रथम वह व्यक्ति संमोहित होता है। उसके बाद समाज को उस व्यक्तिगत चिंतन का सामाजिक रुपांतरण भी साहित्य से होता है। महाभारत में लिखा गया है–

"गृहिणी के बिना घर जंगल है और पत्नी के बिना पुरुष जंगली"[1]

किंतु कौटिल्य के अर्थशास्त्र में लिखा है–

> **"पुरुष कई स्त्रियों के साथ विवाह कर सकता है। स्त्रियाँ मात्र संतानोत्पति करने के लिए है।"**[2]

किसी भी समाज की समृद्धि और सजगता का ज्ञान इस बात से हो जाता है कि उस समाज में नारी की दशा क्या है ? जैन श्वेतांबर पंथ में नारी भिक्षुणी थी, ऐसा दर्शाया गया है। किंतु दिगंबर पंथ वालों ने ऐसी घोषणा की थी, कि नारी के लिए मुक्ति संभव नहीं है। इसलिए स्त्रियों को सीमित धर्म का पालन करना चाहिए, जिससे उसे दूसरे जन्म में पुरुष के रुप में जन्म मिल सके। बौद्ध धर्म में भी संघ में स्त्रियों को प्रवेश की अनुमति नहीं थी, किंतु बाद में गौतम बुद्ध ने उसे अनुमति दी।

वैदिक काल पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि भारतीय समाज में स्त्रियों को विशेष आदर और सम्मान प्राप्त था। किंतु बौद्ध काल तक आते–आते धीरे–धीरे स्त्रियों की ओर देखने का नजरिया भी बदल गया।

दलित साहित्यकारों का स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण गौतम बुद्ध की वही प्रगतिशील चेतना से परिपूर्ण है। उनकी दृष्टि में नारी मात्र भोग्या ही नहीं बल्कि पुरुष जितना ही उसका भी स्वतंत्र व्यक्तित्व है। दलित साहित्य में स्त्री मात्र पति की छाया बनकर नहीं जीती बल्कि अपने स्वतंत्र अस्तित्व रखकर वह पुरुष की समानता के लिए संघर्षशील पुरुष की सहभागी बनकर सामने आती है। महात्मा ज्योतिबा फुले की पत्नी सावित्रीबाई समानता लाने वाली प्रथम महिला हैं।

गुजराती दलित साहित्य का प्रारंभ कविता से हुआ था, किंतु दलितों की संवेदना को कहानी में बेहतर ढंग से चित्रित किया गया, इसलिए आज गुजराती दलित साहित्य में कहानी एक सशक्त विधा बन गई है। गुजराती दलित कहानियों में विषय का विस्तार है, किंतु मेरे शोध–प्रबंध का विषय दलित नारी से संबंधित है, अतः गुजराती दलित नारियों के प्रति ग्रामीण एवं शहरी परिवेश में की जाने वाली अस्पृश्यता, जातीय शोषण, आर्थिक शोषण, सवर्णों के अत्याचार, अन्याय के समक्ष दलित स्त्री का विद्रोही रुप आदि विषय पर दलित नारी की संवेदना को तीसरे अध्याय में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

3.1 दलित स्त्री का जातीय शोषण

1. मंकोडा(चीटा)–बी.केशरशिवम्

'मंकोडा' बी.केशरशिवम् की एक प्रतीकात्मक कहानी है। यह कहानी दलित स्त्री पर होने वाले अत्याचार की करुण गाथा लेकर हमारे समक्ष आती है। यह कहानी मात्र दलित समस्या ही नहीं निर्देशती, नारी समस्या का भी निर्देश करती है। नारी को जननी या भगिनी नहीं, मात्र भोग्या रुप या वस्तु रुप में देखने वाले पुरुष प्रधान समाज के लिए यह कहानी एक प्रतिकार के समान है। एक स्त्री अपने पति की उपस्थिति में अपने आप को सुरक्षित, महसूस करती है, किन्तु एक दलित स्त्री पति की उपस्थिति में भी उसी के घर में एक सवर्ण पुरुष द्वारा बलात्कार के प्रयास का भोग बनती है। अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए एक दलित स्त्री को मात्र गरीबी से ही नहीं उन पुरुषों से भी लड़ना पड़ता है, जो उन्हें अपनी हवस का शिकार बनाना चाहते हैं।

कहानी की नायिका संतोक अपने पति गाभा एवं बेटे के साथ गरीबी में भी खुश थी। संतोक एक स्वाभिमानी स्त्री थी। उसका पति रणछोड़ नामक सवर्ण व्यक्ति के खेत में मजदूरी करता है। संतोक भी उसके साथ जाती है, किंतु जब उसे पता चलता है कि रणछोड़ की कुदृष्टि उस पर है, तो वह मजदूरी करने नहीं जाती।. पति उसके इस विचार को गंभीरता से नहीं लेता और यह उसका वहम है, ऐसा कहता है तब अपने ही पति की कायरता उससे सहीं नहीं जाती क्रोध में वह पति से कहती है–

> **"क्यों तुम्हारी आँखे फूट गई हैं? उस पसली को भी उठाकर नहीं ले गया था? बेचारी के आगे–पीछे कोई नहीं इसलिए कौन उसे बचाए? पसली ने मोहल्ले में बात कहनी चाही तो बेचारी को मारकर कुएँ में डाल दिया। उसने कोई आत्महत्या नहीं की थी। तुम्हारे जैसे बेशर्म आदमी को मैं क्या कहूँ?"**[3]

दलित पुरुष गाभा एक मजदूर होने से रणछोड़ की हरकतों को अनदेखा करना चाहता है। वह जानता है कि यदि उसने रणछोड़ का विरोध किया तो दो वक्त की रोटी जुटाना उसे भारी पड जाएगा। ताकतवर के सामने सभी झुकते हैं, किन्तु संतोक गरीब होने पर भी अपने आपको कमजोर नहीं समझती। अपने स्वाभिमान एवं पवित्रता को बचाने के लिए वह अपने पति में भी स्वाभिमान जगाना चाहती है।

पति–पत्नी इस विषय में लडने लगते हैं। गुस्से में गाभा संतोक पर हाथ उठाता है। अपने बेटे को लेकर गाभा घर के बाहर सो जाता है और संतोक घर में लेट जाती है। आधी रात को रणछोड, संतोक के घर आता है। गाभा पहले उसे कोई चोर समझता है, किन्तु उसकी आवाज वह पहचान जाता है। रणछोड़ उस पर दबाव ड़ालता है कि वह अपनी पत्नी को जगाकर दरवाजा खुलवाए। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो उसकी जान ले ली जाएगी। अभी तक रणछोड का पक्ष लेने वाले गाभा के समक्ष एक विकट परिस्थिति खड़ी थी। उसका आत्मविश्वास और स्वाभिमान जाग जाता है, चाहे उसकी जान चली क्यों न जाए, अपने दबाए हुए मुँह को छुडाकर वह संतोक से कहता है, कि बाहर नाग है वह दरवाजा ना खाले। संतोक रणछोड़ की आवाज पहचान जाती है। उसकी स्थिति दयनीय थी, एक तरफ उसके पति के प्राण संकट में होते हैं, क्योंकि

यदि वह दरवाजा नहीं खोलती तो रणछोड़ उसे मार डालेगा और यदि उसने दरवाजा खोला तो उसकी इज्जत लुट जाएगी। ऐसी स्थिति में वह अपना पत्नी धर्म निभाने के लिए, अपने पति की रक्षा के लिए दरवाजा खोल देती है।

रणछोड़ संतोक को धक्का देकर भीतर धकेल देता है और खुद भीतर जाकर दरवाजा बंद कर देता है। बाहर गाभा चीख–चीख कर मोहल्ले वालों को इकट्ठा की लेता है। परिस्थिति की गंभीरता और विकटता देख संतोक के मन में एक युक्ति सूझती है। वह रणछोड को अपने पास बुलाकर प्रेम का नाटक करती है और मोका पाकर उसकी इन्द्री काट देती है। अब रणछोड के पास वहाँ से भागने के अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता नहीं था। भागते हुए रणछोड़ को गाभा लकड़ी से मारने लगता है, जिस पर संतोक कहती है–

> **"अब रहने दो, मरे हुए को मत मारो। उसे जाने दो। उसकी ज़िंदगी में अब वह किसी का नाम नहीं लेगा।"4**

संतोक के ये शब्द अत्याचार के विरुद्ध उसके प्रतिकार का बयान करते हैं। कहानी का अंत कलात्मक है। संतोक एक आकर्षक नारी पात्र के रुप में हमारे समक्ष आती है, जो गरीब और दलित है, किन्तु अबला नहीं है।

कहानी का अंत कलात्मक और चोटदार है। दलित चेतना की प्रस्तुती करने वाला इसका अंत इस प्रकार है–

> **"यह तेरी माँ की ननद को भी क्या समझ कर रखा था, खड़े–ही–खड़े चीर डाला, 'ले यह तोर डेंट्यु लेता जा'....'संतोक मंकोड़े के आँकडे की तरह उसकी काटी हुई इंद्री से दौड़ते हुए रणछोड़ के पैर पर वार करती है।"5**

लेखक की भाषा सबसे सबल तत्त्व है; ग्रामीण भाषा का प्रयोग करके उन्होंने कहानी को अधिक चित्रात्मक बना दिया है। मंकोड़ा, नाग जैसे शब्द प्रतीकात्मक शब्द के रुप में उपयोग किए गए हैं। कहानी के अंत में थोड़े अश्लील ग्राम्य शब्द प्रयोग हुए हैं, किंतु वह स्थिति के अनुरुप हुए हैं। संतोक रणछोड़ को नपुंसक बनाती है और समग्र नारीजाति को उसके वासना के घेरे में से मुक्त करती है।

2. लक्षण (लाखुं)–मधुकान्त कल्पित

काली हरिजन जाति की युवती है। काली ने बचपन से ही छुआ–छूत जैसे शब्द सुने थे। जब वह छोटी थी तब वह डोलची लेकर तेल लेने जाती है। रास्ते में गॉव के नारसंगभा को उसके दुपट्टे का किनारा छू जाता है, तब वे उसे गधी कहकर थप्पड मारते हैं और उसका तेल गिर जाता है। रोती–रोती बह घर आती है तब उसके पिता से आकर पूछती है कि–

> **"पिताजी ! नारसंगभ ने थप्पड मारा तो वे अछूत तो नहीं हो गए ?"**
> **पिता उससे कहते हैं–बहुत इतराती है लडकी, यह लोकमान्यता है, "अपने छूने से वे अछूत होते हैं।"6**

यह प्रसंग याद करके वह मनोसंघर्ष अनुभव करती है। दूसरी बार वह मुखिया के घर गेहूँ साफ करने जाती है। वह रमतुजी को जल्दी में गेहूँ देती है, तब खाली सूप देते हुए रमतुजी का हाथ काली को छू जाता है और वे नाराज़ होकर कहते हैं–

> **"तुझे कुछ समझ में आता है, लड़की ? तेरा हाथ मुझे छू जाता है, इसकी तुझे खबर रहती है?"[7]**

मुखिया ने पानी का लोटा लाकर छींटे मारे तब रमतुजी स्तब्ध रह गया था। अर्थात् उसे स्वयं पहली बार अछूत होने की पीड़ा का अहसास हुआ था। जिसके कारण वह मुखिया के चले जाने पर उसे बहुत गालियाँ देता है। रमतुजी जब मुखिया को गाली देता है, तब काली सोचती है कि वैसे तो, रमतुजी तो अच्छे आदमी लगते हैं

जब काली जवान हो गई तब एक बार मुखिया के घर धान की पौध उखाड़ने के लिए रमतुजी काली को काम पर बुलाने आता है। काली उसे वहाँ देखकर घबराती है। काली के पिता पहले तो उसे भेजने से इन्कार करते हैं किन्तु बाद में उसे मजदूरी के लिए भेजने का तैयार हो जाते हैं। काली खड़ी हुई तो रमतूजी मोके को फायदा उठाकर काली को काम में मदद करने के बहाने उसका स्पर्श करता हैं। काली उन्हें दूर रहने का आग्रह करती है, तब वह कहता है–

> **"कैसी बात करती है पागल ? ऐसे छूने से कोई अछूत हो जाता है?"[8]**

तब काली मन में सोचती है कि– "सबके सामने छुआ–छूत और अकेले में सब चल जाता है, ऐसा कैसे ?"(वही) वह समझ नहीं पाती कि यह रमतूजी मुखिया के सामने मुझे छू लेने से नाराजगी व्यक्त कर रहे थे। आज वही मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझे स्पर्श करना चाहते हैं। उसके प्रश्नों का कोई सही उत्तर उसे नहीं मिल पाता। काली अपने काम में व्यस्त हो जाती है, लेकिन उसका कपडा उसके घुटने पर चढ़ जाता है! रमतुजी उसके पैर में लक्षण देखते है और कहते हैं–

> **"लक्षण तो बहुत शुभ होता है लड़की...... तु तो बहुत भाग्यशाली है।"[9]**

काली की खुशी का ठीकाना नहीं रहता। रमतुजी उसके लक्षण को छूता है, तो काली शरमा जाती है और जल्दी से पैर खींच लेती है। उस समय रमतुजी दूसरी ही तंद्रा में था। काली काँपने लगी और घबराहट में गट्ठर उठाकर बोरींग के कमरे में प्रवेश करती है। तब रमतुजी उसके पीछे आकर कमरे का दरवाजे के बीच खड़ा हो जाता है। आज रमतुजी का चेहेरा काली को भयानक, डरावना लग रहा था। वह सोचती है कि उछलकर कमरे के बाहर निकल जाऊँ, लेकिन काली ने जैसे ही पैर बढ़ाए कि रमतुजी की गिरफ्त में छटपटाने लगी। घबराकर वह कहने लगी कि–

> **"मैं कहती हूँ मूझे छोड़ दो, मुझे आप मत छुओ रमतुजी......"[10]**
> **तब रमतुजी कहता है–"मुझे भी देखना है कि किस तरह अस्पृश्य हो जाते हैं?"[11]**

रमतुडा के चंगुल से बचने का हर प्रयास काली करती है और बहुत प्रयास करने के बाद वह जोरदार झटका देकर वहाँ से भाग जाती है। वह

गिरती–पड़ती, रोती हुई भागने लगती है। आज काली का चित्त मूढ बन गया था। परंतु गाँव के घरों को जब देखती है तो, उसे तसल्ली हो जाती है कि अब वह बच गई है। आज जब उसे अपना लक्षण पैर में दिखता है, तो वही उसे तेजस्वी लगता है। क्योंकि वह वास्तव में भाग्यशाली है। आज उसने अपने आपको एक शैतान की हवस का शिकार होने से बचाया। अपनी रक्षा स्वयं की। वह प्रसन्न थी। जो स्त्री अपनी रक्षा स्वयं कर सकती है, वह भाग्यशाली नहीं तो और क्या है ?

एक वर्ष के बाद फिर रमतुजी काली के घर आता है। पूरे मुहल्ले में सन्नाटा था। आकर वह काली से कहता है–

> **"आज तो वह लक्षण देखने आया हूँ, काली......"**[12]

काली के शरीर में कपकपी होने लगती है। क्रोध में वह भड़क उठती है। उसकी आँखों से अंगारे निकलने लगते हैं और वह चीखती है –

> **"वहीं खड़े रहो, रमतुजी एक कदम भी आगे बढ़ाया तो......"**[13]

घबराहट में वह हसिया अपने हाथ में लेकर आत्मरक्षा के लिए वह तैयार हो जाती है। उसके पैर में कोई अनोखा संचार होता है। हँसिये को हवा में ऊँचा करके साक्षात् रणचंड़ी बन जाती है। जिसके गले में काली के लक्षण जैसे कितने ही खुन में लतपथ सिर हारमाला बनकर लटकते रहते हैं। अतः काली, माता कालीका बनकर अपनी शक्ति का परिचय देती है। वह रमतुजी से डरकर आत्मसमर्पण नहीं करती, या उसकी गंदे इरादों को कामयाब नहीं होने देती। वह तो अबला नहीं सबला नारी होने का परिचय देकर आत्मरक्षा करती है।

3. थड़ी (दहलीज)–डॉ. मोहन परमार

रेवी तुरीवास में रहनेवाली एक विवाहित स्त्री है। उसके पति का नाम चमन और पुत्र का नाम धुला है। उसका पति घर से बाहर मजदूरी करने दूसरे शहर जाता है। जाते समय वह रेवी से इशारे में कहता है कि–

> **"मैं तो महीने माह के बाद आऊँगा, परंतु तू अपने आपको सँभालना। कोई ऊँगली न उठा सके...."**[14]

परंतु पिछले दिन मानसिंह ठाकुर आकर खेत में आने के लिए कहकर गया था। इससे रेवी मनोसंघर्ष का अनुभव करती है। पति के चले जाने के बाद तीन दिनों तक वह घर में ही रहती है। चौथे दिन मानसिंह ठाकुर उसके घर आ पहुँचता है। मानसिंह उसके घर के आँगन तक आ जाता है, उसे देखकर रेवी काँपने लगती है। उसके मुहल्ले में उसके विषय में तरह– तरह की बातें होने लगी थी। उसकी इच्छा नहीं थी कि वह घर से बाहर निकले किंतु उसे निकलना ही पड़ा। वह इतना घबरा जाती है कि उसके पैरों के नीचे पसीने की धारा बहने लगती है। उसके जेठ–जेठानी घर पर नहीं थे, जिससे वह एक संतोष भी अनुभव करती है। रेवी के जेठ–जेठानी नहीं चाहते कि मानसिंह के कारण समाज में उन्हें नीचा देखना पड़े। मानसिंह शराब के नशे में, बदबु मार रहा था। उसकी आँखों में वासना और क्रोध भरा था। वह उससे जानना चाह रहा था कि रेवी खेत में क्यों नहीं आई ? रेवी उसके व्यक्तित्व से परिचित थी, यदि वह

कुछ कहती है तो मानसिंह बिना शर्म किए उसका हाथ पकड़ कर ले जाएगा। रेवी उससे मिन्नतें करती है कि वह चला जाए परंतु मानसिंह उसे बुलाता है। रेवी को उस समय इतना क्रोध आता है कि वह उसी वक्त मानसिंह को धक्के देकर निकाल दे, किन्तु कुछ सोचकर वह अपने क्रोध को काबू में करती है। अपने पुत्र के सिर पर हाथ रख कर वह कसम खाती है कि कल वह खेत में जरुर आएगी। मानसिंह वचन पाकर वहाँ चला जाता है।

रेवी ह्रदय से टूट जाती है। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगती है। अपने पति का वियोग उसे असहनीय लगता है। हरिजनवास की स्त्रियों में काना–फुसी होने लगती है। अपनी माँ को रोते देखकर धुला पूछता है कि तुम क्यों रो रही हो ? रेवी उससे कुछ नहीं कहती तब वह कहता है–

> **"माँ मैं बड़ा होकर राजपाट करूँगा। मेरे पिता राजा बनकर किसी को मारते तो नहीं...... ।"** 15

आज रेवी को उसका बेटा समझदार लग रहा था। वह सोचती है की बाल बुद्धि के कारण आज भले ही वह अपनी माँ की स्थिति को नहीं समझ पा रहा है, किंतु जब वह बड़ा हो जाएगा तो क्या माँ की दयनीयता को सहन कर सकेगा ? रेवी अपने मन से दृढ़ निर्णय कर लेती है। दूसरे दिन पुत्र को स्कूल भेजती है और हसिया खोजने लगती है। किंतु हसिया कहीं मिलता नहीं है। बहुत खोजने के बाद जब मिलता है, तो वह घर से बाहर निकलती है, सामने उसके जेठ मिल जाते हैं और कहते हैं–

> **"भा, अब तो हद हो गई, कुछ मर्यादा में रहो!वणकर वास में मैं गया था, सभी मुझ पर टूट पड़े और कहने लगे कि अपने घर में तुम ध्यान क्यों नहीं देते। भगला! मानसिंह इस तरह सुबह–शाम आए वह अच्छा नहीं। बोलो, वणकरों को मैं क्या जवाब दूँ ? मेरी तो बोलती ही बंद हो गई। गूँगा बन गया हूँ। बिल्कुल गूंगामंतरत.....अपनादुःख किसके समक्ष जाकर कहूँ..... ।"** 16

रेवी के ह्रदय को चोट लगती है। उससे सहन नहीं होता। वह स्वयं इतनी गिरी हुई नहीं थी। शादी के बाद उसके जेठ–जेठानी उसे मान–सम्मान देते थे, परंतु उसके सौन्दर्य से उसकी जेठानी को ईर्ष्या भी होती थी। उसके जेठ ने चमन को मानसिंह की दोस्ती से दूर रखने का प्रयास भी किया था। रेवी झोपडी में लौट आती है। आज वह नहीं जाएगी, यह सोचकर वह हसिया फेंक देती है।

आज रेवी को बचाने वाला कोई नहीं था। पति परदेश में था, पुत्र अभी छोटा था। उसकी जेठानी ने भी उसे चेतावनी दे दी है कि–

> **"अब वह दुष्ट इस घर के आँगन में पैर रखेगा तो उसकी खैर नहीं। तू भी यदि गई, तो मुहल्ले के बीच तेरे बाल पकड़कर न खींचे तो मेरा नाम तखी नहीं।"** 17

रेवी की स्थिति इतनी दयनीय हो जाती है कि उसे न तो घर के लोग समझ पाते हैं और न ही मानसिंह उस पर तरस खता है। यदि वह घर वालों की बात का मान करके न जाए तो मानसिंह उसके घर पर ही आ पहुँचेगा। आज तो

जेठ–जेठानी घर पर ही हैं और मुहल्ले में सभी को इस बात का पता चल जाएगा। इसलिए वह हसिया लेकर खेत में जाने के लिए तैयार हो जाती है। मानसिंह उसका इंतजार कर रहा था। रेवी को देखकर वह खुश हो जाता है। मानसिंह को देखकर आज रेवी सोचती है कि हसिये से उसे मार डाले, किंतु गूँगी बनकर कुँए के किनारे पर बैठ जाती है। मानसिंह उसके गले में हाथ डालकर उसे उचककर गद्दे पर डाल देता है। पति चमन को याद करके वह अपना हसिया सँभालकर रखती है, सोचती है कि आज तो मानसिंह का काम तमाम कर ही देगी। किन्तु दूसरे ही क्षण पुत्र धुला की याद आती है–"माँ, तुम फिर कब आओगी" मानसिंह को यदि वह मार डालती है, तो उसको पुत्र धुला का जीवन तहस–नहस हो जाएगा, इसलिए उसे अपना निर्णय निष्फल होता नज़र आता है।

दूसरी और मानसिंह को आज रेवी का व्यवहार समझ में नहीं आ रहा था। वह परेशान हो रहा था कि आज रेवी उसका साथ क्यों नहीं दे रही है ? वह कहता है, कि ठकुराईन के आने का समय हो गया है, सारा खेल बिगड़ जाएगा। तब रेवी कहती है–

> **''मैं ठकुराइन का ही इंतजार कर रही हूँ ''।**
> **''क्यों ?''**
> **''मुझे भी तुम्हारा घर बसाना है, इसलिए''।**
> **''मेरा ? मानसिंह काँप जाता है।''**
> **''हाँ, तुम्हारा! ऐसे डरते–डरते रहें उससे तो अच्छा है कि हमेशा 'साथ रहें...... फिर तुम और मैं..किसी का डर ही नहीं !''**
> **''यह तो नहीं हो सकता''**
> **''क्यों ?''**
> **''तू रही हरिजन और हम रहे ठाकुर ! छीं छीं छीं मेरे घर में तू शोभा नहीं देगी.....।''**[18]

रेवी भड़क जाती है। वह मानसिंह से कहती है कि तुम पिछले पाँच वर्षों से मेरा शारीरिक शोषण कर रहे हो। आज जब मैंने घर बसाने की बात कही तो मैं हरिजन बन गई। रेवी रणचंडी बन जाती है। उसके दृढ़ संकल्प से मानसिंह कमजोर पड़ जाता है। अपनी फजीहत के डर से वह रेवी को वचन देता है कि अब वह उसे कभी परेशान नहीं करेगा। तब रेवी खिलखिलाकर हँस पड़ती है। मुक्त पक्षी की तरह कोलाहल करने लगती है।

'थडी' कहानी में रेवी की मुक्ति आधुनिक नारी का स्वरुप धारण करती है। कहानी में रेवी का आक्रोश भरा प्रतिकार बुद्धिपूर्वक होने से पाठक उसके होंसले की तारीफ करे बिना नहीं रह पाते। इस संदर्भ में डॉ. शरीफा बीजलीवाला का कथन उचित है कि–

> **''ठाकुर का जूता उसी के गले में पहनाने वाली रेवी का विद्रोह आकस्मिक और अकल्पनीय रुप में व्यक्त हुआ है।''**[19]

कहानी में रेवी के पात्र के समक्ष ठाकुर मानसिंह का पात्र फीका लगता है। 'थडी' कहानी में उत्तर गुजरात की बोली का सफलता के साथ प्रयोग किया गया

है। ग्रामीण परिवेश में दलित नारी की दुविधा युक्त स्थिति एवं समस्या से मुक्ति पाने की चतुराई पूर्ण युक्ति को बखूबी चित्रित किया गया है।

4. सोमली – हरिपार

सोमली दलित वर्ग की महिला है, जो शराब बेचने का कार्य करती है। सोमली ने गाँव के मुखीया की हत्या की है, जिसकी बजह से उसे कोर्ट में गवाही के लिए बुलाया जाता है। सोमली को गीता पर हाथ रखने के लिए कहा जाता है, तब वह कहती है–

> **"इस पर हाथ रखने की बजाय मैं झरमरी माता की कसम खा लूँ तो क्या नहीं चेलगा ?"**[20]

तब उसे 'ना' कहा जाता है। सोमली कहती है कि–

> **"क्या, हाथ रखने वाले सभी सच ही कहते होंगे ?"**[21]

फिर वह गीता पर हाथ रखकर यह कहती है कि वो जो कुछ कहेगी सच कहेगी। वकील उससे प्रश्न करता है, कि–

> **"क्या तुम शराब बेचने का काम करती हो ?"**[22]

तब वह अपनी मनोव्यथा प्रकट करती है–

> **"गुजरात में शराब बंदी शुरु करके सरकार ने हम जैसे आदिवासियों पर तो उपकार ही किया है– छत के नलिए तो एक तरफ रहे, छाजन लाने की स्थिति न थी हम आदिवासियों के पास। किंतु आज शराब बंदी के प्रताप से ही घर के छत पर कवेलू लगाए हैं, कितने ही भाईयों ने। कोई गुजरात में शराब शुरु करने की बात करता है तो हम तुरंत ही शराब बनाने वाले और पुलिस की कचहरी, फौजदार की कचहरी ले जाकर मोरचा निकाल कर नारे लगाते है–शराब शुरु करोगे तो हम बरबाद हो जाएँगे। सरकार आज तक तो समझती आई है– क्या समझती है, यह तो वही जाने ! आज गुजरात में गाँव–गाँव में शराब बनाई जाती है और पी भी जाती है और शहर कहाँ बाकी रहा है ? और उसमें यदि मैं बनाती हूँ, बेचती हूँ तो इसमें कौन–सी नई बात है ? और उसमें भी पचास–सौ रुपये का गुड लाकर मिलाती नहीं, मैं तो पंद्रह रुपये कमाती हूँ। उसमें भी जाने कितने लफड़े ? कितनी बार पुलिस को मुफ्त में पिलानी पड़ती है और कितनी बार पैर भी छूने पड़ते हैं......।"**[23]

वकील उसके इस कार्य को गैरकानूनी धंधा कहता है। वह जानना चाहता है कि कौन–कौन शराब पीने आता है ? तब सोमली बताती है कि उसके पास उच्च वर्ग के बड़े–बडे लोग शराब पीने आते हैं किंतु वह उनका नाम नहीं ले सकती। तुम भी चोरी–चोरी पीते होगे। ऐसी बात कहकर वह अपनी निडरता, साहस का परिचय देती है।

सोमली ने जो दुनिया देखी है, उसमें हर तरह के छोटे–बड़े लोग शराब पीते हैं। बाहरी दुनिया में भले ही उच्च वर्ग और निम्न वर्ग का भेद ही, किन्तु सोमली के समक्ष सभी समान हो जाते हैं। शराब उनके सभी भेद को खत्म कर देती है।

वकील सोमली पर यह आरोप लगाता है कि उसने मकन कानजी के साथ मिलकर गॉव के मुखीया की हत्या की है। सोमली स्वीकार करती है कि उसने की हत्या की है, किन्तु उसमें किसी का हाथ नहीं है। तब वह वास्तविकता कहते हुए अपनी वेदना व्यक्त करती है कि–

> **"सब कहते हैं कि भारत आज़ाद हुआ है। हम सभी आज़ाद हुए हैं। पर सच कहूँ साहब, आज़ादी है सिर्फ उच्च वर्ग के ही लिए : हमारे लिए नहीं। जिसे मिली होगी वही खुश होंगे। गाँव में हरिजन निवास और आदिवासियों के झोंपडे में वास्तविक आज़ादी क्या है वह देखी जा सकती है। हम लोगों को साहूकार कहते हैं कि तुम हरिजनों से भी ऊँचे हो, किन्तु ऐसा कहने के पीछे उनका स्वार्थ ही है। वे लोग ऐसा समझते हैं कि यदि भूल–चूक से ये हरिजनों से मिल गए तो हम किसे अपना गुलाम बनाएँगे। कारण कि हरिजन साहूकारों के पास हमारी तरह गुलामी का जीवन नहीं बीताते। हरिजनों के बच्चे पढ़कर शहर में नौकरी करते हैं, जबकि हमारे अस्पृश्य नायक जाति के बच्चों को यदि भूल–चूक से पढ़ने भेजते हैं तो साहूकार तुरंत ही कहते हैं कि पढ़कर क्या करना है आखिर। हमारे घर काम ही तो करना है ? इससे अच्छा अभी से ही गाय–भैंस चराने भेज दो पेट भरा होगा तो लड़का गाय–भैंस चराने में होशियार होगा।"**[24]

सोमली बताती है कि लड़के–लड़कियाँ सात–आठ वर्ष के होते हैं तभी से गाय–भैंस चराने का कार्य करते हैं और उनके पैसे से शादी करते हैं। उनके उतरे हुए वस्त्र पहनने को मिल जाते हैं। सरकार हरिजनों को सहायता देती है, वह तो उच्च वर्ग के लोग हमसे अँगूठा लगवाकर खा जाते हैं। सरकार हमारी होती तो यह सब हमारे पास न होता ?

सोमली का पति जब सात वर्ष का था तब से मुखिया के घर गाय–भेंस चराने का कार्य करता था। वंशानुगत रुप से वें गुलामी का कार्य कर रहे थे। सोमली का पति जब युवा हुआ तो मुखिया ने उसकी सास से कहा–

> **"पँचास रुपये ले जा और पुत्र का विवाह कर दे।"**[25]

सोमली का विवाह जब हुआ तो उसके बहुत से अरमान थे। किन्तु इस घर में आने पर सारे धूल में मिल गए।

मुखिया सोमली के पति को अपने खेत की रखवाली करने के लिए बुलाता और वहाँ उसे इतनी शराब पिलाता ताकि उसे होश ही न रहे। नई नवेली दुल्हन सोमली अपनी झोपड़ी में जब मुखिया को देखती है तो घबरा जाती है। मुखिया सोमली का बलात्कार करता है। सोमली जब रोती है, विरोध करती है, तो उसे वह बताता है कि यह कोई नई बात नहीं है, यह तो पीढ़ी–दर–पीढ़ी वर्षों से चला आ रहा है। मुखिया से सोमली को एक पुत्र भी होता है। सोमली सोचती है कि मुखिया अपने पुत्र की पढ़ाई का खर्चा देगा। खर्चा देना तो दूर, वह तो गली के कुत्ते की तरह फर्ज भूल गया। सोमली

के पति को जब यह पता चला तो वह सोमली को खूब पीटता है और मखिया ने भी उसे एक तमाचा मारता है। उसी रात मुखिया सोमली के पति की हत्या कर देता है।

सोमली के बेटे की पढ़ाई छुडवाकर उसे गाय–भेंस चराने का काम सौंप दिया जाता है। पुत्र बड़ा हुआ तो सोमली ने शराब के धंधे से पैसे जुटाकर उसकी शादी कर दी। सोमली नहीं चाहती थी कि उसकी तरह उसकी बहू का जीवन बिगड़े। इसलिए उसने अपने बेटे को खेत में सोने जाने से रोका। बहू को पहले से ही समझा दिया। एक दिन दोपहर के समय एकांत का लाभ उठाकर मुखिया घर में आता है और बहू से भी जबरदस्ती करने लगता है। बहू जोर से चीखती है। सोमली दौड़ते हुए आती है, तब तक बहू के कपड़े मुखिया फाड़ चुका होता है। सोमली अपने आपको रोक नहीं पाती और हँसिया लेकर उस पर वार कर देती है। मुखिया की मौत हो जाती है। सोमली यह स्वीकार करती है, कि उसने हत्या की है और इसके लिए उसे चाहे जो भी सज़ा मिले वह उसे सहर्ष स्वीकार करने को तैयार है। अंत में बहू की गवाही के बाद सोमली को सजा से मुक्त कर दिया जाता है।

इस प्रकार प्रस्तुत कहानी में गुजरात के एक ऐसे आदिवासी परिवेश को चित्रित किया गया है जहाँ सवर्णों द्वारा दलितों का परंपरागत शोषण, सरकार की योजनाओं के बाद भी दलितों की दयनीय स्थिति, गरीबी, भुखमरी, शोषण के प्रति दलितों का विद्रोह देखा जा सकता हैं। आदिवासी बोली का प्रयोग परिवेश एवं पात्रोचित है।

5. 'सपाटु पहेरवानु मन' (जूती पहनने की इच्छा)–प्रवीण गढ़वी

'सपाटु (जूती) पहेरवानु का मन' प्रवीण गढ़वी की इस कहानी में दो मुख्य पात्र हैं। सुथार जाति का युवक प्रहलाद और दलित वर्ग की युवती गगी। प्रहलाद एक हिसाब–किताब वाला व्यक्ति है, आवेगी है और साथ ही जातीयवृत्ति से पीड़ित भी है। गगी एक बिल्कुल निर्दोष झरने जैसी भोली–भाली युवती है। उसका जूती पहनने का एक सपना है। प्रहलाद इस स्वप्न को भाँप जाता है और गगी के भोलेपन का दुरउपयोग करता है। गगी पंद्रह दिनों से गाँधी सेठ के बंगले की मजदूरी करने जाती है। वह समय आकाल का था, इसलिए कम पैसे देने पर भी मजदूर मिल जाते थे। गाँधी सेठ ने गरीबों का शोषण करके तीन मंजिला इमारत बनाने का काम शुरु कर दिया था। गगी वहाँ पर घडे में पानी भरकर पीपे में डालती है, मिट्टी, सिमेन्ट के तगारे भरना, ईटें ऊपर चढ़ाना जैसे कार्य करती है, इन सारे कार्यो पर प्रहलाद आँखें गढ़ाए उसे निहारता रहता है। वह गगी को पूनम के मेले में चलने का लालच देता है और कहता है कि मै तुम्हें झुले में बिठाऊँगा। गगी डरती है क्योंकि वह जानती है कि वह एक अवर्ण की कन्या है, किन्तु प्रहलाद ने मेले के जो सपने उसे दिखाए हैं वह दिन रात उसकी आँखों के सामने, कानों में बजते हैं। प्रहलाद अकेला रहता है, उसकी पत्नी मर चुकी है। वह सुथारों की बस्ती में रहता है। एक बार गगी को वह अपने घर पर बुलाता है। भोली–भाली गगी छुपते–छुपाते उसके घर तक पहुँती है। प्रहलाद उसके अकेलेपन का फायदा उठाना चाहता है। गगी उससे कहती है कि तुम मुझसे विवाह तो नहीं करोगे ? प्रहलाद कहता है कि वह उसे मुंबई ले जाएगा वहाँ पर जाति की किसी को नहीं पडी है, कोई किसी को नहीं पहचानता है। प्रहलाद पूनम के मेले में उसकी मनपसंद वस्तु सपाटु– दिलाने का वादा करके उसके शरीर की भूख पूरी करना चाहता है। इसी बीच गगी को अपनी बस्ती की उन लड़कियों की याद आती है, जिन्हें प्रहलाद ने इसी तरह बहला–फुसलाकर ठग लिया था। अचानक ही उसे अपने ठगे जाने का अहसास होता है

और वह प्रहलाद के शिकंजे से अपने आपको छुड़ाकर तेज गति से बाहर निकल जाती है। उसे अपनी गलती का ऐहसास होता है। वह अपनी माँ के पास जाकर फूट–फूट कर रोने लगती है। इस कहानी में सवर्ण समाज के पुरुष का अवर्ण स्त्रियों के जातीय शोषण को कहानीकार ने प्रस्तुत किया है। जिसमें गगी जैसी अनपढ़ भोली–भाली युवती को प्रहलाद जैसा व्यक्ति लालच देकर अपने गलत इरादे पूरे करता है और फिर से नई युवती को फँसाने का चक्रव्यूह रचता है। गगी जैसी युवतियाँ समाज के डर से उनका विरोध नहीं कर पाती और यदि करें भी तो उनकी सुनने वाला कौन है ? इस प्रकार प्रस्तुत कहानी में दलित युवती के जातीय शोषण, आर्थिक विपन्नता, विवशता, अकाल में दलितों की दयनीय स्थिति को चित्रित किया गया है।

6. 'खोपा का साँप' अरविन्द वेगड़ा

कहानी में वर्णभेद–वर्गभेद की नींव पर खड़ी हुई दूषित समाज रचना की आग में जलते अछूतजनों की दारुण व्यथा को प्रस्तुत किया गया है। एक ओर रजवाड़ी ख्यालों में खोए हुए स्वयं को अछूतों से उच्च वर्ग का समझने वाला पात्र जीलुभा है। दूसरी ओर पिता के कर्ज़ लिए हुए रुपयों की जगह पर उनकी गुलामी करने वाले लाचार परिस्थिति में जी रहे वीरजी और रुडी हैं। ऐसे देखे तो यह विषमता, समस्या कोई नहीं है, बल्कि सदियों पुरानी है, किन्तु कहानीकार की अपूर्व कलादृष्टि से यह हृदय को छू लेती है।

रात दिन बेगार का कार्य करने वाला युवा वीरजी अपनी पत्नी रुड़ी से दो घड़ी प्रेम करने के अधिकार को भी उससे छीन लिया जाता है। वीरजी एक स्वाभिमानी, परिश्रमी आज्ञापालन करने वाला व्यक्ति है, इसीलिए वह जीलुभा के सारे अत्याचार को सहन करता है।

रुड़ी की मनः स्थिति तो पति से भी दयनीय है। बहुत सारे अरमान लेकर वह पति के घर आई थी, किन्तु संयोग ऐसे हुए कि वह गुलाम बन जाती है। रुड़ी के अप्रतिम सौन्दर्य–दर्शन से जीलुभा के हृदय में वासना का अंकुर जन्म ले लेता है, जो आगे चलकर भयानक नाग का स्वरुप धारण करता है। रुड़ी निर्दोष है, अपने पति के प्रति उसे अनहद प्रेम है। इसलिए वह जीलुभा के बहकावे में आ जाए ऐसी नहीं है। खेत में काम करते समय रोज जीलुभा उसके साथ असभ्य व्यवहार करता है। रुड़ी से यह सहन नहीं होता, वह गाली देना चाहती है किंतु उसका मुँह सिल जाता है। अपने अंतर में प्रगटे हुए आक्रोश का ज्वालामुखी फट जाता है। उसकी स्थिति ऐसी हो जाती है कि **'न कहा जाए न सहा जाए'**। रुडी यदि वीरजी को यह बातें बता देती तो अपनी इज्जत के लिए जीलुभा वीरजी को मौत के घाट उतार सकता है। लेखक ने रुडी के मन में चल रही उथल–पुथल और अंतरद्वन्द्व को पूरी कलासूझ से प्रस्तुत किया है।

वीरजी की चिंता में हाँफते–हाँफते घर की तरफ जाने को निकली हुई रुडी पर दुष्ट जीलुभा हेवानियत भरा हमला करता है और उस पर बलात्कार करता है। कहानी के अंत में और वीरजी के अंतिम समय में उसके सिर पर हाथ घुमाते हुए उसकी माँ कहती है कि–

"मेरे बेटे को क्या छू गया है ?"[26]

उसी समय घर में प्रवेश करती रुड़ी कहती है......

''साप..... रखोपा का''[27]

यह परिस्थिति बहुत नाट्यात्मक लगती है। रुड़ी की यह नाट्योक्ति में व्यंजना है। कहने की आवश्यकता नहीं कि वीरजी के शरीर को काटे हुए भयानक नाग ने रुड़ी की सुंदर काया को भी काट लिया था।

प्रस्तुत कहानी में ग्रामीण परिवेश में दलितों पर सवर्णों द्वारा परंपरागत रुप से किया जाने वाला आर्थिक शोषण, बेगार, दलित स्त्रियों के जातीय शोषण, अत्याचार आदि को देखा जा सकता है।

7. 'दाझवुंते' (जलनवह)– धरमाभाई श्रीमाली

बबली दलित वर्ग की सुंदर युवती है। उसके पिता के कहने पर वह लखुभा के पुत्र परबत की शादी में पेट्रेमेक्स उठाने के लिए जाती है। वरराजा परबत बबली को तीरछी नज़रों से देखता है। तब बबली का मन विचलित हो जाता है। वह सोचती है कि यह शादी करने जा रहा है, फिर भी मुझे गंदी निगाहों से देख रहा है। वह स्वयं को दोष देती है, कि वह क्यों आई। इसी बीच बबली के पेट में दर्द होने लगता है। अपना डुपट्टा सीधा करना चाहती है और वह जल जाती है। जलन होने के बावजूद उसे पेट्रोमेक्ष उठाकर चलना पड़ता है। अपने हृदय में और शरीर पर होने वाली जलन को वह दबा देती है।

परबत घोड़े पर बैठकर बबली को अपनी जूती से छूने का प्रयास करता है, किन्तु बबली जल्दी से खिसक जाती है। बबली को पुरानी बातें याद आती हैं। परबत बबली को कहता था कि तू जब चाहे मेरे खेत में धूम–फिर सकती है। पूरे गाँव में तू ही मूझे सबसे अच्छी लगती है। इस तरह वह बबली को फुसलाता है। बबली उससे दूर भाग जाती है तो वह उसका पीछा करता है।

बबली फिर अपने चेतना में लौट आती है। यह वही परबत है, जो चरित्र की दृष्टि से हीन है। ऐसे परबत के प्रसन्न चेहरे और तने हुए शरीर को देखकर बबली का हृदय जलने लगता है। मन दुःखी होने के बावजूद उसे पेट्रोमेक्स लेकर चलना पड़ता है। बबली की स्थिति और बिगड़ती है, उसे चक्कर आने लगते हैं। पैर काँपने लगते हैं और उबकाई आने लगती है।

कहानीकार ने प्रस्तुत कहानी में ग्रामीण परिवेश में सवर्ण युवक द्वारा दलित युवती के जातीय शोषण, गरीबी आदि को फ्लेश बेक पद्धति के माध्यम से प्रस्तुत किया है। कहानी में बबली अपने पर होने वाले शोषण को चुपचाप सहन करती है, शोषण के प्रति उसका विद्रोह उसके भीतर ही चलकर खत्म हो जाता है। यहाँ लेखक ने दलित युवती पर हुए जातीय शोषण मात्र को चित्रित किया है, इस अत्याचार के समक्ष दलितों की कोई प्रतिकिया को चित्रित नहीं किया गया है। कहानी पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि दलित वर्ग शोषण सहने के आदी हो गये हैं और सवर्ण शोषण करने के। बबली के मन में चल रहे अंतरद्वन्द्व को यहाँ लेखक ने बखूबी चित्रित किया है।

8. 'भींस'– मौलिक बोरीजा

मौलिक बोरीजा की **'भींस'** कहानी में मगनलाल दलित समु का जातीय शोषण करता है। जब समु गर्भवती बनती है, तो मगनलाल उसे एबोर्शन कराने का आदेश देता है। चार महीने के गर्भ को समु खत्म नहीं करना चाहती। उसका मातृत्व जाग उठता है, इसलिए वह मगनलाल की इच्छा के विरुद्ध उस बालक को जन्म देना चाहती है। समु जिस दलित समाज में रहती है, वह तो केवल स्त्रियों का ही दोष देखता है। भूल मगनलाल की थी, फिर भी उसे कोई कुछ न कहकर समु के परिवार को समाज से बाहर कर दिया जाता है।

समु का विवाह कालु से हुआ था। समु को उसकी जेठानी से कम गहने मिलते हैं, इसलिए उसका पति आए–दिन उस पर अत्याचार करता है। उसे मारता–पीटता है। कहानी में इसका वर्णन इस प्रकार है–

> **"कालू, घर के लोगों के साथ मिलकर, समु को परेशन करने के लिए नए–नए बहाने बनाकर उसे जानवरों की तरह पीटता था। समु के लिए यह अमानुषिक अत्याचार असहनीय था इसलिए उसने तलाक ले लिया।"**[28]

समु अपने पति के द्वारा शोषण का शिकार बनती है। समु के माता–पिता उसे पुनः विवाह करने लिए विवश करते हैं। मगनभाई आर्थिक मदद करके उसका शारीरिक शोषण करता है। मगनभाई के बच्चे को गर्भ में सँभाले समु पहले तो सबका विरोध करते हुए एक माँ का फर्ज अदा करना चाहती है, किंतु बाद में सोचती है–

> **"बालक कलंकित कहलाएगा। वह सारी जिंदगी मुझे कोसेगा। मगनभाई ने तो समस्या खड़ी की और उसका परिणाम हमें भुगतना पड़ेगा ? वाह दुनिया तेरा न्याय! अपनी गरीबी पर, नीची जाति में जन्म लेने पर, असहायता पर समु ने फटकार बरसाई, उसने जन्म देने वाले को दोष दिया, एक सीमा तक वह रो ली और अंत में आँसु भी बहकर सूख गए।"**[29]

उसका बालक कलंकित हो, यह बात किसी माँ को अच्छी नहीं लगेगी। यदि वह सवर्ण की स्त्री होती तो उसकी ऐसी दुर्गति न होती, यह सोचकर वह अंत में एबोर्शन करवा देती है। समाज के डर से समु विवश होकर यह काम करती है। इस प्रकार समु के समक्ष एक ओर परिवार की आर्थिक कमजोरी, दूसरी ओर जेठानी से कम गहने लाने से पति द्वारा शारीरिक शोषण करना, माता–पिता द्वारा पूर्नविवाह के लिए विवश करना जैसी पारिवारिक समस्या थी। मगनभाई द्वारा समु की आर्थिक कमजोरी का लाभ उठाकर उसका शारीरिक शोषण करना जातिगत एवं लिंगगत समस्या थी समु अनेक कष्ट सहती है, उसके जीवन में यह दुःख उसके माता–पिता, पति, परिवार, समाज और सवर्ण पुरुष मगनभाई द्वारा उसे मिलता है। यहाँ समु का दोहरा शोषण चित्रित किया गया है।

9.'दरुपदी' (द्रोपदी)–प्रवीण गढ़वी

प्रस्तुत कहानी की नायिका **दरुपदी** को महाभारत के पात्र द्रौपदी के समान बताया गया है, परंतु दोनों में काल भिन्नता देखी जा सकती है। दौपदी के चीर हरण के समय श्री कृष्ण स्वयं आकर उसकी रक्षा करते हैं, किन्तु दरुपदी को न तो किसी इंसान की सहायता मिलती है, न ही भगवान की ही। दरुपदी और उसका पति अरजण(अर्जुन) नरसी पटेल के खेत में मजदूरी करते हैं। परंपरागत रुप से वे और उनका परिवार नरसी पटेल के खेत में मजदूरी करते आए हैं। मजदूरी के बदले में उन्हें पाँच सौ ग्राम अनाज मिलता है। एक वर्ष में आठ महीने में दोपहर का भोजन वहीं मिलता है।

दरुपदी के गाँव में प्रत्येक जाति के लोग शराब पीते हैं। अरजण भी शराब पीता है। पहले पच्चीस पैसे में पूरा सामान आ जाता था, किन्तु अब तो चार बीड़ी भी नहीं मिलती। अरजण अपनी आवक से ज्यादा शराब पीता था। दिनभर मजदूरी करता और इतनी शराब पीता कि उसे होश ही नहीं रहता। इसी वजह से उसे टी.बी. का रोग हो जाता है।

नरसी पटेल का भरा–पूरा परिवार है। वह अधैड़ उम्र का व्यक्ति है। उसकी पत्नी मर चुकी है। वह दादा भी बन चुका था, इसलिए दूसरे विवाह करने की ईच्छा के बावजूद वह अकेला ही था। बेटे–बहू के साथ न रहकर वह अकेला ही रहता था। दरुपदी को संतान की कमी और नरसी पटेल को शरीर की भूख। इसलिए एक दिन नरसी पटेल अस्पृश्यता को भूलकर दरुपदी से अपनी शारीरिक भूख मिटाता है। नरसी पटेल अरजण को दरुपदी का सहारा कहता है क्योंकि यदि दरुपदी गर्भवती हुई तो उस बच्चे का बाप तो अरजण ही कहलाएगा। दरुपदी भी इस बात को जानती थी कि नरसी पटेल उसे अपनाएगा नहीं, क्योंकि वह दलित है, इसलिए गर्भ के बच्चे का बाप तो अरजण ही कहलाएगा। दरुपदी माँ बनने के लिए उत्सुक थी, किन्तु संतान होने से पहले ही अरजण की मृत्यु हो जाती है।

अरजण की मृत्यु के पंद्रह दिन बाद दरुपदी नरसी पटेल के खेत में काम करने जाती है। गाँव में सरपंच का चुनाव आता है, जिसमें नरसी पटेल और उसके सामने जीवुभा गरासिया खड़ा होता है।

गाँव में पहले से ही पटेल और गरसिया जाति मे द्वेष था। दोनों की दुश्मनी का भोग गरीब दलित प्रजा बनती थी। दरुपदी भी इसी राजनीति का भोग बनती है। जीवुभा को जब यह पता चलता है कि नरसी और दरुपदी के बीच प्रेम संबंध है, तो वह एक षडयंत्र रचता है, जिसके अनुसार वह नरसी को चुनाव में हरा सकता है। दरुपदी जब नरसी पटेल के खेत से घर जा रही थी, तब जीवुभा के आदमी उसे रोककर गालियाँ देते हैं। धीरे–धीरे सारा गाँव इकट्ठा हो जाता है। वे लोग दरुपदी को पीटते है, उसके बाद उसका चीरहरण करते हैं। ये दृश्य देखकर गाँव की औरतें, बच्चे, बूढे सभी हँसते हैं। नग्न अवस्था में दरुपदी को बाज़ार में घुमाया जाता है। दरुपदी इस राजनीति के षड़यंत्र को समझ जाती है और कहती है–

> **"पटेल की नाक काटने के लिए मुझे नग्न किया गया। मैं दरुपदी, कालमुखी गीध की तरह सभी चोंच मार रहे थे, मेरी नग्न देह पर। नीची जाति की इज्ज़त ही क्या है ?"**[30]

ऐसा नहीं है कि दरुपदी ने ही अपना चरित्र खोया था। उस गाँव की अधिकतर स्त्रियों के अनैतिक संबंध थे। सवर्ण की स्त्रियों का अनैतिक संबंध किसी को दिखाई नहीं देता, किन्तु दरुपदी के संबंध को लेकर उसे सरे--आम बेइज्ज़त किया गया। दरुपदी को इस बात का दुःख है कि उसके नग्न शरीर को ढाँकने के लिए किसी ने एक चीथड़ा भी नहीं दिया। जब भगवान को उस पर दया नहीं आई तो वह पुलिस से क्या फरियाद करती। नरसी चुनाव हार जाता है और दरुपदी अपनी झोंपड़ी में अकेली रहती है।

प्रस्तुत कहानी में मिथ का प्रयोग करके कहानीकार ने महाभारत काल एवं आधुनिक काल में नारी के चीरहरण की समानता को चित्रित किया है। स्त्री को वस्तु की तरह इस्तेमाल सदियों पहले भी किया जाता था, आज भी स्त्री पुरुषों के लिये एक वस्तु है। उसमें भी दलित स्त्री तो ऐसी वस्तु है जिस पर सवर्ण पुरुष अपना अनैतिक अधिकार मानता है। दरुपदी को सरेआम नग्न किया जाना स्त्री पर अत्याचार की चरमसीमा कहा जा सकता है।

10. 'छगना को न समझ में आते सवाल'–जोसेफ मेकवान

प्रस्तुत काहनी '**छगना को न समझ में आते सवाल**' में छगन और कुमली गरीब दलित दंपती हैं। वर्षाऋतु में तेज बरसात में उनकी झोंपड़ी गिर जाती है। दोनों अपनी झोंपड़ी और गाँव को छोड़कर दूसरे गाँव की ओर प्रस्थान करते हैं। सेठ छबीलदास के यहाँ मजदूरी करके छगना और कुमली अपना जीवन जैसे–तैसे व्यतीत करते हैं। सेठ छबीलदास के बंगले को तैयार करने में छगना और कुमली कठोर परिश्रम करते हैं, उस बंगले क उद्‌घाटन के समय मुख्यमंत्री ने कहा कि–

> **"स्वर्गस्थ कल्याणजी बापुजी दीन–हीन आदिवासियों के मसीहा थे। एक झोंपड़ी बनाकर वे उनके बीच ही रहते थे और देखो बापु का खून ! छबिलदास ने एक आदिवासी लड़के को तीसरे पुत्र के रुप में गोद लिया है।"**[31]

सुनने में यह भाषण अच्छा लगता है, किन्तु वास्तविकता यह रहती है कि जिस छगना को सेठ गोद लेता है उसी की पत्नी कुमली का जातीय शोषण भी करता है। लोगों के समक्ष दलितों का मसीहा बनने वाला सेठ वास्तव में दलितों का सहायक या उद्धार नहीं करता, बल्कि उनका शोषण करता है। छगना का आर्थिक शोषण सेठ ही करता है। गरीब दलितों का हित रक्षक यहाँ किस हद तक हीनवृत्ति जैसा आचरण करता है, यह प्रस्तुत कहानी में देखा जा सकता है। सवर्णो के ऐसे हीन व्यवहार के कारण छगना के मन में हरपल अनेक प्रश्न उठते हैं, किन्तु उसका (जबाव) उत्तर उसे नहीं मिल पाता। यहाँ छगना को समझ में न आने वाले प्रश्नों का निराकरण हमारी सामाजिक व्यवस्था में प्राप्त होना मुश्किल है। कहानीकार ने सरकारी तंत्र में चल रहे भ्रष्ट संचालन पर भी प्रकाश डाला है। कहानी को ज़रुरत से ज्यादा लंबा खींचा गया है।

11. 'कडण'–मोहन परमार

मोहन परमार की कहानी **'कडण'** में सवर्ण जुल्मीकाका वनुभा की संपत्ति का हिसाब–किताब और खेतों की देखभाल पथुभा करता है। पथुभा भीरु स्वभाव का संवेदनशील व्यक्ति है। अपने भीरु स्वभाव के कारण वह वनुभा के समक्ष संकोच का अनुभव करता है। धीरे–धीरे वनुभा के बार–बार टोकने पर पथु में परिवर्तन आता है। पथु सोचता है कि वह वनुभा को दिखा दे कि वह किसी से कम नहीं है। पथु का यह परिवर्तन इस हद तक बढ़ जाता है पथु गलत कार्य भी करता है, तो वनुभा उसकी पीढ़ थपथपाता है। धीरे–धीरे पथुभा की नृसंशता बढ़ने लगती है। वनुभा दलित मजदूर मफला की हत्या करवाता है, जिसमें पथुभा भी शामिल होता है। शराब, सुंदरी जैसे शौख वनुभा के साथ–साथ पथु को भी लग जाते हैं। वनुभा के साथ–साथ उसके दिखाए मार्ग पर चलकर पथु क्षणिक सुख प्राप्त करके अपने जीवन को धन्य समझने लगता है। चार दिन बाद पथु जब मफला की पत्नी को देखता है तो उसे अपने किए पर पछतावा होता है, इसी के साथ धनजी पटेल पर अत्याचार करते वनुभा को देखकर पथु के अंदर की मानवता जाग जाती है। वह वनुभा को रोकना चाहता है, किन्तु वनुभा के कोधी चेहरे को देखकर उसकी हिम्मत नहीं होती कि उन्हें रोक सके। पथु के भीतर का शैतान उसके अच्छे गुणों पर जीत हासिल कर लेता है। वह सोचता है कि–

> **"किस तरह मनुष्य से पाशवी कृत्य हो जाता है ? क्या पता....।"**[32]

शैतानी वृत्ति के जाग जाने से पथु वनुभा की मदद से मफला की पत्नी को उठाकर अपने पास मँगवाता है, उस पर बलात्कार करके उसकी लाश को उसके देवर के साथ कुँए में डलवाकर आराम से सो जाता है। सुबह होते हुए पथु पूरे गाँव में खुद ही यह प्रचार करने लगता है कि–

> **"मफला हरिजन की पत्नी का उसके देवर राम के साथ गलत संबंध था। लोगों के डर से दोनों कुँए में कूद गए............. ।"**[33]

जिस अफवाह को पथुभा लोगों में फैलाना चाहता है वह हो जाता है। पथु को अपने किए पर बिल्कुल पछतावा नहीं होता है, बल्कि उसके चेहेरे पर किसी शैतान जैसी, हँसी देखाई देती है। दातुन को मुँह में चबाते हुए वह 'हाक थू' करते हुए थूक देता है। यहाँ पथु इंसान से शैतान बनते हुए दिखाया गया है। वनुभा का अनुचर पथु अपने स्वामी के पद्‌चिन्हों पर चलकर उसी की तरह बन जाता है। डॉ. जयेश भोगायता के मतानुसार इस कहानी में–

> **"मैं की थूकने की प्रकिया आत्मधृणा के भाव को व्यंजित करती है।"**[34]

कहानी के अंत में मुझे पथु की यह थूकने की चेष्टा उसकी निश्चिंता, पागलपन, हेवानियत की पराकाष्ठा कहना उचित लगता है। डॉ. शरीफा बिजलीवाला का विधान है कि–

> **"आत्मधृणा मनुष्य को होती है पथुभा जैसे हैवान को नहीं।"**[35]

पथु जैसे व्यक्ति पाप–पुण्य के भेद को अच्छी तरह जानते–समझते हैं, किन्तु जब वे इस सच्चाई को जान जाते हैं कि उनके पाप करने से भी कोई उन्हें दण्ड

नहीं दे सकता, तो वे निश्चिंत होकर पाप के मार्ग पर आगे बढ़ते जाते हैं। पथु भी वनुभा की तरह बेफिक्र होकर बलात्कार, हत्या जैसे कुकर्म करने में बिल्कुल हिचकिचाता नहीं है, बल्कि ऐसा करने से उसकी ताकत दुगुनी हो जाती है। पथु मफला की पत्नी के लिए तड़पता है, उसे पाने के लिए छटपटता है, उसका ऐसा व्यवहार उसे वासनाखोर बना देता है और जिस व्यक्ति पर वासना का भूत सवार हो जाए उसमें आत्मघृणा जैसे भाव के लिए कोई स्थान नहीं होता। दलितों को अपनी जूती समझने वाला पथु, मफला की पत्नी को भोगकर अपनी वासना तृप्ति करता है। और उसे मारकर अपने खिलाफ सबूत मिटा देता है।

12. 'एक छालियुं दाल नी खातर'–वसंतलाल परमार

प्रस्तुत कहानी वसंतलाल परमार द्वारा रचित गरीब दलित कंकुड़ी के जीवन की परिस्थिति जन्य करुणता को प्रस्तुत करने वाली है। कंकुड़ी एक विधवा स्त्री है, उसका पति छः वर्ष पहले मृत्यु को प्राप्त हो चुका है। पति की मृत्यु के बाद अधिकतर दलित स्त्रियाँ दूसरा विवाह कर लेती थी, किन्तु ऐसी छूट मिलने पर भी कंकुड़ी दूसरा विवाह नहीं करती और अपने एक मात्र पुत्र नाथु को हृदय से लगाए हुए छः वर्ष का समय बीता देती है। पूरा दलित समाज कंकुड़ी के इस साहस पर दाँतों तले ऊँगलियाँ दबा लेता है।

कंकुड़ी का पुत्र नाथु लगभग चार वर्षों से बिना दाल के सूखी रोटी खाकर बदले में जागीरदार की गायों को चराने का काम करता है। कंकुडी बेटे को पेटभर भोजन और उसमें भी दाल के न मिलने पर अत्यंत दुःखी रहती है। कंकुड़ी अपने पुत्र नाथु को एक कटोरी दाल देने के लिए सुमेरपुर के जागीरदार के रसौये जटाशंकर के साथ मजबूरन शारीरिक संबंध स्थापित करने को तैयार हो जाती है। जिससे वह गर्भवती बन जाती है। इस गर्भ की सूचना मिलते ही पूरे गाँव में कोहराम मच जाता है। कंकुड़ी एक सवर्ण व्यक्ति के गर्भ को अपने भीतर छुपाए रहती है, जिससे जागीरदार के दरबार में लोगों की भीड़ इंसाफ के लिए इकट्ठी होती है। कोई नहीं जानता था, कि एक सवर्ण पुरुष का उससे सम्बन्ध था, इसलिए कंकड़ी के देवर पर यह आरोप जड़ दिया जाता है कि उसी ने कंकुड़ी को गर्भवती बनाया है। कंकुड़ी ने यह पापकर्म अपने पुत्र नाथु के लिए किया था, किन्तु वह नहीं जानती थी कि इसकी वजह से दूसरा बालक मुसीबत के रुप में उसके समक्ष आ जाएगा। निर्दोष केशव को गर्भ में पल रहे बच्चे के भरण–पोषण की सज़ा मिलती है, जबकि दोषी जटाशंकर सुरक्षित रह जाता है। जटाशंकर कंकुड़ी का एक बार जातीय शोषण करके उस पर हमेशा के लिए शोषण करना चाहता था, किन्तु कंकुड़ी गर्भवती बन गई है यह जानकर जटाशंकर के होश उड़ जाते हैं। मेलोड्रामेटिक रुप से कहानीकार ने यहाँ कहानी को प्रस्तुत किया है। साथ ही गरीबी एवं भूख के कारण दलित स्त्री का अपने शरीर को सवर्ण के हाथ सौंप देना उसकी दयनीयता को चित्रित करता है।

13. 'श्रद्धा'–हरीश मंगलम्

'श्रद्धा' कहानी हरीश मंगलम् द्वारा रचित स्त्री जीवन को स्पर्श करने वाली कहानी है। कहानी का परिवेश गॉव का है, जिसमें दलित मजदूरी करके अपना भरण–पोषण करते हैं। शंकरभा और उसकी पत्नी माणेकबा का एकमात्र पुत्र बुचड़ा अपने विवाह के कुछ दिनों बाद पत्नी धनी और माता–पिता को छोड़कर कहीं गुम हो जाता

है। बड़ी उम्र में पुत्ररत्न के प्राप्त होने के बाद माणेकबा और शंकरभा अपने पुत्र के वियोग में अपनी सुध–बुध खो बैठते है। ईश्वर पर श्रद्धा होने के कारण माणेकबा शिवपूजा में लग जाता है। ईश्वर हमारे सारे दुःख दूर करके हमारी खुशियाँ लौटा देंगे ऐसी श्रद्धा के साथ प्रतिदिन पूजा–अर्चना करने लगता है और 'बचुडा की जय' कहने लगता है। उसकी ऐसी श्रद्धा में गाँव के बच्चे भी साथ में जय कहकर पूरे गाँव में जोरों से उसका साथ देते हैं। इन सब के बीच नई–नवेली दुल्हन धनी की स्थिति दयनीय हो जाती है। पति के साथ थोडे दिन वैवाहिक जीवन व्यतीत नहीं किया था, कि उस पर सास–ससुर की जिम्मेदारी आ गई थी। इसके अलावा गाँव के लोग उसकी निंदा भी करने लगे थे। कभी–कभी वह इन सबसे चिढ़ जाती, लेकिन फिर से आशा की एक किरण जाग जाती, वह सोचती ऐसे कोई थोड़े ही चुपचाप भाग जाता है ? अर्थात् वह मन को मनाकर आफत का सामना करती है। धनी अपने बूढ़े सास–ससुर की सेवा और पति के इंतेज़ार में चार वर्ष का लम्बा समय बीता देती है।

माणेकबा की श्रद्धा दिन–प्रतिदिन दृढ़ होती जाती है, तो शंकरभा पागलों की तरह चिमटी से अपनी दाढ़ी के बालों के बाद सिर के बालों तक को निकालने लगता है। धनी को ऐसी अंधश्रद्धा पर गुस्सा आता किन्तु माणेकबा उसे धीरज देती। माणेकबा स्वयं धनी के विषय में चिंतित थीं कि उसका क्या होगा ? धनी परिवार का भरण–पोषण करने के लिए खेतों में मजदूरी करने जाती है। गाँव के सेठ सुंदरलाल के तमाकु के खेत में वह मजदूरी के लिए जाती है। वहाँ उसे तमाकु के अच्छे और बुरे पत्तों को अलग करने का काम दिया जाता है, यह काम अन्य मजदूरों से दूर करना पड़ता है। इससे एकांत का लाभ लेने के लिए सुंदरलाल सेठ वहाँ पहुँच जाता है। उसके स्पर्श से, उसके प्रेमपूर्ण वार्तालाप से जिस प्रकार वर्षा की बुंदों से मिट्टी में नई–नई घॉस के कोमल तंतु फूट पड़ते है, उसी तरह धनी के पूरे शरीर में रोमांच होने लगता है। यौवन एकांत की दहलीज को पार करके सेठ के वश में आ जाता है। सुंदरलाल धनी को इसकी दूगनी मजदूरी देकर उसे खुश करना चाहता है। कुछ दिनों तक ऐसा चलता रहता है, वहाँ एक अनुभवी स्त्री तखी सुंदरलाल के चरित्र से परिचित थी, धनी के भोलेपन का लाभ वह उठा रहा है, यह देखकर वह धनी को सीख देते हुए सुंदरलाल सेठ की करतूतों का वर्णन करती है। सुंदरलाल बेशर्म और वासना का भूखा व्यक्ति है। उसकी पत्नी अपने पति की हरकतों से परेशान है। तखी की बातों से सीख लेकर धनी अपने मन पर काबू कर लेती है। वह इस मनोमंथन के साथ घर आती है जहाँ 'बचुडा की जय' का गगन भेदी नाद उसे स्पर्श करता है। वह भी श्रद्धा के साथ हाथ जोड़कर छोटे बच्चे की तरह वहॉ खडी हो जाती है। विचलित हुई धनी में श्रद्धा दुबारा स्थिरता ले आती है।

युवा अवस्था में धनी शारीरिक आवेगों की प्रवृत्ति से विचलित होकर सुंदरलाल के समक्ष समर्पित हो जाती है, किन्तु सही समय पर उसे सीख मिल जाती है, जिससे वह सद्वृत्ति की ओर अपना ध्यान केन्द्रीत कर देती है। इस तरह विजय सद्वृत्ति की होती है। ऐसी श्रद्धा को उजागर करने के लिए कहानीकार ने कहानी में संपूर्ण रुप से इसकी भूमिका बनाई है। वृत्ति पर संस्कृति की विजय पताका लहराती है। यह कहानी गॉव की वास्तविकता से हमें जोड़ती है। श्रद्धा में डूबे गाँव के लोगों में अधिक तो अंधश्रद्धा होती है, परंतु वही श्रद्धा का तंतु कभी व्यक्ति को पतन के मार्ग से पीछे खींच सकता है। 'श्रद्धा' कहानी के संदर्भ में लेखक का यह प्रयास सफल रहा है।

कहानी में सुंदरलाल सेठ जैसे व्यक्ति कितने शोषणखोर होते हैं, जो शोषण करने का एक भी मौका हाथ से जाने नहीं देता। मजदूरों का, उसमें भी दलित कामकाजी स्त्रियों का शोषण जैसे विषय पर प्रकाश डालने में कहानीकार को सफलता मिली है।

14. 'अधूरा पुल'—मधुकान्त कल्पित

मधुकान्त कल्पित की **'अधूरा पुल'** कहानी में कहानी का नायक ही कहानी कथक भी है। कहानी में सवर्ण पुरुष और दलित स्त्री के बीच अनैतिक संबंध की घटना को केन्द्र में रखा गया है। सवर्ण सेठ मजदूरी करने वाले कथानायक की माँ का शारीरिक शोषण करता है। कथानायक अपनी माँ के प्रेमी सेठ के पास जाने के लिए निकलता है, पुल का निर्माण कार्य तो जारी है, किन्तु नायक और उसके पिता के बीच के संबंधों का सेतु तो अधूरा ही रह जाता है। अधूरा पुल कहानी के नायक की अनिच्छनीय परिस्थिति के साथ के विच्छेद का प्रतीक बन जाता है। सामाजिक विषमता के कारण दलित स्त्रियाँ और उसका परिवार कैसी विकट परिस्थिति में पड़ जाता है। एक बेटा अपनी माँ के अनैतिक संबंध को जानकर कैसा महसूस करता है ? एक पति की कैसी दशा होती है, जो अपनी पत्नी के प्रेमी को अपनी आँखों के सामने उसका शोषण करते देखता है ? इस कहानी में ऐसे दलित परिवार की करुण स्थिति का वर्णन किया गया है। यहाँ झोंपड़ी में से निकलता धुआँ, मक्का की रोटी बनाती और चुल्हा फूँकती स्त्री, वृद्धों का खटिया पर बैठकर गाँजा पीना वगेरे द्वारा कहानीकार ने दलित परिवेश की रचना की है किन्तु डॉ. विजय शास्त्री लिखते हैं कि—

> **"माँ का, सेठ का या फिर स्वयं कथानायक का पात्र पूर्ण परिणाम में चित्रित नहीं है इससे Cipper बन जाते हैं।"**36

15. 'मेलीमथरावटी'—राघवजी माधड़

प्रस्तुत कहानी **'मेलीमथरावटी'** राघवजी आधड़ द्वारा रचित सवर्ण पुरुष और दलित स्त्री के अनैतिक संबंध को प्रस्तुत करती है। गंगा इस कहानी की नायिका है, जो लोगों के खेतों में मजदूरी करके अपना एवं अपने परिवार का भरण—पोषण करती है। जयंत खत्री की 'खीचड़ी' कहानी की नायिका का लखड़ी की तरह गंगा का जीवन आर्थिक संकटों से घीरा रहता है, जिसके कारण उसकी कमजोरी का फायदा गाँव का मुखिया उठाता है और उसका जातीय शोषण करता है। गंगा मुखिया का प्रतिकार नहीं कर सकती लेकिन उसकी करुणता तो यह है कि उसके माता—पिता भी इस अन्याय का समाना करने में असमर्थता प्रकट करते हैं। वे सब कुछ चुपचाप सहन करते हैं और गंगा से कहते हैं—

> **"बेटी ! तेरी सभी बात सही है ! परंतु हम नीची जाति के हैं, हमारे विचार ही मैले हैं.......हमारी बात की सच्चाई कौन मानेगा ?? बेकार में कीचड़ उछालेंगे और कुछ नहीं होगा...........हम तो हाथ—पैर बिना के मनुष्य है,उसका नाम लिया जा सकता है ? भूखों मरने के दिन आ जाएँगे..... ।"**37

गंगा मजबूरन मुखिया की वासना का शिकार हो जाती है। अपमान और अन्याय का कड़वा घूंट पीने के लिए विवश हो जाती है। सवर्ण मुखिया की मथरावटी वास्तव में मैली थी, न की गंगा की किन्तु सारा गाँव निर्दोष गंगा के चरित्र पर ऊँगली उठाते हुए कहता है कि–

> "अरे......! मंगा महेतर की बेटी का पैर गलत दिशा में चला गया है..... स्त्रियाँ इस बात को दाढ़ भींच–भींचकर दोहराती.....और परुषवर्ग तो गंगा की ही गलती निकलता.......सालों का पेट नहीं भरता है तो उसे फोड़ देना चाहिए.....! परंतु...... ऐसी काली कमाई......!!"38

गंगा की ऐसी व्यथा, वेदना का वर्णन हृदय कँपाने वाला है किन्तु इस पर डॉ. भरत मेहता का कथन है कि–

> "गंगा की व्यथा अभिव्यक्त करने की कलाकीय नहीं किन्तु अन्य वास्तवदर्शी स्तर पर चूक रह गई है। कहानी के केन्द्र में रहे गंगा के पात्र का आलेख जाँचने जैसा है। मगन हीरावाला को मुँह पर फटकारती गंगा से लेकर गाँववालों के बीच मुखिया की मथरावटी को उजागर करती गंगा– आलेख के प्रथम और अंतिम बिंदु हैं। मगन हीरावाला को मुँह पर फटकारती गंगा को जब रत्ना रोकता है तब उसे खड़े–खड़े चीर डालना चाहती है, किन्तु असहाय होती है ! रत्ना आगे बढ़ता है तब 'जा रे....रोया. ..! भोर के समय राम का नाम ले ......कहकर बात को पलट देना चाहती है। गंगा धीरे–धीरे परिस्थिति को स्वीकारती जाती है–परिस्थिति से लाचार ऐसी गंगा को मुखिया का सामना करने की पूरी क्षमता होने के बावजूद नहीं कर सकती। गंगा को मुखिया दूषित करता है। यही गंगा सबके सामने मुखिया को झटक देती है। अधिक स्फोटक परिस्थिति झोंपड़ी में थी कि गंगा के मोहल्ले में ? गंगा के पात्र के साथ यह घटना योग्य नहीं लगती। यदि गंगा ने झोंपड़ी की घटना का स्वीकार लाचारी से स्वीकारा था तो वह इतनी मूर्ख नहीं थी कि यह न समझी हो कि गलती, गुनाह उस पर ही आएगा। इस तरह, गंगा के पात्र में सामंजस्य खोता है।"39

यहाँ यह समझा जा सकता है, कि गंगा मुखिया की छेड–छाड, बुरी हरकतों को सहन करती है, जिसके परिणामस्वरुप एक दिन उसे बलात्कार का भोग बनना पड़ता है। जिसने मुखिया जैसे अत्याचारी का अनेक शोषण सहा हो, जिसने झोंपडी की घटना को भी किसी के समक्ष प्रकट नहीं किया हो, ऐसी गंगा कहानी के अंत में एकाएक विद्रोही बन जाती है, यह थोड़ा अस्वाभविक लगता है।
कहानी के अंत में जो होना था वह हो चुका है–

> "मंगा वृद्ध ने गंगा के सिर पर हाथ रखने का प्रयास किया किन्तु बिस्तर तो कब का खाली था। बूढ़े की धँसी हुई आँखों में से धारदार आँसुओं की धार बहने लगी।"40

कहानी की शुरुआत में चारपाई में से उठती गंगा कहानी के अंत में चारपाई पर नहीं है। कहानी का अंत इतना अवश्य कहता है कि आने वाले कल में सब कुछ अच्छा होगा किन्तु उसमें गंगा मौजूद नहीं होगी।

प्रस्तुत कहानी में ऐसे कई प्रसंग हैं जिसमें गंगा को अपमानजनक शब्द कहे जाते हैं, किन्तु वह ऐसे शब्दों की आदी बन चुकी है। पटलानी जब उसे भोर के समय देखकर 'रांड' जैसे गाली देती है तब गंगा पर इसका कोई प्रभाव नहीं पडता। कहानी में कितनी सचोट उपमाओं का विनियोग है, जो ध्यान देने जैसा है जैसे उदाहरण स्वरुप–

> **"पाड़े पर पानी डालो तो वह तुरंत नीचे गिर जाता है वैसे गंगा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा जैसे उसे ऐसी गालियों की आदत पड़ गई हो।"**41

पटलानी के व्यवहार पर कहानीकार ने जो प्रकाश डाला है, उसमें उसके अस्पृश्यता की भावना को अधिक महत्त्व देने वाला बताया गया है। उसके इस तरह के व्यवहार के विषय में राधेश्याम शर्मा लिखते हैं कि–

> **"एक पटलानी का बिहेवियर भावभंगिमा (जेश्चर) इस वर्णन में आस्वाद्य हैं।"**42

16. 'सपायडो' (सिपाही)–विट्ठलराय श्रीमाली

प्रस्तुत कहानी में वेस्ता और रामडी अपने पाँच बच्चों के साथ डांग के समृद्ध जंगल में रहते थे। जंगल समृद्ध था, लेकिन उसमें रहने वाले निर्धन थे। जमीन के एक छोटे से टुकडे में खेती करना और सात लोगों का पेट भरना बहुत ही मुश्किल था। वेस्ता और रामडी जंगल में उत्पन्न होने वाली वस्तुएँ एवं लकड़ी बेचकर किसी तरह अपना जीवन बीताते हैं। गरीबी की वजह से कभी–कभी तो उन्हें भूखे ही सोना पड़ता है। वेस्ता परिवार की छोटी–मोटी ज़रुरतों को पूरा करने के लिए कभी–कभी भट्ठी बनाकर देसी शराब बना लेता है, थोड़ी बेचकर बाकी अपने लिए रख लेता है।

सिपाही जानते हैं कि वेस्ता के घर में शराब मिलती है। एक रात तेज बारिश के कारण वातावरण बहुत ठंडा हो गया। वेस्ता के घर में खाने की कोई वस्तु नहीं थी। घर में मुर्गी थी, जिसे उबालकर थोड़ा–थोड़ा सबने खाया और ठंडक से बचने के लिए थोड़ी–थोड़ी शराब भी पी ली। सिपाही रात्री के समय शराब लेने आते हैं। वेस्ता शराब के नशे में था, बच्चे भी शराब पीकर सो गए। सिपाही और उसके साथी ने खूब शराब पी। उनकी दृष्टि रामडी पर पडी। वह नशे में थी, किन्तु थोड़ा होश भी था। वेस्ता की गरीबी एवं नशे का फायदा उठाकर सिपाही रामडी पर बलात्कार करता है, बाद में उसका साथी भी मौके का फायदा उठाता है।

पति के मौजूद होते हुए भी अपने ही घर में रामडी की आबरु लुट ली जाती है। रामडी लुट चुकी थी। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। नशे में सोते अपने पति को देखकर वह सोचती है कि उसकी गरीबी के कारण उसका पति शराब बनाता है, पेट की भूख को भूलाने के लिए शराब पीता है। उसका यह कार्य उसे गुनाहगार बनाता है, इसी गुनाह की वजह से आज लाचारीवश उसे अपनी इज्ज़त गँवानी पडी। यदि उसके पास धन होता तो उसका पति कभी ऐसा कार्य न करता। गरीबी उसके जीवन के सबसे बड़े दुःख का कारण बन जाती है।

रामडी पति से इस विषय में कुछ कहे उससे पहले पुलिसवाला और हवलदार वेस्ता को शराब बेचने के गुनाह में पुलिस स्टेशन ले जाते हैं। वे वेस्ता की पिटाई करते हैं रात–भर लोकअप में रखकर उसे छोड़ देते हैं। हवलदार ने पशुओं की तरह वेस्ता की पिटाई की थी, रामडी पति की अवस्था देखकर रोने लगती है। वेस्ता आज निर्णय लेता है कि वह अब कभी शराब नहीं बनाएगा। भले ही थोडे में गुजारा करना पडे, भूखे सोना पड़े, वह दुःख भोगने के लिए तैयार था, किन्तु पुलिस की मार नहीं खाना चाहता था।

रामडी पति के दुःख से भी अधिक दुःखी थी। पति पर अत्याचार बाहरी था, जिसे वह कुछ दिनों में भूल सकता था, किन्तु उस पर जो अत्याचार हुआ था उससे वह अंदर–ही–अंदर सुलग रही थी, किन्तु लाचार थी।

आठ दिनों के बाद वही पुलिस वाला और हवलदार शराब लेने आते हैं। रामडी और वेस्ता को धमकाते हैं। रामडी के सब्र का बांध टूट जाता है, आखिर वह कितना सहन करती। हसिए से वह हवलदार की पीठ पर वार करती है। वह वहीं दम तोड़ देता है। रामडी पर केस चलता है उसे उम्र कैद की सज़ा दी जाती है। रामडी ने जुर्म किया था, फिर भी उसे कोई अफसोस नहीं था, अब वह अपने परिवार को निर्भय समझती है। इसके अतिरिक्त उस गरीब के पास कोई रास्ता नहीं था।

17. 'झाड़'–हसमुख वाघेला

कंकु दलित वर्ग की स्त्री है। उसके पति का नाम दलिया है। दलिया चार फूट का था। होली की रात गाँव में ढोल बज रहे थे। होली जलाने की पूरी तैयारी हो चुकी थी। गाँव के सभी ब्राह्मण, राजपूत, पटेल, बनिये होली के नजदिक थे। थोडी दूर कुंभार, दरजी, मोची और अंतिम पंक्ति में हरिजनों की टोली थी। उसे गाँव में वर्षों से हर वर्ष होली के जलने के बाद उसमें नारियल डाला जाता था और राजपूतों में होड लगती थी कि कौन सबसे पहले वह नारियल निकालता है। जो राजपूत इसमें विजय प्राप्त करता अन्य लोगों के समक्ष उसका मान–सम्मान और बढ जाता।

इस वर्ष सरपंच का बेटे कालुभा इस होड में विजय पाना चाहता था। जिस समय सभी राजपूत जलती होली से नारियल निकालने के लिए प्रयास कर रहे थे, उसी बीच दलिया छः फूट के कालुभा के पैरों के बीच से जलता नारियल निकाल लेता है, और कोई–कुछ समझ पाए उससे पहले अदृश्य हो जाता है। कालुभा और अन्य राजपूतों ने पहली बार ऐसी हार का सामना किया था, जिसमें वे एक दलित पुरुष से हार गए थे। अपनी हार का बदला लेने के लिए राजपूतों में हाहाकार मच गया। राजपूत क्रोध और बदले की भावना से जलने लगे। दलित की हिंमत कैसे हुई कि वह नारियल निकाल ले ? यह प्रश्न उनकी इज्ज़त का था। उन्होंने दलिया को जिंदा न छोड़ने की ठान ली। दूसरी बार कोई हरिज़न ऐसी हिंमत न करे इसलिए दलिया को सबक सीखाना पड़ेगा। ऐसा निश्चय करके वे दलितवास में गए। दलिया तो अदृश्य हो, गया किन्तु दलितवास में पुरुष–स्त्री–बच्चे–बूढ़े सभी की साँस थम गई। सभी जगह दलिया को ढुँढा जा रहा था।

कालुभा को दलिया के कारण नीचा देखना पडा था। वह दलितवास में आग–बबूला होकर धमकी देते हुए कहता है–

"सूअरों ! तुम्हारा और तुम्हारी बीबी–बच्चों का जीव प्यारा हो तो दलिया को हाजिर करो, नहीं तो पूरे दलितवास को जिंदा जला दिया जाएगा।"43

कालुभा एक राजपूत और धाकड़ पुरुष है। दलिया जैसे हरिजन, गरीब व्यक्ति से चोट खाकर चुप बैठना उसके अहंकार को शोभा नहीं दे रहा था। कमजोर को अपने पैरों में रखने वाला कालुभा आज दलिया से हाड़े में हार चुका था। अपनी शक्ति का परिचय देने के लिए वह हरिजनों के मोहल्ले में धमकियाँ देता है। एक बुजुर्ग हरिजन व्यक्ति कालुभा से दुलिया की गलती के लिए क्षमा माँगता है, गिडगिडाता है किन्तु कालुभा को तो सिर्फ दलिया को ही दंडित करके शांति मिल सकती थी।

पूरे दलितवास और पति दलिया पर आई मूसीबत को देखते हुए उसकी पत्नी कंकु कालुभा से क्षमा माँगते हुए कहती है–

"आप तो हमारे माँ–बाप हैं। उनसे भूल तो हो गई है, कहें तो कल से हम यहाँ से चले जाएँ परंतु भाई साहब उन्हें कुछ नहीं करना।"44

कंकु अपने पति के प्राणों की रक्षा के लिए कालुभा से भीख माँगती है। वह जानती है कि राजपूतों के समक्ष दलिया ने जो हिम्मत का काम किया है, देखा जाए तो वह प्रशंसनीय है, किन्तु हरिजन होकर ऐसा कार्य करना और प्रशंसा पाना उनके नसीब में नहीं है। इसलिए वह कालुभा के समक्ष गिडगिड़ाती है।

कालुभा अपना शिकार को न पाकर पूरी दलितवास में आग लगवा देता है। उसका अट्टहास भयानक लगता है। उस आग की रोशनी में कालुभा की दृष्टि कंकु की जवानी पर पड़ती है। कालुभा का खून गर्म हो जाता है। उसकी शैतानी वृत्ति जोर पकड़ती है। अचानक कालुभा का हाथ गाल पर स्पर्शते वह घबरा गयी। दो दिन पहले जंगल में रोकि हुई कंकू के थप्पड़ से अभी भी गाँव में हलचल मची हुई है कालु ने सोचा आज ही बदला लेने का अच्छा अवसर है। कंकु से बदला लेकर वह अपने अपमान की भरपाई कर सकता है। यह सोचकर वह कंकु को नीचे गिरा देता है और उसके वस्त्र फाड़ देता है। निराधार कंकु मोहल्ले के सभी लोगों से हाथ जोडकर विनती करती है किन्तु कोई उसकी मदद करने की हिम्मत नहीं जुटा पाता। रोती हुई कंकु कालुभा के पैर पकड़कर कहती है कि–

"आपको यदि थोड़ा सा भी उपरवाले का भय हो तो मुझे छोड़ दो मैं गर्भवती हूँ।"45

गर्भवती कंकु अपने पति के प्राण बचाने के लिए आगे बढ़ती है, किन्तु वहाँ स्वयं उसका चीरहरण हो जाता है। द्रौपदी की लाज बचाने के लिए तो स्वंय भगवान आ गए थे किन्तु कंकु जैसे अबला को बचाने की किसी में हिम्मत न थी। कालुभा को भगवान का कोई डर नहीं था। इसलिए वह मोहल्ले के लोगों की उपस्थिति में ही कंकु के शरीर के अंगों से खिलवाड़ करने लगा। निर्वस्त्र कंकु उसकी पकड़ से छूटने के लिए तडपने लगी। निःसहाय लाचार कंकु कालुभा की मजबूत पकड के समक्ष असहाय थी। वृद्धों ने लाचारी से आँखें बंद कर ली। स्त्रियों का मुँह बंद हो गया था। चंद्र भी शर्म से बादलों में छुप गया। कालुभा मूँछों पर हाथ देते हुए खड़ा हुआ और जाते–जाते मोहल्ले के लोगों को धमकी देता गया–

"यदि किसी ने कंकुडी को कपड़ा पहनाया तो उसका भी ऐसा ही हाल होगा।"46

कंकु पर थूकता हुआ कहने लगा–

"तेरे दलिया को कहना तेरे नारियल का यह इनाम।"47

कालुभा का यह शैतानी रुप देखकर सभी स्तब्ध हो गए थे। उस डर से किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि रोती–तड़पती कंकु की मदद कर सके।

देर रात दलिया दौड़ते हुए मोहल्ले में आता है। सुलगती अग्नि–ज्वालाओं के बीच चौराहे पर अकेली, निर्वस्त्र हालत में रोती कंकु को देखकर उसके हाथ में रहा नारियल गिर जाता है। सिर पर बाँधे रुमाल से वह कंकु के शरीर को ढ़ँकता है और कहता है–

"कंकु यह .....क्या..... ?"48

कंकु दलिया को देखकर उससे लिपटकर रोने लगती है। रोते हुए कहती है–

"दलिया, हमारी किस्मत को आग लग गई....."और पेट की तरफ इशारा करते हुए–"और यह पेट......... ।"49

कंकु और दलिया के सुखी जीवन को राजपूतों की नज़र लग चुकी थी। मोहल्ले में सभी घर के भीतर जा चुके थे। दलिया यह दृश्य देखकर क्रोध से तमतमाता हुआ कहता है–

"धिक्कार है तुम्हें और तुम्हारी जात को। तुम्हारी जनेता के दूध में इतनी ताकत नहीं थीं, कि कोई मर्द बनकर संघर्ष करे।"50

यहाँ दलिया कंकु की स्थिति के लिए अपनी बस्तीवालों को कोसता है, धिक्कारता है जिनके समक्ष कंकु को निर्वस्त्र करके अपमानित किया गया। लोग उस अन्याय के समक्ष संघर्ष करते तो शायद कालुभा सरेआम कंकु को अपमानित नहीं कर सकता था। उसे अपने आप से भी घृणा हो गई कि ऐसी स्थिति में वह कंकु की रक्षा करने के लिए उपस्थित नहीं था। वह कंकु से कहता है–

"कब तक ऊँची जात का अत्याचार सहना पड़ेगा। कब तक उनकी गुलामी करनी होगी।"51

कंकु की आँखें पोछते हुए भर्राते हुए गले से कहने लगा–

"कंकु हमारा इतना भी अधिकार नहीं कि होली का नारियल ले सकें। प्रसाद खा सकें ? सवर्णों का अधिकार और हमारा नहीं ? कब तक कंकु कब तक हमें यह सब सहना पड़ेगा ?"52

दलिया का दिल व्यथा के भार से चिर गया था। आज़ादी मिले हमें वर्षों बीत गए किन्तु दलितों को आज भी जातिवाद से आज़ादी नहीं मिली है। दलिया को इस धरती पर जन्म लेना और जीना ही पाप लगने लगा। इसलिए वह कंकु को साथ में

लेकर साथ ही अपनी होने वाली संतान को उस जगह लेकर जाना चाहता है जहाँ ऐसा भेदभाव न हो। वह कंकु का हाथ पकड़कर सुलगती आग में कूद पडता है।

दलिया और कंकु का करुण अंत उनकी पीड़ा की, सहनशक्ति की चरम सीमा पार कर जाता है। दलिया कंकु के अपमान का बदला लेने में अपने आपको असमर्थ समझता है, इसलिए अपना अंत कर देता है। कहानी में राजपूतों का दलितों पर अत्याचार, शोषण, जातिगत भेदभाव आदि के कारण दलितों की करुण स्थिति, असहाय अवस्था को देखा जा सकता है। किंतु दलिया का आत्महत्या करना पठकों के हृदय में असंतोष छोड़ जाता है।

18 'गोमती'–पुष्पा माधड़

पुष्पा माधड़ द्वारा रचित **'गोमती'** कहानी स्त्री शोषण की कहानी है। कहानी की नायिका गोमती एक दलित युवती है। गोमती पर गाँव के मंदिर का पुजारी मंदिर में बलात्कार करता है। इतना ही नहीं पुजारी अपने बचाव के लिए गोमती के परिवार को मजबूर करता है कि वह गाँव छोड़कर चले जाएँ। परिवार को दर–दर भटकना न पड़े, गाँववालों द्वारा उनका बहिष्कार न किया जाए इसलिए गोमती आत्महत्या कर लेती है।

कहानी की शुरुआत में गोमती इन्द्र की सभा में चीखते हुए प्रवेश करती है। उसकी चीख सुनकर गांधर्व, अप्सरा स्वयं देवराज इन्द्र चकित रह जाते हैं। द्वारपाल उसे नर्क में ले जाना चाहता है, क्योंकि उसने आत्महत्या का गुनाह किया है। गोमती देवराज के पास न्याय मांगने आती है। अपना परिचंय वह भारत देश की दलितनारी के रुप में उन्हें देती है। देवराज इन्द्र के मन में भारत वर्ष की छाप बहुत सुंदर है, उसकी गौरव–गाथा का मान उनके मन है। किन्तु गोमती जब उन्हें वहॉ के दलितों की दयनीय स्थिति, गरीबी और अस्पृश्ता से परिचित कराती है तो सभी दंग रह जाते हैं। दलितों का उद्धार सिर्फ समाचार–पत्र और शोध समितियों में देवराज ने देखा था, जिससे वे निश्चिंत थे कि भारत में सारा कार्य ठीक ढ़ंग से चल रहा है। गोमती जब उन्हें बताती है कि आज भी दलितों को हाड़तोड़ मेहनत करने के बावजूद न तन ढँकने के लिए चिथड़ा मिलता है और न पेट भर खाना, न सिर पर छत, है न सम्मानपूर्ण जीवन। उसे आज भी उच्च वर्णों से केवल अपमान और अत्याचार ही मिल रहा है।

देवराज गोमती से उसकी आत्महत्या करने का कारण जानना चाहते हैं, तब रोते हुए गोमती पुजारी द्वारा उस पर हुए बलात्कार की घटना का जिक्र करती है। स्त्री जाति पर शोषण होना कोई नई बात नहीं है, किन्तु गोमती की परेशानी तब बढ़ती है, जब पुजारी दूसरे दिन उसके मोहल्ले में आकर उसके बूढ़े पिता को लकडी से मारकर कहता है कि–

> **"ए बुड़ढे.....। ये तेरी बेटी को काबू में रख.....जवान हो गई है तो कहीं ठिकाने लगा दे.....और यदि ठिकाने न लगाई जा पा रही है तो फिर...... कहता हुआ मँछों में हँसने लगा.....।"** [53]

पुजारी पर गोमती या उसका परिवार कोई आरोप लगाए या शिकायत करे उससे पहले ही पुजारी उन्हें डरा देना चाहता है। गाँव के बीच गोमती को बेइज्ज़त करके अपने दामन को साफ रखने के लिए वह उन्हें धमकाते हुए कहता है–

"सालों.....तुम नीची जाति के लोग बहुत चालाक हो गए हो...उच्च जाति के लोगों की इज्जत पर हाथ डालने लगे हो............दिन उगते ही....गाम छोड़कर चले जाओ नहीं तो ठीक नहीं होगा समझे।"54

निर्दोष गोमती और उसका परिवार कोई गुनाह न करके भी सज़ा भुगतने के लिए विवश किया जा रहा था। इसका कारण मात्र इतना ही था कि वे दलित थे। सवर्णों के समक्ष उनकी सच्चाई सुनने वाला या उन्हें न्याय देना वाला कोई नहीं था। गोमती की सच्चाई जानकर देवराज इन्द्र और सभा में मौजूद सभी की आँखें नम हो जाती हैं। स्वयं को जिस देश के लिए गर्व होता था ऐसे इन्द्र इस सच्चाई को सुनकर खिन्न हो गए।

गोमती के परिवार ने गाँव नहीं छोड़ा तो गाँववालों ने उनका बहिष्कार किया। पूजारी गोमती को विवश करने लगा अपने वासना तृप्ति के लिए। ऐसा नहीं था कि गोमती उसका विरोध करना या विद्रोह करना नहीं जानती थी, किन्तु उसी का यह कथन है कि–

"यह तो..........! मैं उस..............महाराज की आँखें फोड़ सकती थी परन्तु..... मेरे कारण पूरे मोहल्ले को भूखे मरने की नौबद आए उससे तो ....।"55

गोमती पुजारी द्वारा किया जाने वाला अत्याचार अपने परिवार और मोहल्ले के दलितों के लिए सहती है। उसका यह त्याग उन गरीबों के लिए होता है जो पहले से ही दु:खी हैं, शोषित है, उन्हें गोमती और अधिक दु:खी नहीं देखना चाहती। इसलिए वह अपने जीवन का अंत करके उस अत्याचार से स्वयं भी मुक्त होती है और अपने परिवार तथा समाज को भी दु:खी होने से बचाने का अंतिम प्रयास करती है।

इन्द्र गोमती की करुण गाथा को सुनकर शर्म से सिर झुका लेते है, वे उसे स्वर्ग में स्थान देते हैं, किन्तु गोमती की कुछ दूसरी प्रार्थना है। इन्द्र उसे वरदान देने को तैयार है और पूछते हैं कि माँग तुझे क्या चाहिए वह कहती है–

"तो मुझे मेरी लुटी हुई आबरु वापस लौटा दो.....।"56

एक स्त्री के लिए इससे बड़ी कोई वस्तु नहीं होती। उसका आत्मसम्मान ही उसके लिए सबसे बड़ी पूँजी होती है। कोई उसे लुट जाने के बाद लौटा नहीं सकता। इस अनमोल वस्तु के लुट जाने पर वह गोमती इन्द्र की सभा से भी खाली हाथ लौटती है।

प्रस्तुत कहानी में स्वर्ग में पहुँची दलित गोमती न्याय की अपेक्षा से इन्द्र के पास पहुँचती है। वह अपनी आप–बीती सुनाकर स्वर्ग के लोगों से सहानुभूति भी पाती है, स्वर्ग में स्थान भी पाती है, लेकिन अपनी लुटी हुई आबरु नहीं पाती। उसको यह वरदान देने में स्वयं इन्द्र भी असमर्थ हैं। यहाँ देवो को भी बेबस दिखाया गया है। दलितों को न्याय न तो धरती पर मिलता है और न ही स्वर्ग में ही मिल पाता है।

19. 'चमड़ी घीसने की वेदना'–बी. केशरशिवम्

प्रस्तुत कहानी में नायिका कमला एक शिक्षित युवती है, जिसको एक शिक्षिका के रुप में फूलपुरा गाँव में नौकरी मिलती है। उससे पहले उस स्थान पर काशी नाम की स्त्री नौकरी करती थी। कमला के पति केशव की सगाई काशी के साथ हुई थी, किन्तु एक वर्ष के बाद यह सगाई जाति के झगड़े के कारण टूट गई। एक वर्ष के

समय के अंतर्गत केशव और काशी के बीच शारीरिक संबंध स्थापित हो जाता है, जिससे वह गर्भवती बन जाती है।

केशव की शादी कमला से हो जाती है और उसे शिक्षक की नौकरी मिल जाती है। दोनों सुखी जीवन जीने लगते हैं। केशव बुद्धीशाली था, आगे पढ़ाई जारी रखकर वह UPSC की परीक्षा पास करके क्लास वन अधिकारी बन जाता है। केशव की प्रामाणिकता को देखकर, साथ ही नीची जाति के अधिकारी होने के कारण उसके नीचे काम करने वाला स्टाफ उसे रिश्वत के झूठे आरोप में फँसा देता है। केशव को सस्पेन्ड कर दिया जाता है। कोर्ट में तीन वर्ष तक केस चलता है। कमला अपने पति का हौंसला बढ़ाती है। उसे विश्वास था, कि केशव निर्दोष साबित होगा। आखिर केशव की जीत होती है। किन्तु उसे नौकरी पर हाजिर नहीं किया जाता। इससे आगे फिर केस दर्ज कर दिया जाता है। केशव अब मानसिक रुप से टूट जाता है। कमला ही घर, बाहर, कोर्ट और वकील का काम सँभालती है। दूसरी बार भी केशव की ही जीत होती है, कोर्ट का फैसला सुनने की अब उसमें शक्ति नहीं थी। कमला खुशी का समाचार लेकर घर लौटती है किन्तु तब तक केशव पाँच वर्षों के इस वेदनामय जीवन से तंग आकर आत्महत्या कर लेता है।

निर्दोष केशव दलित था, इसलिए उसे और उसकी पत्नी कमला को लोगों के ताने सुनने पड़ते हैं और नज़र झुकाकर रहना पड़ता है। कमला का कोई सहारा नहीं था। वह माँ नहीं बन सकती थी, कमी उसमें थी, किन्तु पत्नी से अथाह प्रेम करने वाला केशव कमी स्वयं में है, यह कहकर उसे दु:खी होने से बचाता है।

कमला अपने पति को भूल नहीं सकती थी किन्तु अकेली स्त्री को समाज शांति से जीने नहीं देता है, ऐसा अनुभव उसे खुद हो चुका था। मायके वालों के समझाने पर वह बलदेव नामक एक अधिकारी से विवाह कर लेती है, जिसकी पहली पत्नी एक बेटे को छोड़कर मर चुकी थी। बलदेव और केशव में जमीन–आसमान का अंतर था। बलदेव स्वच्छंद प्रवृत्ति का, शराब पीनेवाला और कमला को वह प्रेम नहीं दे पा रहा था, जिसकी उसे ज़रुरत थी। कमला पति के पुत्र महेश की परवरिश में अपना समय लगा देती है।

पहले पति की प्रेमिका काशी का संबंध दूसरे पति बलदेव से भी रहता है। काशी केशव के बच्चे महेश को जन्म देकर एक शिक्षिका की नौकरी करती है। वह एक कुंवारी माता थी किन्तु पुत्र का भविष्य अंधकारमय होने से वह नि:संतान बलदेव की इच्छानुसार महेश को उसे गोद दे देती है। बलदेव के इस उपकार के बदले वह बलदेव के शारीरिक शोषण को सहती है। फुलपुरा गाँव में दलित स्त्रियों के साथ सरेआम बलात्कार किया जाता था, जिसे रोकने के लिए काशी गॉव के सरपंच को अपनी मुट्ठी में लेकर ऐसे अत्याचारियों को दंड दिलवाती है, उन्हें सबक सीखाती है। इसके लिए उसे सरपंच की अंकशायनी भी बनाना पड़ता है, किन्तु अपने समाज की अन्य स्त्रियों को बचाने के लिए दलितों को बीजली, सड़क आदि भौतिक सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए वह अपने शरीर का बलिदान कर देती है।

काशी सुंदर थी, वह अपनी सुंदरता और बुद्धी के सहारे दलित बच्चों को शिक्षा और रोज़गार दिलाने के लिए कॉलगर्ल बन जाती है और नौकरी छोड़ देती है। समाज जिस कार्य को घृणा की दृष्टि से देखता है, वह वेश्यावृत्ति का काम काशी अपने समाज को सुधारने के लिए करती है। उसका रास्ता भले ही गलत था किन्तु विचार नेक था। वह स्वयं दलदल में धँसती जा रही थी, किन्तु बहुत से बच्चों, स्त्रियों को उस

दलदल से बचा रही थी। काशी का यह त्याग एक स्त्री को उदारता की मिसाल कहा जा सकता है। कमला का दूसरा पति बलदेव काशी के इस समाज सुधार के कार्य में उसकी मदद करता है, किन्तु एक रोड एक्सीडेन्ट में बलदेव की मृत्यु हो जाती है। काशी ही कमला को केशव बलदेव और अपने पुत्र की सच्चाई बताती है। एक तरफ बलदेव और दूसरी तरफ केशव दोनों काशी से संबंध बनाते हैं, किन्तु काशी अपने समाज सुधार के कार्य के कारण कमला की नज़रों में ऊँची उठ जाती है। काशी अब वेश्यावृत्ति छोड़ देती है और उसके और बलदेव के गलत रास्ते से कमाए धन को कमला के हाथों में सौंपकर उसे अपने समाज को सुधारने की जिम्मेदारी दे देती है।

पति के निर्दोष होने पर भी कमला जीवन में संघर्षों का सामना करती है और दूसरे पति की मौजूदगी में भी वह अकेलापन सहती है। काशी कुँवारी माँ बनती है। और जीवनभर पति का सुख नहीं पाती। अपने शरीर की चमड़ी को घीसवाकर वह समाज को तो सुधारती है, किन्तु अपना स्वयं का जीवन नर्क–सा बना लेती है। वह अपने बेटे महेश को उसके समक्ष अपना बेटा कहने की हिम्मत खो बैठती है। पुरुष वर्ग द्वारा काशी का शारीरिक शोषण होना काशी के जीवन की दिशा ही बदल देता है।

20. 'सगपण' (सगाई)–प्रज्ञा पटेल

प्रस्तुत कहानी की नायिका मणकी की माँ की मृत्यु तभी हो जाती है, जब मणकी छोटी थी। मणकी का पिता अपने दुःख को भुलाने के लिए कभी–कभी शराब पी लेता था, और नशे में मणकी को पीटता भी था। मणकी बिन माँ की संतान होने से समय से पूर्व ही समझदार और जिम्मेदार बन जाती है। उसका पिता उससे प्रेम करता है, उसे अपनी गोद में सुलाता है।

जब मणकी युवा अवस्था में पहुँचती है तो उसके पिता को उसके विवाह की चिंता होती है। मणकी भी अपनी सहेलियों की शादी देखकर अपने विवाह के लिए उत्सुक थी। उसने अपने विवाह के लिए कुछ कपडे भी तैयार करके छीपा रखे थे। वह अपने पति के घर जाएगी, उसका पति उसे बहुत प्रेम देगा, आदि वह सपने देखा करती थी।

मणकी का पिता एक अस्पताल में सफाई कर्मचारी था। वह रात में चौकीदारी का काम भी करता था। मणकी कभी–कभी अपने पिता के साथ अस्पताल चली जाती थी। उसकी सुंदरता, कोमलता और भोलेपन को देख वहाँ के एक डॉक्टर की नियत खराब हो जाती है। वह मौके की तलाश में था।

रुडिया नामक भोलाभाला लड़का वहाँ नया–नया नौकरी पर आता है। अस्पताल में उसकी मित्रता मणकी से हो जाती है। मेलजोल बढ़ता है और दोनों एक दूसरे से प्रेम करने लगते हैं। दोनों की खुशी देख मणकी का पिता उनकी सगाई कर देता है। मणकी और रुड़िया एक साथ घूमते, खाते, प्रेमपूर्ण वार्तालाप करते और अपने सुखी वैवाहिक जीवन की कल्पना करते, क्योंकि दो महिने बाद उनका विवाह होने वाला था। एक दिन वे दोनों फिल्म देखने जाने की तैयारी करते हैं, क्योंकि मणकी ने कभी थियेटर में बैठकर फिल्म नहीं देखी थी। रुडिया पकोड़ी का पेकेट लेकर काफी देर से मणकी का इंतेज़ार कर रहा था, जब वह नहीं पहुँचती तो वह अस्पताल में उसे ढुँढ़ता है। अचानक डॉक्टर के बंद केबिन से उसे कुछ आवाज़ आती है। वह स्टूल रखकर उसपर चढ़कर काँच में से देखता है, तो मणकी के मूँह में कपड़ा ठूँसकर डॉक्टर उसके सपनों को तार–तार रहा था। मणकी की ऐसी स्थिति देखकर रुढिया गिर पड़ता है,

उसके सिर पर गहरी चोट आती है। मन और मस्तिष्क साथ में शरीर पर चोट लगने से रुड़िया मानसिक रुप से विक्षिप्त हो जाता है। मणकी का सपना चूर–चूर हो जाता है। मणकी का बलात्कार रुड़िया और उसकी खुशियों पर ग्रहण बन जाता है।

मणकी और उसके पिता ने यह सोचा था कि यदि मणकी भी अस्पताल में काम करेगी, तो उसकी आर्थिक स्थिति में सुधार आएगा। डॉक्टर के षडयंत्र में दोनों फंस जाते हैं। और गरीब मणकी अपना सबकुछ गँवा देती है। रुड़िया का अब एक मात्र सहारा बकरी का एक बच्चा बन जाता है, जिसे लेकर वह दिनभर दर–दर घूमती है।

मणकी और रुड़िया का विवाह तो नहीं हुआ, किन्तु उसकी सगाई हो गई थी। अब उसे अपनी पुत्री के साथ–साथ रुड़िया का भी ख्याल रखना था। उसका विचार था कि–

> **"सगाई तो कुछ नहीं है इस पागल के लिए किन्तु.....उसका पागलपन ही उसके साथ का संबंध बन गया।"**57

मणकी के प्रेम में उसके दुःख को देखकर रुडिया पागल हो गया था, यही दुःख, वेदना और पीड़ा का संबध था उन दोनों के बीच। मणकी का पिता इसलिए रुडिया को अपना ही समझता है।

डॉक्टर द्वारा किए गए अपराध की सज़ा उसे नहीं मिलती, क्योंकि अस्पताल की बदनामी ना हो इसलिए मणकी के पिता को समझाबुझाकर सभी कर्मचारी रोक लेते हैं। एक पिता होने के बावजूद उसमें इतनी क्षमता नहीं थी, कि वह अपनी बेटी के गुनहागार को दंड दिलवा सके। वह डॉक्टर और उसकी सात पुस्तों को बद्दुआ देता है। और शारदा (नर्स) से कहता है–

> **"आपने, आप सभी ने मुझे रोका...अस्पताल की इज्जत के नाम पर, मेरी बेटी और मेरी इज्जत के नाम पर.......मुझसे छल किया गया.... ।"**58

वास्तव में दलित मणकी और उसके पिता को यही समझाया गया था कि डॉक्टर के खिलाफ शिकायत दर्ज करी जाएगी तो इसमें मणकी और तुम्हारी बदनामी होगी। तुम्हारी आमदनी का एक मात्र स्त्रोत भी तुमसे छीन लिया जाएगा और डॉक्टर तो धनवान है कुछ रुपये खर्च करके वह छूट जाएगा। साथ ही अस्पताल यदि बंद हो गया तो सभी स्टाफ वाले बेरोज़गार हो जाएँगे। मणकी का पिता सभी की भलाई और रोजी–रोटी के लिए अपमान का यह घूँट पी जाता है।

रुड़िया, मणकी की सहायता नहीं कर पाया था, इसका दुःख उसे इतना था, कि आज भी वह घटना रह–रहकर उसे याद आती थी। उसके पागलपन, मणकी के बलात्कार और मणकी के पिता के दुःख का कारण डॉक्टर समाज में सिर ऊँचा करके सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत करता है, क्योंकि वह एक सवर्ण और धनवान व्यक्ति था। जबकि मणकी रुडिया और उसका पिता गरीब होने के कारण दुःखी और अपमानित जीवन जीने के लिए विवश थे। दोषी को दंड न दिए जाने का दुःख उनकी पीड़ा को और अधिक बढ़ा रहा था।

प्रस्तुत कहानी में दलित युवती के जातीय शोषण की समस्या को उजागर किया गया है। मणकी का शोषण उसके स्वयं के साथ–साथ उसके पिता और प्रेमी के जीवन को तहस–नहस कर देता है। एक व्यक्ति के दुष्कृत्य की सज़ा तीन लोगों को भुगतनी पड़ती है और दोषी स्वयं आज़ाद रहता है। कहानी का शीर्षक 'सगपण' अपनी

सार्थकता को सिद्ध करने वाला है। बलात्कार के बाद मणकी का एक भी संवाद कहानीकार ने नहीं प्रस्तुत किया है, जिससे मणकी के विचारों को जाना जा सके। कहानी का अंत कहीं-न-कहीं एक अधूरापान छोड़ जाता है।

3.2 सवर्णों की स्वार्थपरता का शिकार हुई दलित महिलाएँ

1. 'दायण'(दाई) – हरीश मंगलम्

प्रस्तुत कहानी अस्पृश्यता के कारण उपेक्षित और अवहेलना का भोग बनी दाई बेनी मां के जीवन को चित्रित किया गया है। दलपत चौहान की 'गंगा माँ' और ओमप्रकाश वाल्मिकी की कहानी 'अम्मा' से साम्यता रखती इस कहानी में मुख्य रुप से दलित समाज व सवर्ण समाज में बिरादरीगत जड़ मान्यताओं में पीस रही नारी की करुण ज़िंदगी का दाहक दस्तावेज बना हुआ है। अस्पृश्यता की जकड़न से मुक्त होने के लिए दलित चाहे कितने भी अच्छे कार्य करे किंतु बदले में इन्हें सवर्ण समाज द्वारा अनेक यंत्रणा व उपेक्षा ही सदियों से मिलती रही है।

कहानी की नायिका बेनीमाँ एक वृद्ध महिला है, जो दाई के कार्य को इतनी अच्छी तरह से जानती थीं, जितना कोई डॉक्टर भी न जानता होगा। भले ही उनके पास कोई सर्टिफिकेट नहीं था, किंतु अनुभव और समझदारी जितनी उनके पास थी, उतनी किसी और के पास नहीं थी। अपने इस कार्य के बदले में वह किसी से एक भी रुपया नहीं लेती, बस एक नारियल का ही खर्च करवाती है।

बेनीमां सवर्ण स्त्री पशी की प्रसव वेदना का समाचार सुनकर दौड पड़ती है और उसके बच्चे को जीवनदान देती है। जो कार्य कोई डॉक्टर भी न कर पाया वह बेनीमाँ करती है। यही बेनीमाँ जब गाँव में आम बेच रही थी, उस समय पशी अपने बेट के साथ उसके सामने से जा रही थी। बेनीमाँ उस बच्चे को आम देने के लिए अपने पास बुलाती है, बच्चा उसके पास आने लगता है, तब पशी उसे रोकते हुए अपनी गोद में ले लेती हुई कहती है–

"देखना कीकला......बेनीमां को न छूना!!!" 59

यहाँ पर जातिवाद के पूर्वग्रह कितनी गहराई तक जमें हुए हैं देख जा सकता है। यही बेनीमाँ ने उसे और उसके बच्चे को बचाया था, उस दिन तो वे बेनीमाँ की तारीफ करते नहीं थक रहे थे, किंतु जैसे ही उनका मतलब निकल गया वे मानवता भी भूल गए। पशी के शब्द बेनीमाँ का अपमान करते हैं फिर भी बेनीमाँ उसे सहजता से सहन करते हुए कहती हैं–"ठीक है बहन मैं जा रही हूँ" यह सूनकर किसी भी व्यक्ति का ह्रदय पिघल जाएगा, किंतु पशी एक सवर्ण कठोर ह्रदया, अस्पृश्यता का पालन करने वाली नारी है। यह कहानी विद्रोह और प्रतिभाव लिए हुए है। एक वंदनीय और बुजुर्ग पात्र दाई बेनीमां के द्वारा लेखक हरीश मंगलम् ने सामाजिक आर्थिक, राजकीय और सांस्कृति रुप में दलितों को जों वर्षों से सहन करना पड़ा है उसके समक्ष यह उग्र प्रतिभाव कहा जा सकता है।

2. 'नवी'–योगेश जोषी

योगेश जोषी द्वारा रचित प्रस्तुत कहानी की नायिका का नाम नवी है। (गुजराती में 'नवी' अर्थात् नयी) नवी फ्लेश बेक में रची गई कहानी है। कहानीकार

काफी समय के बाद गाँव में आते हैं, जहाँ नवी की बेटी जो हूबहू नवी के जैसी दिखाई देती है, उसे देखकर कहानीकार को अपने भूतकाल का स्मरण होता है।

नवी कहानीकार के मोहल्ले में साफ–सफाई का काम करती थी। सत्रह–अठार वर्ष की नवी श्याम रंग की हसमुख स्वभाव की युवती थी। उस गाँव में अस्पृश्यता, अंधविश्वास और रुढिचुस्त रीति–रिवाज़ हर घर में देखे जा सकते थे। मोहल्ले में सफाई करने वाली नवी के कार्य से सभी प्रसन्न थे। दिन में सफाई करने वाली नवी उसी मोहल्ले में शाम के समय बचा हुआ खाना माँगने रोज जाती है। लेखक के घर भी उनकी माँ नवी के हिस्से की रोटी बनना भूलती नहीं है। नवी के हसमुख स्वभाव से घर के सभी लोग उससे अच्छे ढ़ंग से बातचीत करते हैं, किंतु जहाँ बात उसके अछूत होने की आती है, वहाँ सारी मीठास कड़वाहट में बदल जाती है। कहानीकार के ही घर की बात लें तो घर में बड़े से लेकर बच्चे तक को यह अच्छी तरह सीखाया गया है, कि नवी से बातचीत भले करो लेकिन उसे स्पर्श नहीं करना है, यहाँ तक कि नवी जिस वस्तु को स्पर्श करती उस वस्तु को भी स्पर्श नहीं करना है।

कहानीकार के घर का छोटा बच्चा नानिया जोर से चीखकर रोता हुआ अपनी माँ को बुलाता है, माँ जब दौडकर आती है तब बह कहता है–

"माँ नवी मुझे छूने आ रही है..."60

जिस पर नवी खिल खिलाकर हँसते हुए कहती है–

"मेलडी माँ की कसम। बाबा साहब को स्पर्श करुँ तो तो मैं पाप में और नरक में जाऊँ... मैं तो बा, मजाक कर रही थी।"61

नवी स्वंय भी अस्पृश्यता के माहौल में पली–बढ़ी थी। अपनी सीमा उसने स्वयं बनाकर रखी थी। उसके इस वाक्य से गाँव के रुढ़िचुस्त रीति–रिवाज़ और अंधविश्वास की बात स्पष्ट हो जाती है, जिसमें यह कहा जाता है, कि दलित व्यक्ति यदि गैरदलित का स्पर्श करता है तो नरक में जाता है।

वार–त्यौहार, श्राद्ध आदि के समय नवी अधिकार के भाव से बचा–कुचा भोजन माँगने आ जाती हैं। इसके अलावा उतरे हुए कपड़े, चप्पल, आदि वस्तुएँ बड़ी खुशी से स्वीकार कर लेती। यदि किसी बच्चे को चेचक हो जाता तो गॉव के अंधविश्वास के अनुसार नवी को बुलाकर दूर से उस बच्चे को फूँक मारकर चेचक को ठीक करने का प्रयास किया जाता था। एक बार कहानीकार के घर बिल्ली मर जाती है। लहूलुहान बिल्ली को कौन बाहर फेंक सकता है ? लेखक की माँ तो उसे देखकर घबरा जाती है, तब दादी माँ कहती हैं–

"नवी को बुला लो, वह सब साफ कर देगी और बिल्ली को ले जाएगी। मोहल्ले में कुत्ता–बुत्ता मर जाए तब नवी ही उसे रस्सी से बाँधकर घसीटकर ले जाती। नवी सब साफ–सूफ करके गई तब दादीमाँ बोली, इस पर नवी ने हाथ लगाया था.....जहाँ–जहाँ नवी ने स्पर्श किया था वहाँ–वहाँ गंगाजल छिड़क दो।"62

'गंगा माँ', 'दायण' कहानी की तरह इस कहानी में भी दलित स्त्री को आवश्यकता होने पर बुलाया जाता है और बाद में उसके द्वारा स्पर्श की गई वस्तुओं को गंगाजल से शुद्ध किया जाता है।

घर में कुछ अच्छा भोजन बनाया हो तब दादी माँ नवी के लिए बचाकर रखना नहीं भूलती थी। कभी नवी खाना लेने न आए तब, दादी माँ को उसकी चिंता होने लगती थी कि नवी क्यों नहीं आई ? कहीं बीमार तो नहीं हो गई ? साथ ही नवी दलित है, अस्पृश्य है यह भी नहीं भूलती थी।

पहले नवी बाजार में कचरा साफ करती थी। वहाँ जमादार बहुत ही कड़क था, किंतु नवी उससे नहीं डरती थी। एक बार गाली देते हुए जमादार ने सिगरेट का आनंद लेने वाली नवी की सिगरेट खींच ली। बस भरे बाज़ार में नवी ने उसे जोर से गाल पर तमाचा लगा दिया। इस घटना के एक महीने बाद नवी ने उसी जमादार से प्रेमविवाह कर लिया। उस जमादार की पहली पत्नी थी यह दूसरी नवी बनकर गई। तब से सभी उसे 'नवी' कहकर पुकारने लगे। पहली पत्नी के समक्ष शेर बनकर रहने वाला जमादार दूसरी नवी के समक्ष गाय बनकर रहने लगा।

यहाँ नवी जिस जमादार पर हाथ उठाती है उससे प्रेमविवाह करती है, यह बात कुछ अलग लगती है, क्योंकि क्रूर जमादार की दूसरी पत्नी बनना नवी को क्यों अच्छा लगा होगा ? यह प्रश्न सोचने जैसा है। नवी की बेटी अब कहानीकार के मोहल्ले में माँ के कार्य को सँभालती है।

इस प्रकार संपूर्ण कहानी में एक ओर कहानीकार ने एक दलित स्त्री के प्रति गैरदलितों में स्वार्थी प्रेम को चित्रित किया गया है, दूसरी ओर अस्पृश्यता, अंधविश्वास रुढ़िचुस्त, रीति–रिवाजों पर प्रकाश डाला है। गैरदलितों का नवी के प्रति प्रेम वास्तव में उनकी आवश्यकता के कारण उपजा बनावटी का प्रेम था।

3. 'फट रे भुंडा'–प्रीतम लखमाणी

प्रस्तुत कहानी में कड़वीमाँ की तीसरे नंबर के बेटे की पुत्री कंकु की सुंदरता को देखकर कहा जा सकता है कि ईश्वर ने उसे फुरसद में गढ़ा होगा। पूरे मोहल्ले की युवतियों को जो सुंदरता मिलने वाली थी, वो अकेली कंकु को दे दी थी। हिरनी जैसी आँखें, नागिन जैसे बाल, चंद्रमा जैसा मुख गाँव के युवक उसे देखकर सोचते हैं कि ये कंकु यदि हरिजनवास में न जन्मी होती तो, हम इसी से विवाह करते।

गाँव के राजपूतों के लड़के उसे पाने के लिए तड़पते किन्तु कंकु किसी की ओर ध्यान न देती। यदि कोई मज़ाक–मस्ती करता तो भी वह सहन कर लेती थी क्योंकि वह सोचती है–

> **"लड़के की शिकायत पंचायत में करुँगी तो कौन मेरी बात सुनेगा ? सरपंच लड़के का मामा या चाचा ही होगा। शिकायत करने से मेरी इज्जत जाएगी, बदनामी होगी।"**[63]

दलित वर्ग की होने से कंकु को इंसाफ न मिलने का विश्वास था। इसलिए वह अपने भाग्य को कोसती और सिर नीचा करके अपने रास्ते चल पड़ती। गाँव के एक राजपूत मोहनसिंह का इकलौता पुत्र भरतसिंह की गिनती मंदबुद्धी के लोगों में होती थी। निम्न वर्ग लोग उसे आता देख एक ओर हट जाते थे। दलित युवतियों को मेले में लेजाकर उनकी आबरु से खिलवाड़ करना उसका शौक था। कंकु को देखकर

उसे पाने की लालसा बढ़ने लगी थी। जब कंकु उसके हाथ नहीं लगती तो हाथ मसलकर रह जाता है।

एक बार कंकु नवरात्री में अन्य युवतियों के साथ रास्ते की सफाई कर रही थी। अनजाने में उसका झाड़ू भरतसिंह के बैल को स्पर्श कर जाता है। बस आग बबूला होकर भरतसिंह कहता है–

"साली, भंगण तूने मेरे बैल को स्पर्श कर दिया।"64

भरतसिंह, कंकु को पा न सका था, इसलिए उसका बदला वह कंकु का अपमान करके लेना चाहता है। वह कंकु को बुरी तरह लकड़ी से पीटता है, और कंकु तड़पती रोने लगती है। कड़वी माँ को समाचार मिलता है और वह दौड़ते हुए वहाँ आती है। कंकु उससे रोते हुए कहती है–

"माडी, हमने कौन से जन्म में पाप किया है कि इन राजपूतों के गाँव में पड़े हैं।"65

कड़वी माँ कहती है–

"होगा ! बेटी, ऊपर बैठा हुआ मेरा प्रभु सब कुछ देख रहा है। उसके घर देर है अंधेर नहीं।"

कंकु कहती है–

"माडी, मैंनें ऐसा कौन–सा अपराध किया था कि मुए ने मुझे जानवरों की तरह पीटा और अधमरा कर दिया ! कहाँ है तुम्हारा भगवान। क्या उसे भी कुछ दिखाई नहीं देता ! अरे ! माडी मैंनें उसे कहाँ स्पर्श किया था ! गलती से मेरी झाड़ू उसके बैल को छू गई थी! उसमें उसने मेरी यह हालत कर दी ! मेरी अंबामाँ उसे देखलेगी..... ।"66

अपने दलित होने का दुख कंकु को था। वह नहीं समझ पाती है कि उनके साथ ऐसा अमानवीय व्यवहार क्यों किया जाता है ? ईश्वर ऐसा अत्याचार देखकर भी क्यों कुछ नहीं करते हैं। अस्पृश्यता का दुख उसे सदैव ही झेलना पड़ा था। इसीलिए वह भरतसिंह के खेत में मजदूरी करना नहीं चाहती थी, किन्तु पेट आखिर उसे मजबूर कर देता है।

ईश्वर ने भरतसिंह को दण्ड आखिर दे ही दिया एक बार दोपहर को पेड़ के नीचे बैठे हुए भरतसिंह को जहरीला साँप डँस लेता है। उसकी माँ अपने इकलौते बेटे की गंभीर हालत देखकर तड़प उठती है। गाँव के वैध सारा उपचार करके हार जाते हैं। स्थिति ऐसी हो जाती है कि उसका बचना मुश्किल लगने लगता है। तभी एक व्यक्ति भरतसिंह की माँ को बताता है कि हमारे दलितवास में कड़वी माँ की पोती कंकु ने कई लोगों की जान बचाई है, उसे जहर चूसकर निकालना आता है। दूर खडी कंकु को काशीमॉ हाथ पकड़कर भरतसिंह के पास लाकर खड़ा करते हुए कहती है–

"बेटी, मेरा बेटा मर रहा है और तू बिल्कुल अनजान बनकर ऐसे एक कोने में खड़ी है। अरे। बेटी तू किसका इंतेज़ार कर रही है। यदि तू मेरे

भरत का जहर उतार कर उसे खड़ा कर देगी तो मैं तुझे बेटी, सोने से लाद दूँगी।''67

जीवन भर अस्पृश्यता का पालन करने वाली काशीमाँ बेटे के प्राणों की रक्षा के लिए यह भेदभाव स्वयं भूलकर कंकु के समक्ष सहायता माँगती है। भरतसिंह से घोर घृणा करने वाली कंकु काशी माँ के आँसुओं के समक्ष पिघल जाती है और भरतसिंह का जहर अपने मुँह से चूसकर निकालती है। थोड़ी देर में भरतसिंह को होश आ जाता है। वह उठ खड़ा होता है और लोगों की भीड़ देखकर उन्हें डाँटने लगता है। अपने बेटे को स्वस्थ देखकर काशी माँ का ध्यान कंकु की ओर जाता है, जिसने उसे जीवनदान दिया था। खुशी से वह अपना दस तोले का हार कंकु को भेंट में देती है। भरतसिंह यह देखकर कंकु को डाँटने लगता है, और कहता है कि यह हार मुझे दे दो। अपने माता–पिता को भी भला–बुरा कहने लगता है। पिता मोहनसिंह जानते हैं कि उसकी यह आवाज़ जो निकल रही है वह कंकु का उपकार है उस पर।

कंकु स्वयं हाँफते–हाँफते आकर महाकाली का रुप धारण करके उसके सामने हार फेंकते हुए कहती है–

''फट रे भूंडा । (दूर हट मूर्ख) तूझे तो मरने देना था, बेशर्म तेरा हार तू ही रख किसी रोज तुझे गले में फाँसी खाने के लिए काम में आएगा। तूझे। छूकर तो मेरा जीवन अस्पृश्य हो गया। उस दिन तो मैंनें तेरे बैल को स्पर्श किया था। आज तेरे अंगूठे को चूस–चूस कर तेरा पूरा शरीर अस्पृश्य किया है। बुरा लगा हो तो इस हँसिए से अपना अंगूठा काटकर तेरे खेत में उस कुएँ में फेंक कर गंगा में डूबकी लगा आना।''68

उपकार का बदला अपकार में पाकर कंकु अबला में से सबला का रुप धारण करके नारी शक्ति का परिचय देती है। वह भरतसिंह को यह ऐहसास दिला देती है, कि उसे यह जीवनदान एक अस्पृश्य लड़की ने दिया है, यदि उसे स्वीकार है, तो उसे अपने व्यवहार पर शर्म आनी चाहिए। कंकु का उपकार भरतसिंह के माता–पिता स्वीकार करते हैं किन्तु भरतसिंह अहंकारी पुरुष है मानवता का पाठ उसे कंकु सीखाती है, कि सबसे ऊपर यदि कोई धर्म है, जाति है, तो वह मात्र मानवता है।

प्रस्तुत कहानी में मनोवैज्ञानिक धरातल पर खरी नहीं उतरती। कंकु उस व्यक्ति को जीवनदान देती है, जिसने उसे पशुओं की भाँति पीटा था। वही व्यक्ति कंकु को दोबारा अपमानित करता है। यह बात कुछ अलग लगती है। भरतसिंह को कोई पश्चाताप करते नहीं दिखाया गया है, उसका अहंकार शुरु से अंत तक वैसा ही बना रहता है, जबकि कंकु शुरु से अंत तक अपमानित होते दिखाई गई है। कहानी में अस्पृश्यता के कारण दलितों की दयनीय स्थिति का वर्णन किया गया है। गरीबी, लाचारी के कारण दलित सवर्णों द्वारा किए गए अत्याचार को सहने के लिए विवश हैं। ईश्वर के अतिरिक्त उनकी प्रार्थना सुनने वाला कोई नहीं है।

4. <u>कदाच (शायद) –स्वप्निल महेता</u>

प्रस्तुत कहानी में दलित अमला और जड़ी की झोंपड़ी में कोई आग देता है। दोनों बेघर होकर दुःखी हो जाते हैं। एक तो गरीबी उस पर सिर से छाया भी छीन ली गई। ऐसे अवसर पर गगुभा जो कि गाँव के चुनाव में खडे हुए थे, मौके का फायदा

उठाते हैं। अमला और जड़ी गगुभा के अत्याचारों को सहते आए थे किन्तु आज उनका रुप बदला हुआ था। आज गगुभा अमला और जड़ी का नया घर बनवाने और उनकी मदद करने के लिए आते हैं। वास्तव में गगुभा अपने विरोधी चुनाव में खड़े मास्टरजी को इस झोपड़ी जलाने का जिम्मेदार ठहराना चाहते हैं, ताकि लोगों की दृष्टि में वे गिर जाएँ साथ ही अमला को घर बनवाकर देते हैं ताकि गाँववालों की नज़रों में ऊँचा और महान व्यक्ति सिद्ध हो सकें।

अमला तो गगुभा के इस नए अवतार से बड़ा आश्चर्यचकित रह जाता है क्योंकि छोटी–छोटी बात पर दलितों को अमानवीय रुप से पीटने वाला गगुभा आज बड़ी विनम्रता से, प्रेम से, बड़े भाई की तरह उससे बातें कर रहा था। अमला उसकी मीठी–मीठी बातों में फँस न जाए इसलिए जड़ी उसे एक कोने में ले जाकर कहती है–

> **"मैं कहती हूँ, इस मुए की बात में न आना।"**69

जड़ी ने अपने जीवन में गगुभा जैसे बहरुपिये को पहचानने का नज़रिया सीख लिया था। वह जानती थी कि बिना स्वार्थ के, ये कभी किसी की मदद तो दूर, दो मीठे बोल भी नहीं कह सकते। इसलिए वह नहीं चाहती थी, कि अमला गगुभा की बातों में आए, किन्तु अमला तो पाले हुए कुत्ते की भाँति मदद के लोभ में गगुभा के पीछे–पीछे चल देता है। पति की अनुगामिनी जड़ी मजबूरन अमला के साथ चला देती है।

गगुभा को चुनाव जीतने के लिए एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण मिल जाता है कि उसने अमला और जडी की दयनीय स्थिति देखकर उनकी मदद की है। लोग मास्टरजी से नाराज़ हो जाते है और गगुभा से प्रसन्न। गगुभा अपने षडयंत्र में सफल हो जाता है और चुनाव में उसकी जीत होती है।

गगुभा की बुरी दृष्टि जड़ी पर रहती है किन्तु उसे पाने का अवसर गगुभा को नहीं मिल पाता। जड़ी भी गगुभा के बुरे चरित्र को जानती है। वह उससे दूर ही रहना चाहती है। अमला इन बातों से अनभिज्ञ गगुभा के उपकारों के बदले उसे महान समझने लगता है वह गगुभा से कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहता है–

> **"मेरे दाता, मेरे पालनहार, आपने तो हमें छत्रछाया दी है। यह अमला आज से आपका गुलाम है।"**70

गगुभा तो अमला का उपयोग कर रहा था, चुनाव जीतने के लिए किन्तु अमला उस षड़यंत्र को उसका उपकार समझने की भूल करता है। वह जड़ी से भी कहता है–

> **"देखी जड़ी यह गगुभा जैसा बड़ा आदमी, अपने सगे भाई से भी अधिक मुझे महत्त्व देता है।"**71

जिस गगुभा की बुरी नज़रों से जड़ी बचती थी, उसी की तारीफ अमला करता है। एक बार अमला को बूरी तरह पीटने वाला यही गगुभा था, जो आज रुप बदलकर उसकी मदद कर रहा था। जडी को अमला की फिक्र थी साथ ही अपनी आबरु की भी।

चुनाव में हारे हुए मास्टरजी का बेटा अपना बदला लेने के लिए अमला की झोंपड़ी जला देता है। जड़ी और अमला एक बार फिर बेघर हो जाते हैं। इस बार उन्हें रोना आता है, किन्तु रो नहीं पाते। हतप्रभ दृष्टि से जलती झोंपड़ी को देखते रह जाते हैं।

सुबह होते ही उन्हें विश्वास था कि गगुभा उनकी खोज–ख़बर लेने अवश्य आएँगे। दोपहर तक जब कोई नहीं आया तो जड़ी की सलाह पाकर वह गगुभा के घर जाता है। गगुभा को चुनाव में अमला और जड़ी ने मदद की थी इसलिए उन्हें विश्वास था कि घर जल जाने से एक बार फिर वे उनकी मदद करेंगे। गगुभा ने स्वार्थवश उनकी मदद की थी इसलिए आज वह उन्हें आश्वासन देने भी नहीं आया था।

गगुभा की बुआ के बेटे को अमला कहता है कि, गगुभा से कहो कि अमरतभाई (अमला) आये हैं। इस पर वह कहता है–

"अरे साले अमला तू भला कब से अमरतभाई हो गया साला नीच।"[72]

अमरा अमला का अपमान करता है और उसे धक्का मारता है। वह दूर जाकर गिर जाता है। यह दृश्य गगुभा दूर खड़े होकर देखते हैं। और हँसते हैं। अमला अपना आदमी है यह कहकर हँसते हुए चले जाते हैं। अमला को जितना दर्द उसके धक्का मारने से नहीं लगा था। उससे कहीं अधिक चोट उसके दिल पर गगुभा के इस बदले हुए व्यवहार से लगी थी। रात को जली झोंपड़ी से जो पीड़ा उसे नहीं हुई थी, वह अभी हो रही थी, वह चाहकर भी रो नहीं पा रहा था। आखिर उसे रोना आ ही जाता है, निराश होकर वहाँ से वह जाने लगता है अचानक वह पीछे मुड़कर देखता है, कि शायद (कदाच) गगुभा उसकी एक बार फिर मदद कर दें। लाचार अमला के भोले मन को अभी–भी गगुभा से आशा है।

प्रस्तुत कहानी में गरीब, लाचार दलित को थोड़ी सी मदद करके स्वार्थी गगुभा का षड़यंत्र सफल हो जाता है। दलितों के मन में सवर्णों के प्रति अच्छे व्यवहार से आशा की एक किरण नज़र आती है। गगुभा गिरगिट की तरह रंग बदलता है। जडी की शंका सही साबित होती है। कहानी का अंत मेलो–ड्रामेटिक है। कहानी का शीर्षक 'शायद'(कदाच) अमला के मन की आशा का प्रतीक है, जो उचित है।

5. 'रोकड़ी'–चंद्राबहन श्रीमाली

'रोकड़ी' कहानी की लेखिका चंद्राबहन श्रीमाली स्वयं सांसद रह चुकी हैं। प्रस्तुत कहानी में उनके राजकीय अनुभवों का उपयोग किया गया हैं ऐसा लगता है। कहानी में दो नारी पात्र हैं, रंभामा और यशोदा स्त्री आरक्षण आने पर सवर्ण रंभामा को टिकिट मिलती है। भारी संख्या से उसे वोट मिलते हैं और वह जीत जाती है। चुनाव में जीतने के पश्चात् रंभाबहन का बफादार ड्राईवर अर्थात् यशोदा का पति बेबो एक्सिडेट में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। उसकी मृत्यु के बाद पंचायत के रहेम पर उसे एक स्कूल में पानी पिलाने की नौकरी मिल जाती है। यह स्कूल उसके घर से बहुत दूरी पर था, जिससे याशोदा को वहाँ आने–जाने में मुश्किले उठानी पड़ती थी। गंगाराम नामक व्यक्ति यशोदा को हमेशा छेड़ता था, जिससे परेशान होकर यशोदा अपना तबादला अपने ही गाँव में करवाने के लिए रंभाबहन से शिफारिश करती है, किन्तु रंभा बहन उसकी ओर ध्यान नहीं देती।

रंभाबहन आखिर यशोदा का तबादला तो कर देती है, किन्तु रिश्वत के तौर पर उससे एक–दो हज़ार रुपये प्राप्त करना चाहती है। रंभाबहन की जीप का नया ड्राइवर गंगाराम यशोदा नौकरी पर से लोटती है, तब रास्ते में उसे जीप में बैठाकर मौके का फायदा उठाकर उसे अपने जाल में फँसाना चाहता है। रंभाबहन का पति भी यशोदा

से आकर्षित होता है, यहाँ से कहानी में मोड़ आता है। रंभा का पति उसे यशोदा का तबादला करवाकर अपने घर में उसे बुलाने का प्रस्ताव रखता है। वह सोचता है कि–

> **"यदि वह अपने घर में आती–जाति रहेगी तो एक दिन मेरे भी काम में आएगी।"**73

यह सुनकर रंभाबहेन को अपने पति के बुरे विचारों के विषय में शंका हो जाती है। रंभाबहन सोचती है, कि यदि यशोदा तबादला कर दिया जाय तो वह नज़रों से दूर रहेगी। न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसूरी। चतुर रंभा बहन पानी बहे उससे पहले ही क्यारी बना देती है। दूसरी ओर एक विधवा स्त्री यशोदा का काम हो जाए तो उसका भी पुण्य रंभा को मिलेगा। कहानी के अंत में रंभाबहन द्वारा कहे गए शब्द बड़े ही मार्मिक हैं जो कहानी को नया परिणाम देते हैं–
रंभाबहन कहती है–

> **"वहं सुखी रहेगी तो मुझे तो पुण्य मिलेगा। किसी का भला हो तो रुपया भले जले। किसी के गूँगे आशीर्वाद मिले वह एक रोकडी(धन) ही कहा जाएगा न।"**74

यहाँ 'रोकड़ी' शब्द में रहे व्यंग्य को पाठक सरलता से भाँप जाते हैं। एक्सिड़ेट में रंभाबहन को तो खरोंच भी नहीं आई थी किन्तु उसे देखने बडे–बड़े लोग हाजिर होते हैं, किन्तु दलित की मौत पर भी कोई उसके परिवार को सांत्वना देने नहीं पहुँचता। यहॉ अस्पृश्यता सवर्णों को मानवता के धर्म से पीछे धकेल देती है। यशोदा एक अछूत स्त्री है, दलित है, इसलिए उसके दिए हुए पानी को कोई पीना नहीं चाहता। कहानी में राजनीति के छल–छद्‌भ पर भी बखूबी प्रकाश डाला गया है।

6. 'गोरुचंदन'–भी.न.वणकर

प्रस्तुत कहानी में दलित नारी रामीबहन की मनोसंवेदना की प्रस्तुती की गई है। रामीबहन ने अपने पुत्र लालिया का बलिदान करके लकवे के रोग से पीड़ित बच्चे की रक्षा की थी। सवर्ण रुखी उससे कहती है–

> **"हम कहाँ अलग हैं रामली तेरा दूध और दवा पिला दे, अब क्या बाकी रहा है तो ले कचरा को थोड़ा.......थपथपाकर, मेरी बहन, मेरे लिए..... भगवान तेरा भला करेगा, ऐसा करने से यदि कचरा ठीक हो जाएगा तो बस ! तेरा उपकार।"**75

सवर्ण रुखी की प्रार्थना रामीबहन स्वीकार लेती है और एक जीव को बचाने के लिए एक दलित नारी महासमर्पण करती है। यह प्रसंग कहानीकार ने समाज की स्वार्थभरी नीति को भी प्रकट किया है, जिसमें स्वार्थ के समय यह समाज को जाति का कोई भेदभाव नहीं असर करता, किन्तु बाद में यह सभी जारी रहता है। रामीबहन कचरा को स्तनपान कराती है, जबकि उसके सामने झूले में पड़ा हुआ लालिया बाहर निकलने का प्रयत्न करने लगता है। एक ओर छःमहीने से भूखा कचरा रामीबहन का हृदय अमृतपान कर रहा था। दूसरी ओर उसका स्वयं का पुत्र भूख से तड़प रहा था, लालिया अपने अधिकार को छिनते हुए नहीं देख पा रहा था। अचानक झूले में से

लालिया गिर जाता है और लालिया की एक चीख उसकी अंतिम चीख बन जाती है। रामीबहन की चीख निकल पड़ती है। कचरा को जीवनदान उन्होंने दिया, किन्तु अपने प्रिय पुत्र का बलिदान देना पड़ा। यह समग्र प्रसंग गहरे करुण रस में से गुजरता है। वाचक की आँखों में आँसु आ जाते हैं।

वर्षों बाद आज रामी बहन शहर से अपने गाँव लौटती है। कचरा के प्रति रामीबहन को अत्यंत स्नेह था। कचरा रामीबहन से शहर से क्लर्क की भरती के लिए फोर्म मंगवाता है। यह घटना प्रक्रिया भी कहानीकार ने सूक्ष्म निरीक्षण के साथ प्रस्तुत की है, जिसमें कचरा रामीबहन को फोर्म के रुपये देता है। यह रुपये वह ऊँचा हाथ करके दूर से देने का प्रयास करता है, इसी समय घटना प्रसंग बदलता है। कानजी नामक दलित युवक कचरा को संबोधित करते हुए कहता है कि उसका दूध गिर रहा है। इस पर कचरा कानजी को दूध का स्पर्श न करने की सलाह देते हुए उसका अपमान करता है। इस घटना से कचरा के प्रति प्रेम क्षणिक समय में ही रामीबहन के ह्रदय में से समाप्त हो जाता है। एक दलित जाति के कारण बिना अपराध के इतना अपमान ? रामीबहन के दिलोदिमाग में घमासान युद्ध होने लगता है। कचरा का यह व्यवहार रामीबहन के ह्रदय को गहरा आघात पहुँचाता है। रामीबहन की बस आ जाने पर वह उसमें बैठ जाती है और अतीत की यादों में खो जाती है। जिस अतीत में उसने अपने पुत्र का बलिदान देकर कचरा को जीवनदान दिया था।

बस रुकने पर रामीबहन वर्तमान में लौट आती है। घर पहुँचकर लालिया का फोटो देखकर रामीबहन सोचती है कि लालिया का बलिदान व्यर्थ गया। उदास नज़रों से लालिया के फोटो को एक–टक निहारने लगती है और कह उठती है–

"इससे अच्छा होता कि मैंनें उसे गोरुचंदन न पिलाया होता तो ?"76

यहाँ चरसीमा देखी जा सकती है। रामीबहन के ह्रदय को कितनी ठेस पहुँची होगी उसकी तो कल्पना ही की जा सकती है। कचरा का व्यवहार मनुष्य के मन को झकझोर देने वाला है। यहाँ वराध के रोग के इलाज के रुप में उपयोग किया जाने वाला 'गोरुचंदन' सवर्ण और दलित समाज के बीच रही हुई अस्पृश्यता की खाई को नहीं भर सकता।

कहानीकार ने एक घटना को केन्द्र में रखकर कहानी को बहुत सूक्ष्मतापूर्वक सजाया है। संपूर्ण कहानी में मानवीय भाव, अवहेलना, करुणा, नफरत, ममत्व, मातृत्व और बलिदान जैसे भावतत्त्व से निखार आ गया है। फ्लेशबेक का उपयोग करके कहानीकार ने रामीबहन के वर्तमान और भूतकाल को एक सूत्र में बाँध कर पाठकों को अंत तक बाँधने में सफलता प्राप्त की है।

7. 'एबोर्शन'–हरीश मंगलम्

प्रस्तुत कहानी **'एबोर्शन'** में हरीश मंगलम् ने दलित शिक्षित नारी की समस्या को प्रस्तुत किया है। कहानी की नायिका इन्दु का विवाह दिनेश से होता है। इन्दु गर्भवती बनती है किन्तु पी.टी.सी. कोलेज के नियमानुसार इन्दु होस्टल में नहीं रह सकती थी। ऐसी स्थिति में उसे पहले गर्भ का एबोर्शन करवाना पड़ा।

पी.टी.सी. के बाद इन्दु और दिनेश दोनों को शिक्षक की नौकरी मिल गई। उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी हो गई। दूसरी बार इन्दु गर्भवती बनती है। डॉक्टर की सलाह के अनुसार वह अपना पूरा ध्यान रखती है। ऐसी स्थिति में उसके रिश्तेदारों में से

कोई उसकी मदद के लिए नहीं आता। इन्दु को डॉक्टर बेड रेस्ट के लिए कहते है तब दिनेश घर का काम और नौकरी दोनों करने में परेशान हो जाता है। इन्दु की स्थिति खराब हो जाती है और दूसरा एबोर्शन कराया जाता है। इस तरह चार–पाँच बार एबोर्शन हो जाता है किन्तु इन्दु माँ बनने का सुख नहीं देख पाती।

एक प्रसिद्ध डॉक्टर से इन्दु का इलाज कराया जाता है। डॉक्टर की सलाह के अनुसार इन्दु को गर्भ ठहरने पर पूरा आराम मिलना चाहिए। दिनेश फिर से चिंता में पड़ जाता है। इन्दु पति की समस्या समझती है, किन्तु लाचार है। इस समस्या के समाधान के लिए दोनों तय करते हैं कि घर के कामकाज के लिए एक नौकरानी रख ली जाए। पास में ही एक रबारी की लड़की काम करती थी। उसे काम के लिए रखा गया। ढाई महिने के बाद उसने काम छोड़ दिया। इन्दु की प्रसूति को अभी ढाई महिने बाकी थे। दिनेश फिर परेशान हो जाता है।

वास्तव में रबारी की लड़की इसलिए काम छोड़ देती है, क्योंकि उसे पता चल जाता है कि इन्दु और दिनेश दलित जाति के हैं। गर्भवती इन्दु की स्थिति ठीक नहीं थी। ऐसी अवस्था में न तो उसका परिवार उसकी मदद करता है न ही उसे कोई नौकरानी ही मिलती है। दिनेश के अलावा कोई उसका सहारा नहीं बनता। बड़ी मुश्किल से एक बंजारे की लड़की काम पर आना शुरु करती है। इन्दु और दिनेश उस लड़की को अपने ही परिवार के सदस्य की तरह रखने लगे। लड़की का काम अच्छा होने से दोनों निश्चिंत हो गए।

इन्दु की प्रसुति को आठ दिन बाकी थे, उसी समय नौकरानी की माँ मोंघी को इन्दु के दलित होने का पता चलता है। मोंघी अपनी बेटी को काम पर जाने से मना कर देती है। मोंघी का कहना था कि–

> **"भले ही वे बड़े साहब हों, पर नीची जाति कही जाएगी। उसका काम नहीं हो सकता। ये तो पूरे–इसाई हैं।"** [77]

एक बंजारीन जिसके स्वयं के सिर पर छत न हो ऐसी स्त्री भी अस्पृश्यता, रुढ़िवाद को अधिक महत्त्व देती है। मानवता से भी ऊँची अस्पृश्यता बन जाती है। भले ही गरीबी में ये लोग जी लें किन्तु दलित के घर काम करना उनकी दृष्टि में उचित नहीं था। यहाँ लेखक ने अस्पृश्यता का प्रश्न सवर्ण के समृद्ध व्यक्ति से न कराकर एक गरीब बंजारन से करवाया है। हमारे समाज में अस्पृश्यता सिर्फ धनी–सम्पन्न सर्वणों में ही नहीं गरीब, अस्थाई जीवन जीने वाले भी इस भेद–भाव को मानते दिखाए गये हैं।

अंत में इन्दु एक पुत्र को जन्म देती है दिनेश अत्यंत प्रसन्न होता है किन्तु जब उसे इस भेद–भाव का पता चलता है, तो जैसे उसकी सारी खुशी गायब हो जाती है। वह गहरी सोच में डूब जाता है।

एक पढ़ी–लिखी इन्दु को दलित होने के कारण ऐसी स्थिति में किसी की सहायता नहीं मिलती, जब उसे सबसे ज्यादा ज़रुरत थी। अधिक रुपया देने के बावजूद कोई नौकरानी उनके घर काम नहीं करना चाहती। इन्दु का अच्छा व्यवहार, संस्कार, प्रेम, शिक्षा, शिक्षिका होना कोई मायने नहीं रखता क्योंकि वह दलित है, उसके सारे गुण, दोष बन जाते है। इससे पता चलता है कि एक दलित भले ही उच्च पद पर पहुँच जाए या धनी बन जाए किन्तु वह दलित होने से कभी वह मान–सम्मान, प्रेम नहीं पा सकता। अस्पृश्यता उसका पीछा नहीं छोड़ती।

8. 'गंगामाँ'–दलपत चौहान

कहानीकार दलपत चौहान अपनी कहानी **'गंगामाँ'** के विषय में लिखते हैं कि–

> **"गंगामाँ कहानी की नायिका गंगामाँ हमारे गाँव के नज़दीक के गाँव की है। अब वे नहीं हैं। यह कहानी मैंनें उनके मुँह से सुनी थी। उनकी आँखें खून से भरे हुए (थीजेला जमे हुए) आँसु टपके ही नहीं, आँखों में भरे ही रहे, कितनी वेदना थी उन रुके हुए खारपन में।"**78

प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने सवर्णों की उपयोगितावादी व्यवहार पर कटाक्ष किया है, जो आवश्यता होने पर दलितों का जी भरकर उपयोग करते हैं और फिर अस्पृश्यता का बहाना करके उनसे मुँह फेर ले ते हैं। उनकी ऐसी मानसिकता किस हद तक विकृतरुप धारण कर सकती है यह 'गंगामाँ' कहानी में देखा जा सकता है। 'गंगामाँ' कहानी की नायिका हैं, जो एक दलित स्त्री हैं।

कहानी की शुरुआत में मुखिया रायसंग के पुत्र पथु की पत्नी बीमार है। तीन–चार दिनों से प्रसूती की पीड़ा से तड़प रही है किंतु उसे उस पीड़ा से मुक्ति नहीं मिलती। कई दाई आई लेकिन कोई कुछ नहीं कर पाया। अंत में न चाहते हुए भी दलित दाई गंगामाँ को बुलाया गया। गंगामां दाई के कार्य में कुशल थीं और ऐसे अवसर पर एक स्त्री होने के नाते भी वे प्रसूती में तड़पती महिला की मदद करने दौड़ पड़ती थीं। गंगामां बिना विलंब किए आ जाती हैं। मुखिया गंगामां के आने से पूर्व ही वह किस तरह से आए, ताकि घर अशुद्ध न हो, इसलिए अपनी बेटी को समझा देता है। घर से वे सभी वस्तुएँ हटा दी जाती हैं, जो अशुद्ध हो सकती थीं। गंगा माँ पर मुखिया की पुत्री राजी अपनी नाक में पहने हुए नथ को एक कटोरे में रखकर सोने के पवित्र पानी से गंगामा पर छींटे डालती है। इससे पहले भी दो बार पथु की पत्नी का गर्भपात हो चुका था, गंगामां अपने अनुभव की सूज–बूझ से बच्चे को जन्म दिलवाती हैं। माँ–बेटे गंभीर स्थिति से सुरक्षित बच जाते हैं। घर में आनंद का वातावरण छा जाता है, किन्तु इस अनोखी खुशी को उन्हें देने वाली गंगामाँ के जाने के पश्चात् घर को फिर से पवित्र किया जाता है। स्वार्थी सवर्ण अपने काम के पश्चात् गंगामाँ का अहसान भूल कर अस्पृश्यता की धारणा को नहीं भूल पाते। बहू और पोते को भी नहलाया जाता है उन्हें भी सोने के पानी से शुद्ध किया जाता है। वे सभी स्त्रियाँ अपने घर नहाने चली जाती हैं, जिन्होंने गंगामॉ का स्पर्श किया था। मुखिया का पूरा घर पवित्र किया जाता है, ताकि गंगामाँ के स्पर्श की अशुद्धता दूर हो सके। गुदड़ी, चादर, साड़ी आदि सभी चीज़ें घर से बाहर निकालते हुए मुखिया की पत्नी कहती है–

> **"राजी.....ओ.....राजी यह गुदड़ी, चादर, साड़ी उस समझदार बुढ़िया को बुलाकर दे देना।"**79

सवर्णों की यह अंधश्रद्धा जिसमें, यह कहा जाता है, कि दलित का स्पर्श होने पर यदि स्वर्ण के पानी से छींटे लिए जाएॅ तो वह शुद्ध हो जाता है। ऐसी वर्षों पुरानी, खोखली, सड़ी हुई अंधश्रद्धा को यहाँ देखा जा सकता है। जिस स्त्री ने उन्हें इतनी बड़ी मुसीबत से उबारा वह स्त्री उनके लिए महान होकर भी अस्पृश्य थी इसलिए हीन समझी जाती है।

कहानी में गंगामां की बहू पर मुखिया का बेटा पथु बलात्कार करता है, जिससे पुत्रवधु आत्महत्या कर लेती है। यह करुणता है दलितों की जिसमें उपकार का बदला अपकार से मिलता है। गंगामॉ यह देखकर व्यथीत हो जाती हैं। अस्पृश्यता का सर्प दलित स्त्रियों को छू नहीं सकता हैं। किन्तु उस पर बलात्कार कर सकता है। यह कैसी विडंबना है।

कहानी में गंगामां की पुत्रवधु पर पथु द्वारा किया जाने वाला बलात्कार उसके बाद पुत्रवधु की आत्महत्या यह कहानी का अंत मेलोड्रामेटिक लगता है। यदि गंगामाँ के जाने के पश्चात् घर को शुद्ध करने की बात पर कहानी का अंत बताया जाता तो यह अधिक उचित होता, क्योंकि पथु के चरित्र पर कहानी की शुरुआत में या मध्य में कहीं पर भी उसकी चरित्रहीन होने की बात पर प्रकाश नहीं डाला गया है और अंत में उसके ऐसे रुप को अचानक प्रस्तुत किया गया है।

हरीश मंगलम् द्वारा रचित 'दायण' कहानी का स्मरण यहाँ पर होता है। दोनों कहानी में अस्पृश्यता केन्द्रस्थान पर है किन्तु परिस्थिति, कथन, वर्णन आदि में अंतर है। गंगामाँ का चरित्र भी 'दायण' की बेनी माँ की तरह उदार, शांत और सेवाभाव से भरपूर है। गंगामाँ उदार दिल की हैं इसका परिचय तब मिलता है जब पथु की बहू की प्रसूति के पश्चात् वह भगा से वार्तालाप करती है–

> **"तो तुम्हारी साड़ी ये रही" कहकर भगा हँसने लगा "क्यों भाई ऐसा कह रहा है ? मुखिया जैसा मुखिया है न..." "गंगामाँ, वह तो मुखिया है, किसने मना किया, परंतु तुम्हारी साड़ी ?" "होगी, तो, देनी होगी तो देंगे"**80

गंगामाँ के उदार चरित्र के समक्ष सवर्ण मुखिया, पथु आदि पात्र छोटे नज़र आने लगते हैं। गंगामाँ का उपकार भूलकर उसकी पुत्रवधु पर बलात्कार करके गंगामाँ को दुःख पहुँचाता है पथु। कहानी में कहानीकार ने सवर्णों की दलितों के प्रति अस्पृश्यता की मानसिकता पर प्रकाश डाला है। कहानी में आंचलिक शब्दों के प्रयोग से पात्रों को जीवंत रुप मिल गया है।

9. 'रेड कार्पेट'–विट्ठलराय श्रीमाली

विट्ठलराय श्रीमाली की प्रस्तुत काहनी की नायिका प्रधान है। दलितों के समाज में आज कई परिवर्तन आए हैं, उस परिवर्तन को सवर्ण समाज किस रुप में स्वीकार कर रहा है, इसका चित्रण प्रस्तुत कहानी में देखा जा सकता है।

कहानी की शुरुआत में सपूर्ण गाँव को उत्साह के साथ फूलों से सजाया जा रहा है। स्त्री–पुरुष, बच्चे–बूढ़े सभी लोग मौजूद हैं। आज गॉव के दलित परिवार की लड़की जो पढ़–लिखकर कलेक्टर बन गई है, वह गाँव में सम्मान के लिए आमंत्रित की गई है। उसके स्वागत में सभी गाँव वासी दलितों के प्रति मन में रहे बुरे भाव को भूलकर उसका स्वागत करने के लिए तैयार है।

कहानी में नरभेराम पुजारी जो महादेव के मंदिर में रहता है। एक समय उसने इस दलित कन्या का अपमान करके उसे मंदिर से बाहर निकाल दिया था। तब शैली पूजा की थाली उस पूजारी नरभेराम के सिर पर मारकर वहॉ से चली जाती है। किशोरावस्था में ही जो हिंम्मत उसके पास थी, वही उसे कलेक्टर के पद तक ले जाती है। शैली माध्यमिक शिक्षा आश्रम में प्राप्त करके आई.ए.एस की परीक्षा पास करके

कलेक्टर के उच्च पद को प्राप्त करती है। यहाँ नायिका का दृढ़ मनोबल प्रकट होता है। पूजारी नरभेराम को अपने मित्र देवशंकर से जब पता चलता है कि इस मंदिर की जीमन और मंदिर का अधिकार उसे शैली के कारण वापस मिल पाया है, तो वह पश्चाताप में डूब जाता है।

पूजारी नरभेराम के प्रति नायिका के मन में अब अपमान का कोई डंख नहीं था। किन्तु पूजारी कृतज्ञ भाव से कलेक्टर शैली का स्वागत गॉव और मंदिर में करके, उसके हाथों पूजा–आरती करवाकर अपना प्रायश्चित करता है। गाँव के लोगों के बीच उसका सम्मान किया जाता है। यहाँ उच्च पद के कारण लोगो में समरसता का भाव देखा जा सकता है। शैली के सम्मान समारोह में मंदिर का पूजारी कहता है–

> **"आज गाँव की मिट्टी में से पैदा हुई यह बेटी स्वबल से पढ़कर आज इतने ऊँच पद पर है यह गाँव के गौरव की बात है। गाँब ने इस बेटी का सम्मान किया यह उचित किया है। यह देखकर गाँव की अन्य बेटियाँ भी पढ़कर पुरुषार्थ करके आगे बढ़ेगी। गाँव के मुखिया और अन्य सज्ज़नों का भी मैं आभारी हूँ। गाँव में ऐसी अनेक शैलबालाएँ जन्म लें ऐसा आशीर्वाद देता हूँ।"**[81]

पुजारी के वचन सुनकर अन्य मौजूद लोगों में दिल में रहा दलित भाव निर्मूल होता है। साथ ही अन्य दलित युवतियों को भी प्रोत्साहन मिलता है। शैली इस सम्मान को पाकर खुशी से रो पड़ती है और कहती है–

> **"आज मेरी आँखों में सुख के आँसू समा नहीं रहे हैं। मैं कल्पना नहीं कर सकती थी कि पूरा गाँव एक दलित की बेटी का इतना भव्य सम्मान करेगा। मुझे इस बात की खुशी है कि गाँव ने मुझे स्वीकार कर लिया है। गाँव की बेटी बना दिया है। भारत के सभी गाँव में यही भावना प्रगट हो जाए तो गाँधीजी का सच्चा स्वराज का सपना सिद्ध हो जाए। वर्ग विग्रह और वर्ग भेद अपने आप मिट जाए। गाँव के ऐसे प्रेम से मैं आज गद्‌गद् हो गई हूँ। इस गाँव का ऋण मैं कब चुका पाऊँगी ?"**[82]

यहाँ मोहन परमार की 'बरसाद' कहानी जैसी घटना याद आती है, जिसमें कहानी का नायक कलेक्टर के पद पर नियुक्त होकर अपने गाँव आता है। तब पडोसी और अन्य लोग उसे सामान्य युवक के रुप में देखते है। उसका शिक्षक भी उसे मान से नहीं देखता बल्कि मामलतदार से कहता है कि यह तो स्कूल में अन्य विद्यार्थियों की पेन–पेंसील चोरी कर लेता था। तब उसका अहं घायल होता है। उसे लगता है कि मैं जिले का कलेक्टर हूँ फिर भी मुझे मान–सम्मान नहीं दिया जा रहा, बल्कि अपमानित किया जा रहा है। अंत में उसका बडा भाई अपने छोटे भाई का सम्मान गाँव में करवाता है।

प्रस्तुत कहानी में परंपरागत दलित भेदभाव नहीं, किन्तु परंपरा से चले आ रहे भेदभाव से मुक्त समाज देखा जा सकता है। जब शहरों में यह भेदभाव नहीं रहा तो गाँवों में क्यों इसे निर्मूल न किया जाए ? यह प्रश्न भी सोचने वाला है ? जहाँ गाँव के अधिकतर लोग इस भेदभाव को भूलना चाहते हैं, वहीं गाँव के कुछ असामाजिक तत्वों से शैली का उच्च पद देखा नहीं जाता। वे उसे सम्मान समारोह में शैली पर पत्थर फेंकते

हैं। शैली को पत्थर सिर पर लग जाता है, वह घायल हो जाती है। खून निकलने लगता है। यदि वह चाहती तो उस युवक को सजा दिलवा सकती थी, किन्तु वह कहती है–

"छोड़ दो उसे। नादान है, परंतु मेरे गाँव का बेटा है न।"[83]

यह घटना कहानी का शीर्षक बनकर प्रकट होती है। यहाँ 'रेड कार्पेट' की ध्वनि स्पष्ट होती नज़र आती है। यहाँ एक प्रश्न भी उठता है कि इतनी उदारता किसलिए ? यह समय गाँधीजी का समय नहीं है कि कोई एक गाल पर तमाचा मारे तो उसके समक्ष दूसरा गाल कर दिया जाए।

कहानीकला के तत्त्वों की दृष्टि से प्रस्तुत कहानी में कई कमियाँ देखी जा सकती है, परंतु यहाँ दलित संदर्भ मुख्य है। कहानी का अंत भी बड़ा साधारण है, कहानी का अंत करने में कहानीकार ने जरा जल्दी कर दी है। गाँव के मुखिया का यह वाक्य–

"परिश्रम गाँव की बेटी का है। गौरव हमें लेना है।"[84]

बहुत ही सूचक और हृदयस्पर्शी है। प्रस्तुत कहानी में दलित समस्या को कथा नायिका द्वारा लेखक ने दलितों के अस्पृश्यता की समस्या, साथ ही नारी चेतना आदि की ओर विशेष रुप में अभिव्यक्त कर सकते थे किन्तु यहॉ उसकी कमी रही है।

10. 'राजीनामा' (इस्तीफा)–बी.केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् की प्रस्तुत कहानी की नायिका दलित सीमा एक शिक्षित युवती है। अपनी योग्यता के बल पर बड़ी मुश्किलों से उसे एक कॉलेज में अध्यापिका की नौकरी मिलती है। सीमा के घर में उसकी विधवा माँ, भाई और बहन थे। घर का खर्च साथ ही भाई–बहन की पढाई सब सीमा पर ही आधारित था। देवन उसी कॉलेज में अध्यापक था, जो ब्राह्मण जाति का था। सीमा और देवन के बीच प्रेम संबंध स्थापित हो जाता है। उनका स्टाफ किसी दलित को ब्राह्मण से विवाह की बात सोच भी नहीं सकता था। इस संबंध की बात केम्पस, शहर और फिर प्रिंसीपल तक पहुँचती है।

प्रिंन्सीपल सीमा और देवन से त्यागपत्र माँगते हैं। इस पर सीमा का कथन था–

"सर यह हमारा निजी मामला है। कॉलेज के बाहर हम मिलें तो इसमें मेनेजमेन्ट को क्या परेशानी है ?"[85]

यदि सीमा उच्च्व वर्ण की होती तो बात इतनी नहीं बिगड़ती किन्तु निम्न वर्ण की सीमा उच्च्व वर्ण के देवन से प्रेम संबंध रखे या विवाह कर सके यह उच्च्व वर्ण की बहुमत वाला कॉलेज स्टाफ नहीं देख पा रहा था। गाँधीवादी विचारधारा वाले प्रिन्सिपल भी सीमा का अशुभ चाहने वालों की बातों में आ जाते हैं, स्थिति बिगड़ती जाती है। अब क्लास रुम में विद्यार्थी भी देवन का नाम लेकर सीमा से गंदा मजाक करते हैं। सीमा स्टाफ रुम में आकर रोने लगती है। देवन उस लड़के को तमाचा मारता है और फिर विद्यार्थियों का समूह देवन पर टूट पड़ता है। हालात ज्यादा बिगडने पर प्रिन्सीपल मगनभाई दोनों अध्यापकों से त्यागपत्र माँगते हैं। देवन तो अंत में त्याग पत्र दे

देता है, किन्तु सीमा चाहकर भी ऐसा नहीं कर सकती थी। उसके इस कदम से उसका परिवार बिखर जाता, उसे अपनी जिम्मेदारियों को ध्यान में रखते हुए अपने निर्णय से डगमगाती नहीं। कॉलेज के ट्रस्टी जो पहले सीमा के विरोधी थे, बाद में सीमा की वकालत करने लगते हैं। मगनभाई को आश्चर्य होता है। मगनभाई हड़ताल पर उतरते हैं, विद्यार्थी, स्टाफ, अभिभावक सभी सीमा को त्यागपत्र देने के लिए मजबूर करते हैं। सीमा मजबूरन त्यागपत्र दे देती है।

एक गरीब परिवार से संबंध रखने वाली दलित शिक्षित युवती को सहारा देने वाला देवन उससे दूर कर दिया जाता है। जो ट्रस्टी उसका पक्ष लेते हैं उन्हें भी गलत दृष्टि से देखा जाता है, कि उनका गलत संबंध सीमा से होगा। यह सारा षड़यंत्र सीमा के साथ सवर्ण समाज रचता है। सब कुछ जानकर भी सीमा अपने पक्ष को मजबती से नहीं रख पाती। मगनभाई की जिद् के आगे वह विवश हो जाती है। पूरा सवर्ण समाज सीमा को हाराकर अपनी जीत का जश्न मनाता है।

कुछ वर्षों बाद सीमा मगनभाई की निवृत्ती के पश्चात् उसी कॉलेज में प्रिन्सीपाल बनकर आती है। जिस अध्यापक ने मगनभाई के कान भरे थे उसे तो अब अपने किए की सज़ा मिलने ही वाली थी। सीमा एक पत्र मगनभाई को उनके गाँव के पते पर भेजकर अपनी सच्चाई को प्रकट करती है। वह लिखती है–

> **"सर, आपने मेरी गरीब स्थिति का भी ध्यान न किया ? देवन ने मेरे लिए त्यागपत्र दे दिया। उसे तुरंत दूसरी नौकरी मिलने वाली थी। मैंनं त्यागपत्र दिया होता तो मेरी दलित जाति के कारण मुझे तुरंत नौकरी मिल जाने वाली थी ? यह नौकरी भी मुझे कितने इन्टरव्यु देने के बाद मुश्किल से मिली थी, जो आप अच्छी तरह जानते हो।"**[86]

मगनभाई एक सवर्ण व्यक्ति होने से पहले एक प्रिन्सीपाल के कर्त्तव्य का पालन सही ढंग से नहीं कर पाए थे, जिस गलती को वे करके भूल गए थे, वर्षों बाद सीमा के पत्र ने उन्हें उस गलती का ऐहसास दिलाया था। निष्ठावान, परिश्रमी सीमा के गुणों को जानते हुए भी अपनी जातिगत अहंकार को शांत करने के लिए मगनभाई और स्टाफ मेम्बर सीमा के साथ नाइंसाफी करते हैं। देवन ब्राह्मण था, किन्तु नए विचारों का, सिद्धांतवादी युवक था। उसने सीमा के खिलाफ अफवाहों में न जाकर उसका साथ जीवनभर देने के लिए उससे विवाह कर लिया। जिस कारण यह षडयंत्र रचा गया था, वह तो सवर्णों के न चाहने पर भी सीमा के पक्ष में रहा। सीमा मगन भाई को पत्र में लिखती है–

> **"मैं दलित जाति की हूँ इसलिए एक ब्राह्मण अध्यापक के साथ प्रेम नहीं कर सकती ? मैं देवन का आभार मानती हूँ। उसकी उम्र आपसे कम है, फिर भी अंतिम पल तक विचलित करने वाली ख़बरें अपप्रचार के समक्ष वह टीका रहा था। सर, खादी पहनने से अज्ञात मन में पड़े जातिगत संस्कार बदलते नहीं, मिटते नहीं। आपकी यह पुरानी पीढ़ी जब तक पूरी नहीं होगी तब तक इस मानसिक अस्पृश्यता को दूर नहीं किया जा सकता।"**[87]

सीमा मगनभाई को अपनी पवित्रता का परिचय देती है, कि यह ज़रुरी नहीं है कि कोई दलित स्त्री अपने आत्मसम्मान को बेचकर ही उच्च पद पर पहुँच

सकती है। अपने परिश्रम, सिद्धांत, उच्च विचारों, निडरता, आत्मसम्मान, स्वाभिमान के बलबूते पर सीमा उसी कॉलेज में आचार्य बनती है, जहाँ से उसे बेइज्जत करके, षडयंत्र रचकर निकाला गया था। यह मात्र सीमा की जीत नहीं थी, उसके जैसी अन्य स्त्रियों की जीत भी थी, जो परिश्रम करके अपने लक्ष्य तक पहुँचती हैं। सीमा के विचारानुसार आज की नई पीढ़ी जातिगत भेदभाव को छोड़कर आगे बढ़ रही है, ज़रुरत है कि पुरानी पीढ़ी भी इस जातिगत संस्कारों को, अस्पृश्यता को छोड़कर उनके साथ कदम–से कदम मिलाए।

प्रस्तुत कहानी में शिक्षित सीमा संघर्ष करती है अपनी नौकरी के लिए, कुछ समय के लिए सवर्ण उसे हराकर अपनी झूठी शान, अहंकार को ठंडक पहुँचाते हैं, किन्तु जीत अंत में सीमा की ही होती हैं क्योंकि सत्य का पलड़ा हमेशा भारी होता है।

11. 'गूँगी चीख'–हरीशकुमार मकवाणा

कहानी का मुख्य पात्र छगन एक दलित युवक है। छगन एक शिक्षक है। छगन के माता–पिता ने महेनत–मजदूरी करके उसे शिक्षित बनाया है। छगन की नौकरी उस गाँव में लगती है, जहाँ दलितों का नामोनिशान नहीं था, मात्र सवर्ण प्रजा का ही उस गाँव में राज था। ऐसी स्थिति में जब दलित छगन वहाँ स्कूल में शिक्षक बनकर जाता है, तो पहले तो सभी विद्यार्थी उसका आदर–सत्कार करते हैं लेकिन जब वे छगन से उसकी जाति पूछते हैं तो छगन झूठ न कहकर सच बताता है। सत्य जानकर तो जैसे सभी बदल जाते हैं। स्कूल में विद्यार्थियों की हाजिरी कम रहने लगती है। गाँव के लोग, स्कूल के चेरमेन उसे समझाते हैं कि तुम यहाँ से चले जाओ नहीं तो ये लोग तुम्हें छोड़ेंगे नहीं।

इस प्रकार हर दिन कोई–न–कोई नई समस्या छगन के सामने आने लगी। एक दिन तो ऐसा आया कि उसने यह तय कर लिया कि मेरा यहाँ से चले जाना ही उचित होगा। क्योंकि वह अपनी माँ को इस उम्र में अपने बेटे की मृत्यु पर आँसू बहाते नहीं छोड़ सकता था। उसे लगा कि–

> **"मेरी बूढ़ी माँ को ये सवर्ण लोग छोड़ दे ऐसा नहीं है। उसी तरह मेरी पूरी जाति को परेशान कर दें ऐसे लोग हैं। सरकार एकाद को रोक सकती है लेकिन सभी को सभी विषयों पर कम नहीं कर सकती है ?"**[88]

बीमार छगन की माँ अपने इकलौते बेटे की बुरी दशा देखकर चिंतित हो जाती है। अपने बेटे की ज़िंदगी से बड़ा उसके लिए कुछ नहीं है। सवर्ण बड़े लोग उनके जैसे गरीबों को अपने समक्ष तुच्छ समझते हैं। बीमार छगन को लेकर माँ अहमदाबाद में बहुत इलाज करवाती है। किन्तु छगन नहीं बचता। छगन की निराधार माँ अस्पृश्यता के कारण पुत्र को खोती है वास्तव में छगन की मृत्यु छुआछूत और नौकरी के चले जाने के आघात से हुई थी, माँ की गूँगी चीख किसी को सुनाई नहीं देती। अस्पृश्यता एक बार फिर दलित माँ के जीवन की खुशियाँ छीन लेती है। अस्पृश्यता के कारण छगन मानसिक यातना को झेलता है दूसरी ओर अपने बेरोजगार होने से उसे इतना आघात लगता है कि वह गिरकर उठ नहीं पाता।

12. वोटेली वस डॉ.केशुभाई देसाई

कहानी की नायिका सोमली दलित वर्ग की है, जो सोसायटी में सफाई कार्य करती है। सोमली एक हरिजन स्त्री है किंतु उसका रुप इतना सुंदर है कि उसे देखकर किसी को विश्वास नहीं होता कि यह एक सफाई करने वाली स्त्री है। सोमली रीटा के घर पाखाना साफ करने का कार्य करती है। इस घर से उसे सुबह–शाम की चाय–नाश्ता से लेकर रात को बचा हुआ दाल–चावल भी मिल जाता था। रीटा के उतरे हुए किंतु नए जैसे कपड़े जब उसे दिए गए, तो उसकी आँखें भर आई थी। सोमली को रीटा की मम्मी में अपनी स्वर्गीय माँ के दर्शन हुए थे।

रीटा की मम्मी सोमली को भोजन तो देतीं किंतु, हाथ ऊपर रखतीं थीं ताकि सोमली से स्पर्श न हो जाए। सोमली को चाय भी फूटे हुए कप में देती जाती थी और वह कप पाखाने के झरोखे में ही रखा जाता था ताकि कोई और गलती से भी उसे स्पर्श न कर सके। सोमली भी समझदार थी, वह हमेशा पीछे के रास्ते से ही आती–जाती थी। बाथरुम–टोयलेट घर के बाहर ही थे, इससे उसे घर में प्रवेश करने की आवश्यकता ही नहीं थी। बैठक रुम या रसोई में छुआछूत का कोई प्रश्न ही न था। घर के द्वार पर लगाई हुई तुलसी का स्पर्श गलती से भी न हो जाए, इसका सोमली खास ध्यान रखती थी।

एक बार रीटा मम्मी भांजे की तबीयत बिगडने से अपने मायके जाती है। सोमली रोज़ की भाँति वहाँ झाड़ू लगाने आती है, उसके बच्चे भी उसके साथ आते हैं। रीटा के पिता सोमली के वात्सल्य को ध्यानपूर्वक देखते हैं। रीटा के पिता सोमली के सुंदर रुप को लगातार देखते ही रहते हैं, जिससे वह थोड़ी घबराती है और टोयलेट में चली जाती है। पंरतु "सोमली रुपी सिगरेट का कश उसके दिमाग में प्रवेश कर जाता है।" रीटा के पिता सोमली से कहते हैं, कि वह कचरा साफ करते समय मिट्टी न उडाए। जिस पर सोमली उन्हें भीतर बैठने की सलाह देती है। वह जानती और समझती है, कि रीटा की मम्मी घर पर नहीं है इसलिए उसके पिता सोमली की ओर आँखें उठाकर बात कर रहे हैं, उनकी उपस्थिति में तो उसके पिता सोमली की ओर देखते भी न थे। रीटा के पिता सोमली को सिगरेट पीन के लिए देते हैं, तो सोमली उनके हाथ से नहीं लेना चाहती तब वे कहते हैं कि–

> **"मुझे तो यह तुझे अपने हाथ से ही पिलानी है, सिगरेट भी और चाय भी।"**
>
> तब सोमली कहती है–**"देना हो तो दो बाथरुम में बैठकर दो फूक मार लूँ"**89

तब 'तू अछूत नहीं है समझी' ऐसा कहकर हाथ बढ़ाकर उसकी कलाई पकड़लेते है वह टायलेट में जाकर सिगरेट का कश ले लेती है। वह अपनी मर्यादा जानती है और अपनी सीमा भी, वह रीटा के पिता को दूर रहने की सलाह देती है। रीटा के पिता सोमली को समझाते हैं कि यह सब तो पुराने–जमाने की बात है, छू लेने से कोई कैसे अशुद्ध हो जाता है ? अरे आज तो तु अपने हाथों से चाय बना और मैं पिऊँगा। तब सोमली अपने आप को बड़ी मुश्किल में पाती है। वह रीटा के पिता को समझाती है, कि मालकिन आपको कभी माफ नहीं करेंगी। रीटा के पिता उसके तर्क–वितर्क का उत्तर यही देते हैं कि–"गाँधीजी जैसे महान व्यक्ति ने भी भंगी के हाथों का बनाया भोजन किया फिर भी वे

अशुद्ध न हुए तो हम कैसे अशुद्ध हो जाएँगे ?" फिर भी सोमली मालकिन की रसोई को छूना नहीं चाहती। वह फिर सेठ जी को समझाती है कि मालकिन तो छः–छः मास का व्रत रखती हैं, फिर मैं अछूत होकर उनकी रसोई को भला कैसे स्पर्श कर सकती हूँ ? रीटा के पिता उसका हाथ पकड़कर चूम लेते हैं, तब सोमली उनसे कहती है–

"लो, चूम लो जितना चूमना हो आज के दिन।"[90]

आदमी की जात ही ऐसी होती है जहाँ सुंदर स्त्री देखी वहीं लार टपकने लगती है। रीटा के पिता अपनी माँ की तसवीर के नीचे बैठक रुम में सोमली को बैठा देखते हैं, जिसकी सोमली जैसी ही स्थिति थी। जब वे सोमली से यह कहते हैं, तो उन्हें भूतकाल की बातें याद आती हैं। उन्हें सोमली में अपनी माँ दिखाई देने लगती है। तब सोमली सोचती है कि मैं एक सफाई करने वाली स्त्री हूँ तो सेठजी को कैसे अच्छी लग सकती हूँ। सेठजी के ऐसे व्यवहार से सोमली आहत होती है उसे अपमान का अहसास होता है। कहीं वह यह भी महसूस करती है कि सेठजी के बहकावे में आकर वह अपने धर्म से चूक गई है। सेठजी ने भले ही उसे उकसाया किंतु उसे अपनी जाति को नहीं भूलना चाहिए था। एक अछूत स्त्री किसी सेठ के प्रेम की पात्र भला कैसे बन सकती है ? ऐसा सोचकर वह तेज गति से उनके घर के बाहर निकल जाती है। उस दिन के बाद वह उस घर की ओर कभी नहीं आती।

3.3 परंपरा का विद्रोह

1. 'शैली का व्रत'– विट्ठलराय श्रीमाली

प्रस्तुत कहानी में विरल एवं उसकी पत्नी सरु शिक्षित दलित व्यक्ति हैं। विरल किसी ऑफिस में नौकरी करता है। दलित होते हुए भी उनके रहन–सहन, खान–पान, तौर–तरीका एवं घर का वातावरण सवर्ण परिवार की तरह था। उनकी पुत्री शैली दसवीं में पढ़ रही थी। शैली पढ़ने में बहुत अच्छी थी। शैली की पाँच सहेलियाँ सवर्ण थी। शैली दलित है, इससे उन पाँचों की मित्रता में कोई दूरी नहीं आती है। शैली अपनी सहेलियों के साथ स्कूल आती–जाती है, घूमने जाती है। शैली स्वयं दलित है, इस बात का एहसास उसे कभी नहीं हुआ था। वह स्वयं को अपनी सवर्ण सहेलियों के समान ही समझती थी।

एक बार शैली की सहेलियाँ जया पार्वती के व्रत रखती हैं। ये व्रत लड़कियाँ अच्छा पति एवं परिवार मिले साथ ही वैवाहिक जीवन मंगलमय बने इसलिए रखा जाता है। शैली भी ये व्रत रखना चाहती है। विरल एक शिक्षित और समझदार व्यक्ति है। वह पुरुषार्थ पर विश्वास रखने वालों में से था। वह पत्नी को समझाता है कि शैली दसवीं में है, इसलिए उस व्रत रखकर अपने शरीर को कमजोर नहीं बनाना चाहिए, बल्कि पोष्टिक आहार लेकर खूब मेहनत करनी चाहिए, ताकि अच्छे प्रतिशत से पास हो सके। विरल के अनुसार शैली अच्छी पढ़ाई करके ऊँचे पद पर नौकरी करेगी तो अच्छे लड़कों की कतार खडी हो जाएगी। सरु इन बातों को समझती है, किंतु वह अपनी बेटी की खुशी को ज्यादा महत्त्व देती है। सारी सहेलियाँ व्रत रखकर घूमेंगी–आनंद मनाएँगी ऐसे में शैली का मन पढ़ाई में कैसे लगेगा ? इससे तो अच्छा है, उसे व्रत रखने दिया जाए। अंत में विरल पत्नी की बात मान लेता है और शैली को व्रत रखने की इज़ाजत मिल जाती है।

सुबह शैली अपनी सहेलियॉं के साथ शिवजी के मंदिर में पूजा की थाली और जल लेकर जाती है। अपने नटखट स्वभाव के कारण वह पीछे रह जाती है और उसकी सहेलियाँ मंदिर में चली जाती हैं। जैसे ही वह मंदिर में प्रवेश करती है, वहाँ के पुजारी नरभेशंकर उसे रोकते हैं। पुजारी शैली को दुत्कारते हुए कहते हैं कि–

> **"तुझे शर्म नहीं आती हमारे मंदिर में आते हुए ? नीची जाति की होकर मंदिर में आ रही है ? तेरे आने से अंदर बैठे हमारे भगवान को छूत लग जाएगी। मुझे भगवान को पंचामृत से दुबारा स्नान करवाना पड़ेगा। जा घर लौट जा। धर्म की कुछ समझ नहीं और हमारी देखा–देखी निकलगये हैं पूजा और व्रत करने। चल जल्दी भाग नहीं तो इस छड़ी से तुझे पीटना पड़ेगा।"**[91]

आज भी धर्म को सवर्ण अपनी पैतृक सम्पत्ति समझते हैं। दलित व्यक्ति किसी धार्मिक कार्य में रुचि दिखाए तो सवर्णों को यह रुचिकर नहीं लगता। वे दलितों को अपने समान होते नहीं देखना चाहते, इसलिए उन्हें अछूत कहकर उनकी सीमा में रहने के लिए विवश करते हैं। शैली सोलह वर्ष की समझदार लड़की थी। अपने घर और समाज में सभी उसे प्रेम करते थे। पुजारी की कठोर वाणी से वह स्तब्ध रह जाती है। उसे कभी ऐसा कड़वा अनुभव नहीं हुआ था। अपने अपमान को वह नहीं सह पाती और क्रोध से उसकी आँखे फट जाती हैं। उसका शरीर काँपने लगता है। क्रोध में शैली अपनी सुध–बुध खो देती है और पुजा की थाली और लोटा पुजारी के सिर पर जोर से मारती है। बाद में वह डरती है कि गाँव के लोग और पुजारी उसे दंड देंगे इसलिए वहाँ से भाग जाती है। भागते–भागते शैली को समय का कुछ ख्याल नहीं रहता और वह बेहोश हो जाती है। होश आता है तो वह देवशंकर दवे नामक प्रतिभाशाली व्यक्ति के पास वह अपने को पाती है। देवशंकर, शैली से सारी घटना सुनकर उसके माता–पिता को मानव कल्याण आश्रम में बुलाते हैं। आश्रम में उन्हें काम मिल जाता है और शैली खूब परिश्रम करते हुए अच्छे प्रतिशत लाती है। अपने परिश्रम के बल पर वह कलेक्टर बन जाती है।

शैली अपने जीवन की पुरानी बातों के विषय में सोचती है, कि एक सवर्ण व्यक्ति नरभेराम पुजारी ने उसका अपमान किया इस वजह से वह इस स्थान पर पहुँची या एक सवर्ण दवेशंकर दवे ने मानवता भरा स्पर्श एवं सहयोग दिया उसकी वजह से वह कलेक्टर बनी। शैली अपने प्रश्नों का उत्तर खोजती है। वास्तव में पुरुषार्थ या व्रत उपवास दोनों में से किसके कारण वह सफल हुई ? आखिर उसे अपने पुरुषार्थ पर भरोसा होता है। शैली के पुरुषार्थ की जीत होती है।

2. 'नरक'– धरमाभाई श्रीमाली

धरमाभाई श्रीमाली की कहानी **'नरक'** की नायिका रतन स्वाभिमानी स्त्री है। बचपन से ही उसे गंदगी से घृणा होती है। रतन का जन्म सफाई कर्मचारी के घर में हुआ था, जिसके कारण उसके माता–पिता गाँव में मरे हुए कुत्ते–बिल्ली को खींचना वार–त्यौहार घर–घर अनाज माँगने जाना आदि कार्य करते थे। रतन को यह काम अच्छा नहीं लगता था। वह ऐसे काम से नफरत करती थी। किसी के आगे भीख माँगने से अच्छा है, घर में मीर्च और रोटी खाकर जीया जाए। ऐसी सोच–समझ रखने वाली रतन का विवाह अहमदाबाद शहर में होता है। रतन के माता–पिता और स्वयं रतन खुश

थे, क्योंकि उन्हें आशा थी, कि अब उसका जीवन सुखी होगा। रतन का पति सोमा शुरुआत में रतन को गंदे शैचालय की सफाई करने से रोकता है, किन्तु कुछ वर्षो बाद सोमा को शराब की आदत पड़ जाती है। अपनी बूरी आदतों की वजह से सोमा रतन को म्युनिसिपालिटी में काम करने का दबाव डालता है।

रतन को जिस काम से नफरत थी, उसे मजबूरन वही काम करना पड़ता है। सफाई–कर्मचारी वर्ग जीते–जी नरक देखते हैं। मरे हुए पशुओं को उठाना और उसके बदले में अनाज और भोजन माँगकर लाना वास्तव में बहुत कठिन कार्य है। रतन को अपना जीवन किसी नरक के समान लगने लगा था। वह शहर में रहती थी, किंतु वह जिस बस्ती में रहती थी वहाँ गंदगी का फैलाव था। मन–ही–मन वह कहती है–

> **"अरे ! मोहल्ले के आगे ही है। रोज़ सुबह जाती हूँ। किसी दिन साफ हुआ हो तो ठीक .....नरक, ठीक ढंग से बैठ सकें ऐसा कहाँ होता है..... फिर भी यहाँ बैठे और यहाँ उठे। बदबू ही बदबू बाहर निकलें वहाँ तक थूक और बूक....."92**

अहमदाबाद की पूर्वपट्टी की गलियों और झोंपड़ियों के विस्तार में शौचालयों में इतनी गंदगी होती है कि रतन जैसी साफ–सुथरी रहने वाली स्त्री का जीवन उसे नरक के समान लगने लगता है। रतन को अपना बचपन याद आता है, जब उसकी माँ अस्वस्थ थी और गाँव में मरे हुए कुत्ते को उठाने वाला कोई नहीं था और रतन की माँ उससे कहती है–

> **"रतन....बेटी, जा न इतना काम कर आ मेरी बहन"**
> **"नहीं बाई... मैं जा सकती हूँ ऐसा काम करने ?"**
> **"अरे पर मैं भी ठीक नहीं...... रांड, हमारा अवतार है...... ऐसे मुँह फेरकर चलेगा क्या ?**
> **जा अब जा जल्दी। गाँव में से दो–तीन बुलावे आ गए हैं.......बाद में नहीं गए तो ताने सुनने पड़ेंगे। नहीं तो लोग कुत्ते के बदले में अनाज देते होंगे वह भी न दें......."93**

धर्म आधारित वर्णाश्रम और वर्णाश्रम से उत्पन्न जाति आधारित कार्यो ने भोले, अनपढ, दलित शोषित पीड़ितों पर ऐसे गंदे व्यवसाय लाद दिए हैं और यह उसका धर्म है ऐसा कहकर मानसिक रुप से तैयार कर दिया गया है। सफाई कर्मचारी ऐसे कार्यो को अपना धर्म समझने लगे हैं। कहानी में गोमती नामक स्त्री रतन की बातों का विरोध करती हुई कहती है–

> **"ऐसी शिक्षा देने वाली नहीं देखी। ले.... भिक्षा माँगना तो हमारा धर्म है। इसमें क्या गलत है, यह तू मुझे समझाने आई है ?"94**

रतन को न चाहकर भी म्युनिसिपालिटी के सार्वजनिक शौचालयों की सफाई करने जाना पड़ता हैं। वहाँ इतनी गंदगी रहती है कि रतन को उबकाई आने लगती है। वह यह सोचकर घर लौटती है कि–

> **"आज तो नेनकी का बाप मार डाले तो भी अच्छा है, लेकिन यह नरक तो अब नहीं ही सहा जाता।"95**

रतन ऐसे गंदगी के जीवन से, नरक के समान जीवन जीने से मर जाना बेहतर समझती है। उसे अपने ही शरीर से दुर्गंध आने लगती है। उसे बार–बार वह मल–मूत्र से भरे शौचालय याद आते और वह तिलमिला उठती है।

दस्तावेजी फिल्म बताने के कार्यक्रम से कहानी में मोड आता है। रतन की बस्ती में एक फिल्म बताई जाती है। सिर पर मैला उठाने का दृश्य देखकर रतन का यहॉ अधिक बैठना मुश्किल हो जाता है। मासूम बच्ची को मैला ढ़ोते देखकर उसे अपना बचपन याद आ गया। यह दृश्य सोमा भी देखता है। रतन को डर था, कि सोमा उसे यह दृश्य देखकर और डाँटेगा कि तू ऐसा काम करने से मना करती है, देखा न ?... किंतु कहानीकार ने यहाँ परिवर्तन कर दिया है। सोमा, का हृदय परिवर्तित हो जाता है। अपनी पत्नी की मनः स्थिति को वह समझ जाता है और रोने लगता है। आखिर पेट के लिए सब कुछ करना पड़ता है।

3. 'होड' – अरविंद वेगडा

प्रस्तुत कहानी गरीबी, भुखमरी की मार झेल रहे एक दलित परिवार की है। लवजी उसकी पत्नी और एक पुत्र किशन बड़ी मुश्किल से अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे। किशन का बार–बार बीमार पड़ना लवजी की मुश्किलों को बढ़ता है। दिन में छः रुपये मजदूरी पर काम करने वाला लवजी डॉक्टर के पास इसलिए नहीं जाना चाहता क्योंकि यदि दवाई में पैसे चले गए, तो घर में चूल्हा कैसे जलेगा ? किन्तु पत्नी के बार–बार समझाने पर वह डॉक्टर के पास किशन को लेकर जाता है। डॉक्टर चेकअप करके दवाइयाँ देकर बारह रुपये फीस लेते हैं। दो दिन की कमाई देकर लवजी चिंता में पड़ जाता है। वह अंधविश्वासी भी है, घर आकर पत्नी से कहता है, कि बारह रुपये डॉक्टर को देने से बेहतर है सवा रुपये में माताजी का धागा बँधवा देना। लवजी की पत्नी अनपढ थी, किन्तु अंधविश्वासी नहीं। पति को समझाते हुए वह कहती है–

> **"परंतु पहले आप किशन को सूला तो दो ! आपकी धागे की रामायण तो मिट जाती, जरा भी गरदन दुखी तो धागा... जोर से रोने लगे तो कहते हो कि नज़र लगी, मैं तो परेशान हो गई, डॉक्टर की दवा की सिवाय कुछ भी नहीं ठीक होगा, धागे से यदि ठीक हो तो बड़ा धागा बाँध दो ! तुरंत पार..... किशन के लिए दोरा–धागा की बात करने की ही नहीं।"**[96]

किशन की मॉ यह अनुभव कर चुकी है कि माताजी के नाम से धागा बँधवाकर लोगों के अंधविश्वास के कारण कई लोग गाँव की भोली–भाली प्रजा को लूटते हैं। बीमारी का कोई–न–कोई कारण अवश्य होता है। यदि धागे से सारी बीमारी ठीक हो जाती हो तो, डॉक्टर की क्या ज़रुरत होती ?

लवजी दिनभर हाडतोड़ मजदूरी करता था किन्तु बदले में उसे मात्र छः–सात रुपये मजदूरी मिलती थी। उसके परिश्रम के अनुपात में इतने कम रुपये उसे मिलते थे, उस पर भी किशन की बीमारी ने उसे अधमरा कर दिया था। आज भी गाँव में मजदूरों को मजदूरी उसके परिश्रम के अनुसार नहीं दी जाती, ऐसी स्थिति में वे अपनी आवश्यकता की पूर्ति तो दूर, दो वक्त की रोटी भी नहीं जुटा पाते।

किशन को दवा देकर लवजी रात को सो नहीं पाता। उसकी पत्नी भी पुत्र की खराब होती स्थिति से चिंतित थी। रात्रि के समय किशन हरे रंग की उल्टी

करता है, उसके होठ पर लाल–लाल टपके हो गए। पुत्र की ऐसी स्थिति देखकर उसकी माँ घबराकर चीखना चाहती थी, किंतु मुँह से आवाज़ ही नहीं निकलती है। एक ओर गरीबी थी, दूसरी ओर लाचारी यह थी कि धन के अभाव में पुत्र का सही इलाज नहीं हो पा रहा था।

डॉक्टर के पास उसे लवजी दुबारा लेकर जाता है। डॉक्टर फिर निरीक्षण करते हैं और किशन को टी.बी. के लक्षण हैं, यह कहते हैं। डॉक्टर लवजी को इस बीमारी के इलाज और खर्च के बारे में समझाते हैं। पाँच–सौ रुपये खर्च की बात सुनकर लवजी चिंता में डूब जाता है। उसने तो किशन के लिए सपने देखे हैं, कि वह पढ़–लिखकर इंजीनियर बनेगा। नौकरी करेगा। फिर हमें धन की कमी न होगी।

लवजी के सपनों के समक्ष उसकी पत्नी की ऑखों में मात्र फीका भविष्य आँसू बनकर बह रहा था। बेटे की बीमारी, गरीब, तकलीफों के समक्ष आखिर कोई स्त्री कैसे अच्छे सपने देख सकती है ? लवजी किसी भी तरह अपने बच्चे को बचाना चाहता है। आखिर वह उधार माँगने गाँव के गगजी पटेल के पास जाता है। गगजी पटेल गरीब, दलित लवजी की परेशानी दूर तो नहीं करता उल्टा कड़वे वचन कहता है कि–

> **"अरे तुमको देकर तो मुझे भूल ही जाना पड़ेगा ! तुम्हारी 'जाती' का क्या भरोसा! झाड़कर खड़े हो गए ! और देख अभी तो मेरे पास कसम खाने जितने भी पैसे नहीं इसलिए यह बात ही न करना"**[97]

गरीब दलितों से दिन–रात परिश्रम करवाने वाले सेठ–साहूकार उनका शोषण करते हैं और धन कमाते हैं। मानवता जैसी कोई चीज उनमें नहीं रहती। लवजी हताश होकर लौटता है। रास्ते में कुछ लोग किसी पत्थर को उठाने के लिए शर्त लगा रहे थे। जो व्यक्ति उस पत्थर को उठा लेगा उसे पाँच सौ रुपये इनाम मिलेगा।

यह बात लवजी भी सुनता है। भारी–भरकम पत्थर हिलाना भी मुश्किल था, किंतु बेटे किशन को ठीक करने के लिए वह उस पत्थर को उठाने का निर्णय लेता है। वह भारी पत्थर को उसकी तरह उठाता है जैसे उसने किशन की सूखी देह को उठाया हो। लवजी पत्थर उठा तो लेता है, किंतु दूसरे ही पल वह जमीन पर गिर पड़ता है, बेटे को बचाने की चाह में वह स्वयं अपने प्राण खो देता है।

संक्षेप में प्रस्तुत कहानी में दलित परिवार की दयनीय स्थिति का वर्णन कहानीकार ने बखूबी किया है। साथ ही उनके अंधविश्वास, दुविधा, गैरदलितों द्वारा उनका शोषण, अपमान, परिश्रम के अनुपात में कम आमदनी से गरीब दलित की बिगड़ती हालत को चित्रित किया है। कहानी का अंत चोटदार है। बेटे को बचाने के लिए एक गरीब पिता अपने प्राणों की बाजी लगा देता है।

4. 'दो बीघा जमीन'– जयंतीलाल पी दाफडा

'दो बीघा जमीन' कहानी में दलित करसन अपनी पत्नी मंगु, पुत्र रवला और बूढ़ी माँ के साथ छोटे से परिवार में संघर्षपूर्ण जीवन बीताता है। पिता की मृत्यु के बाद बारवें की विधि करने के लिए वह गाँव के मुखिया से कर्ज लेता है। यह कर्ज़ उसे पाँच वर्ष तक मुखिया के खेत में बेगार की मजदूरी करके चुकाना पड़ता है। करसन अनपढ़ था, इसलिए हिसाब–किताब करना उसे नहीं आता था, किन्तु वह अपने पुत्र को पढ़ा–लिखाकर बडा साहब बनाने का सपना ज़रुर देखता है।

गाँव में मुखिया सभी को कर्ज़ पर रुपये देते थे, किन्तु उसके व्याज और मूल कीमत के अतिरिक्त उनसे अधिक कार्य करवाकर उनका शोषण करते थे। गरीब दलित फिर भी मुखिया का मान–सम्मान करते थे, उन्हें पूजते थे, यह उनकी विडंबना थी, कि शोषण करने वाले व्यक्ति के खिलाफ वह आवाज़ भी नहीं उठा सकते थे। मुखिया को जो चीज पसंद आ जाती थी, समझ लो वह उसकी हो जाती थी। इस बार करसन के पूर्वजों की एकमात्र निशानी दो बीघा जमीन मुखिया को भा गई है। वह करसन से वह जमीन रुपये देकर खरीदना चाहता है। करसन के पास उस भूमि के अतिरिक्त कोई संपत्ति नहीं थी, यह जमीन उसके और उसके परिवार के दुःख–सुख की साथी थी।

करसन की बूढ़ी मॉ ने वर्षों उस गाँव में बिताए हैं, अपने पति के साथ इस जमीन पर वह खेती करती थी, बहुत–सी यादें जुड़ी हुई हैं उसकी इस जमीन से। बेटे से इस जमीन की बात सुनकर आश्चर्य और चिंता व्यक्त करती हुई वह कहती है–

> **"बेटा, तुम्हारे पिता के पास संपत्ति स्वरुप मात्र यह दो बीघा जमीन ही थी। और बेटा, मरते समय तुम्हारे पिता ने मुझे कहा था कि इस जमीन को संभालना। यह जमीन ही हमारी सुख–दुःख की साथी है।"** [98]

करसन की बूढ़ी माँ यह जानती है, कि जब तक यह जमीन इनके पास है, तब तक किसी भी तरह का दुःख या समस्या आए तो वे उसका सामना कर सकते हैं, क्योंकि उनकी वह ज़मीन उनका आधार थी जिस पर खड़े होकर वे समस्या से लड सकते थे, जूझ सकते थे। यदि जमीन ही नहीं रही तो वे किस आधार के सहारे लड़ सकेंगे। करसन के पिता ने भी उसकी माँ से यही कहा था कि यह जमीन संभालना, वे भी जानते थे कि जब तक यह जमीन उसके परिवार के पास रहेगी तब तक उनका जीवन सुरक्षित रह सकेगा अन्यथा दाने–दाने को तरसना पड़ सकता है।

करसन की पत्नी मंगु अपने पति और सास की चिंता को समझती है। वह नहीं चाहती कि यह जमीन उनसे छीन ली जाए। यह जमीन ही उसके और करसन के जीने का आधार थी। वह पति को समझाती है कि किसी भी तरह मुखिया को समझाओ कि वे यह जमीन नहीं बेचना चाहते।

मुखिया इस जमीन पर घर बनवाना चाहता है, चाहे खरीदकर या हडपकर जैसे भी हो उसे हर हाल में यही जमीन घर के लिए लेनी थी। करसन बड़ी हिम्मत जुटाकर मुखिया के समक्ष इन्कार करने का साहस बटोरता है। मुखिया को करसन का यह साहस बहुत बुरा लगा किन्तु वे कुछ सोचकर वहाँ से चला जाता है।

रात को जंमीदार वहाँ आता है और मुखिया के आरोप के तहत करसन को थाने ले जाता है। मुखिया करसन पर जूठा आरोप लगाता है, कि उसने उनके खेत में आग लगाई है। पुलिस निर्दोष करसन की निर्दयता से पीटाई करती है, वह दर्द से छटपटाता है। पुलिस, मुखिया और उसके साथी करसन की करुण स्थिति देखकर मुस्कराते हैं, किन्तु उसकी बूढ़ी माँ जान गई थीं कि बेकसूर करसन को क्यों पीटा जा रहा है, उसकी गलती सिर्फ यही थी, कि उसने मुखिया की बात को स्वीकार नहीं किया था। करसन की दयनीय स्थिति देखकर दूसरे दिन जब वह छूटकर घर आता है तो माँ और मंगू दोनों के यही शब्द थे–

"अब इस गाँव में नहीं रहना। यहाँ हमारे लिए रोटी–पानी पूरा हो गया है।"99

मंगू और माँ जानती थी कि मुखिया को जमीन नहीं दी इसलिए करसन की यह दुर्दशा की है। अब यह सिलसिला रुकेगा नहीं बल्कि और बढ़ता जाएगा। इसलिए वे इस जमीन के मोह में करसन को न खो बैठें, सो वे निर्णय ले लेती हैं कि जमीन जीवन से अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है। दूसरे दिन मंगु, करसन, बूढ़ी माँ और रवला अनजान जगह चले जा रहे थे। नन्हा रवला कहता है–

"बापु, हम कहाँ जा रहे हैं ?"100

रवला के इस प्रश्न का उत्तर उनमें से कोई नहीं दे सकता था। वे सभी निरुत्तरं थे। उनके इस पलायन से मुखिया को मुफ्त में जमीन मिल गई और वह उस पर घर बनाने की तैयारी शुरु कर देता है। उसने अपनी खुशी के लिए चार लोगों को बेघर कर दिया था। वे चारों बेघर होकर रो रहे थे। उनकी जमीन के साथ–साथ उनका गाँव भी छूट रहा था।

प्रस्तुत कहानी में दो बीघा जमीन को मुखीया के हाथों में न सौंपना दलित करसन और उसके परिवार के लिए मुश्किल खडी कर देता है। पूर्वजों की एकमात्र निशानी और जीवन के एकमात्र सहारे को करसन नहीं बचा पाता। दूसरी ओर मंगू और बूढ़ी माँ को भय है, कि जमीन के कारण करसन की हत्या न कर दी जाए। उन्हें भी उस भूमि से प्रेम है, किन्तु उन्हें मुखिया की निदर्यता की चरमसीमा का भी अनुभव है। घर से बेघर होने की पीड़ा वे सह सकते थे, किन्तु करसन को खोकर वे निराधार नहीं बनना चाहते थे। कहानी में सवर्ण मुखिया का अत्याचार, दलितों की दयनीय स्थिति को प्रस्तुत करता है। गॉव छोड़ कर पलायन करना दलितों की विवशता है।

5. 'मुखिया का भांजा'–विट्ठलराय श्रीमाली

इक्कीसवीं सदी में भी अस्पृश्यता दलित लोगों की प्रगति में बाधक रही है। प्रस्तुत कहानी की नायिका दमयंती और उसका पति नानजी एक मजदूर हैं किन्तु वे चाहते है कि उनका एक मात्र बेटा खूब पढ़ लिखकर अच्छी नौकरी प्राप्त करे। अपने इस सपने को पूरा करने के लिए पति–पत्नी खूब परिश्रम करते हैं। नानजी के अच्छे कार्य से शामजी मुखिया अत्यंत प्रसन्न है। मुखिया नानजी को मजदूरी के उपरांत वार–त्यौहार पर अच्छे पैसे भी देता है। दमयंती भी पति की मदद करती है।

एक दिन दमयंती घर के काम से निपटकर पति का हाथ–बँटाने खेत में जाती है, रास्ते में काला नामक व्यक्ति दमयंती को अपनी हवस का शिकार बनाने के लिए उस पर आक्रमण करता है। पत्नी की चीख सुनकर नानजी उसे बचाने के लिए अपनी जान गवॉ देता है। पति की हालत देखकर दमयंती घायल शेरनी की तरह काला पर प्रहार करती है। काला वहीं मर जाता है। पति की मृत्यु होने से दमयंती अपने को अनाथ समझकर आँसू बहाती है। अब नटवर कैसे पढेगा ? कैसे उनका सपना पूरा होगा ? ये सारे प्रश्न उसके सामने खड़े होते हैं। इस दुखद घड़ी में मुखिया और कुछ बुजुर्ग दमयंती को सांत्वना देते हैं कि तुम अनाथ नहीं हो हम सभी तुम्हारी सहायता करेंगे।

पति की मृत्यु के सवा महीने बाद दमयंती मुखिया के खेत में मजदूरी करना प्रारंभ कर देती है। नटवर को बड़ा आदमी बनाने के अपने सपने को पूरा करने

के लिए दमयंती दिन–रात परिश्रम करती है। नटवर 12वीं तक पढ़कर शहर में होस्टल में रहकर बी.ए. फर्स्ट डिविज़न में पास होता है। दमयंती को अब अपना सपना पूरा होता नज़र आने लगता है। कुछ दिनों में माँ–बेटे के समक्ष एक कड़वी सच्चाई आती है कि वह दलित जाति का है इसलिए उसे कहीं अच्छी नौकरी नहीं मिल सकती। जबकि उसके साथ के कई युवकों को अच्छी नौकरी मिल जाती है।

नटवर अपनी विधवा माँ का सहारा बनना चाहता था, किन्तु वह अपने आपको निःसहाय महसूस कर रहा था। एक दिन नटवर को पता चलता है कि सरकार शिक्षित बेरोजगार युवकों को रोजगार देने के लिए सस्ते अनाज की दुकान खोलकर देने वाली है। बस मुखिया की मदद से दौड़–भाग करके वह दुकान गाँव में ही खोल लेता है और दुकान का उद्‌घाटन विधि–विधान से करता है। नटवर की यह खुशी ज्यादा दिन नहीं टिकती। दुकान खुले एक महिना हो जाता है किन्तु गाँव का एक भी व्यक्ति उसकी दुकान पर अनाज नहीं लेने आता।

दमयंती और नटवर को इसका कारण समझ में नहीं आता है। कुछ लोगों से पूछने पर पता चलता है कि वे लोग हरिजन हैं इसलिए कोई भी व्यक्ति उनकी दुकान से सामान नहीं ले जाता। दमयंती पर तो जैसे पहाड़ ही टूट जाता है। वह सोचती है कि मेरा बेटा फर्स्ट क्लास लाकर भी साहब नहीं बन पाया, तो क्या छोटा व्यापारी भी नहीं बन सकता ? समाज की इस मान्यता के प्रति दमयंती को नफरत होने लगती है। वह ठान लेती है कि वह अब पीछे नहीं हटेगी। लोगों से इसका जवाब माँगेगी कि यह कैसा व्यवहार है।

मुखिया की मदद से सारे गाँव वालों को एकत्र किया जाता है। दमयंती गाँव वालों के समक्ष अपनी समस्या कहती है। गाँव वाले स्पष्ट कह देते हैं कि–

> **"तुम तो हरिजन हो। तुम्हारा स्पर्श किया हुआ अन्न हम नहीं ले सकते, हम भगवान और माताजी को प्रसाद कैसे चढ़ा सकते हैं ? किसी भी रुप में हम तुम्हारे अन्न को नहीं खरीद सकते ?"[101]**

गाँव वाले नटवर के हरिजन होने के कारण उसे अस्पृश्य कहकर उसका तिरस्कार करते हैं स्वयं को भगवान का भक्त एवं शुद्ध बताते हैं। नटवर और दमयंती इन बातों को सुनकर अवाक् रह जाते हैं। दमयंती मानवता का खून होते नहीं देख पाती और कहती है–

> **"हम तुम्हारे खेत में पैर रखते हैं तब तुम्हारा खेत नहीं खराब होता ? खेत जोदते हैं तब वह अनाज के पौधे खराब नहीं होते ? अरे हम महेनत करके काटकर खेत से निकालकर लाते हैं, उसे साफ करके दाने निकालते हैं वे दाने तुम्हरे घर की कोठी में आता है। ये सारी महेनत हम करते हैं, तब उसे छूत नहीं लगती ? खेत में पड़े अनाज पर पक्षी, गधे, कुत्ते पेशाब करते हैं। ये अनाज से आप को छूत नहीं लगती और मेरा बेटा शहर से अनाज खरीदकर लाता है, उससे आपको छूत लगती है ?"[102]**

दमयंती लोगों को समझाने का प्रयत्न करती है कि यह छुआ–छूत की विचारधारा पिछड़ी हुई बातें हैं। जब हरिजन खेत के सारे काम करते हैं तो भला उनके छूने से अन्न कैसे खराब हो सकता है। ये सारे कुरिवाज मनुष्यों के बनाए हुए हैं। ईश्वर

ने सभी को समान बनाया है। आवेश में आकर दमयंती गाँव छोड़कर चले जाने की बात कह देती है।

गाँववालों को दमयंती से हमदर्दी थी, किन्तु इस समस्या का हल उन्हें नहीं मिल रहा था। अंत में मुखिया इस समस्या का हल निकालते हैं और कहते हैं, आज से दमयंती मेरी बेटी है, मैं उसे गोद लेता हूँ, इस नाते नटवर मेरा नाती हुआ। मेरे नाती की दुकान से अनाज लेने में आप लोगों को कोई दिक्कत तो नहीं होगी न ? मुखिया के निर्णय को सभी ने स्वीकार कर लिया। नटवर की दुकान खूब चलने लगती है, नटवर से नटवर सेठ बनकर अब वह गाँव में मान–सम्मान पाने लगा।

इस कहानी का अंत चोटदार है। सवर्ण समाज की रुढिवादिता, अस्पृश्यता एक पढ़े–लिखे युवक का तिरस्कार करती है। मुखिया इस समस्या को दूर करने के लिए आगे बढ़ते हैं और लोगों की आँखों पर पड़ी अस्पृश्यता की पट्टी को खोलकर उन्हें मानवता का पाठ पढ़ाते हैं।

3.4 शोषण के प्रति दलित स्त्री का विद्रोह

1. 'जेल की रोटी'– बी. केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् की **'जेल की रोटी'** कहानी अन्याय और अत्याचार के समक्ष लड़ने वाली स्त्री की है। कहानी में आरक्षण की ऑधी में फँसे, परेशान दलितों की समस्या के साथ–साथ बेरोजगारी की समस्या पर भी प्रकाश डाला है। प्रस्तुत कहानी सीतापुर नामक गाँव की है जहाँ अस्पृश्यता, अन्याय, अत्याचार करने वाले सवर्णों का दबदबा है। सवर्ण यदि कोई गलती करें तो उसे कहने की किसी में ताकत नहीं और यदि दलित से कोई गलती हुई तो उसकी सजा पूरे कुनबे को दी जाती थी। दलित परिवार सवर्णों के अत्याचार को सहते थे, क्योंकि आजीविका का उनके पास कोई साधन नहीं था। वर्षों से उन्हें दबाकर रखा गया था, इसलिए उनके विरोध कर विचार करना ही, दलितों के लिए नामुमकिन था।

ऐसे गाँव में दलित युवक मगन, माता–पिता के कठिन परिश्रम से बी.ए पास करता है। शिक्षित होते हुए भी उसे कहीं चपरासी की नौकरी भी नहीं मिलती, जिससे वह निराश होता है। कमु एक विधवा स्त्री है जिसका एक बेटा है। कमु रुपवती है, उसे देखकर हर पुरुष उसे अपना बनाने को आतुर है, किन्तु कमु दूसरा विवाह नहीं करना चाहती। मगन भी कमु को अपना बनाना चाहता है, किन्तु अपने दिल की बात उससे कह नहीं पाता।

गाँव के मुखिया का बेटा जीवन चरित्रहीन, शराबी है। गाँव की स्त्रियों को छेड़ना उन पर बलात्कार करना उसकी आदत है। मुखिया स्वयं भी अपनी जवानी में ऐसा ही कुकर्म करता था। कमु की माँ का बलात्कार करके उसे सरेआम नग्न रुप में उसने घुमाया था। कमु इस बात को भूली नहीं थी। जीवन की हरकतों को जानती है इसलिए उससे घृणा करती है। जीवन शराबी, जुआरी, बलात्कारी होने के साथ–साथ चोरी भरी करता है। गाँव के मंदिर की मूर्ति और घंटा भी चोर लेता है। पुजारी सारी सच्चाई जानकर भी, डर के मारे कुछ कट नहीं पाते। मुखिया के बेटे के खिलाफ आखिर कौन कुछ कह सकता है ?

मगन बेरोजगार होने से खेत में मजदूरी करने पर अपने ही मित्रों द्वारा उपालंभ और तिरस्कार झेलता है। कुछ बनने के लिए वह गाँव छोड़ने का निर्णय लेता

है। उसी रात मंदिर के पास से गुजरते हुए एक स्त्री की चीख सुनाई देती है। वह मंदिर में भला कैसे प्रवेश करे ? कुछ क्षणों में मंदिर का दरवाजा खुलता है और कमु हाथ में रक्त रंजित त्रिशुल लिए साक्षात् जगदंबा जैसा रुप धारण कर बाहर निकलती है। कमु को मंदिर में काम के बहाने बुलाया गया था। धीरे–धीरे सभी वहाँ से चल गए, किन्तु उसे काम करने के पैसे न मिले तो वह इंतज़ार करने लगी। कमु मगन से कहती है कि जीवन दुबारा मंदिर की मूर्ति चोरी कर रहा था, पुजारी और जीवन के बीच हाथा–पाई में मूर्ति टूट गई। जीवन ने मूर्ति पुजारी के सिर पर मारी थी, इसलिए वे घायल होकर गिर पड़े। कमु को वहाँ देखकर जीवन उसे भीतर मंदिर में खींच लेता है और हमला करता है। पहले तो वह बचाव के लिए चीखती है फिर सोचती है–

> **"मेरे मुँह से चीख निकल गई, पर मुझे यहाँ कौन बचाए ? और बचाने वाले भी उनके। जो यदि आए तो एक से दो लोग मेरा बलात्कार करें।"**103

यहाँ एक दलित स्त्री की लाचारी प्रकट होती है। मंदिर में भगवान हैं फिर भी वहाँ न तो उसे कोई बचा सकता था, क्योंकि दलितों को मंदिर में प्रवेश निषेध था और नहीं सवर्ण उसे बचाएँगे वे तो बल्कि मौके का फायदा उठाएँगे। होश में आते ही पुजारी त्रिशुल से जीवन पर वार करता है, जीवन पुजारी पर दोबार वार करता है, जिससे वह फिर गिर जाता है। कमु यह दृश्य देखती है। यह वही मुखिया का बेटा था जिससे कमु की माँ पर आत्याचार किया था। अपने और अपनी माँ पर होने वाले अत्याचार का प्रतिकार लेने के लिए वह त्रिशुल पुजारी के पेट से निकालकर जीवन के सीने में, फिर उसकी इन्द्री पर घाव करती है।

मंदिर में दो लाशें पड़ी थीं। मगन कमु को समझाता है, कि यदि पुलिस को सच्चाई का पता चल गया तो उसके बेटे का भविष्य बिगड जाएगा। वह अपना प्रेम प्रस्ताव उसके समक्ष रखकर जीवन भर साथ निभाने की बात कहता है। कमु दूसरा विवाह किसी भी कीमत पर नहीं करना चाहती। कमु और उसके बेटे को बचाने के लिए शिक्षित बेरोजगार मगन सोचता है कि वैसे भी उसके जीवन का कोई लक्ष्य नहीं है, यदि वह जेल में रहेगा तो दो वक्त की रोटी मिलेगी और कमु सुरक्षित रहेगी। मगन कमु को बचाने के लिए खून का गुनाह अपने सिर ले लेता है। मगन का यह बलिदान व्यर्थ जाता है, क्योंकि सवर्ण समाज बदले की आग में जलने लगता है। पूरे दलितवास को आग लगा दी जाती है। जिसमें एक दलित स्त्री और एक बच्चे की भी क्रूर हत्या कर दर जाती है। अर्थात् कमु और उसके बच्चे की हत्या कर दी जाती है।

2.'राती रायण की रताश'– बी. केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् की कहानी **'राती रायण की रताश'** में स्त्री के जातीय शोषण और नारी चेतना की बात आती है। प्रस्तुत कहानी में लेखक ने पुरुष पात्र से अधिक स्त्री पात्र का आकर्षक चित्रण किया है। कहानी की नायिका केशली अन्याय के समक्ष संघर्ष करने वाली स्त्री है। केशली का रुप राती रायण जैसा है रायण का रंग पीला होता है लेकिन यह रुढ़ि प्रयोग है। लेखक ने स्पष्टता की है कि राती रायण की रताश अर्थात् बहुत सुंदर स्त्री का क्रोध। चरित्र ही मनुष्य की शोभा बढ़ाता है। भारत की आध्यात्मिक समृद्धि उसकी अखंडित चारित्र्य की रक्षा के लिए वह खून करने से भी हिचकिचाती नहीं है। जेल की रोटी का उसे कोई डर या भय नहीं है।

केशली के रुप पर मोहित होकर गाँव का सवर्ण पूजिया उसकी सुंदरता को देखता ही रह जाता है। केशली एक विवाहित स्त्री है, यह जानते हुए भी वह, उसे एक रात के लिए अपने पास आने का प्रस्ताव रख देता है। केशली की इस पर क्या प्रतिक्रिया होगी यह दीपा नहीं जानता था, उसने सोचा था कि केशली उसके प्रस्ताव को सुनकर शरमाएगी। लेकिन दीपा के शब्द को सुनते ही नाजुक, कोमल, सुंदर लगने वाली केशली शेरनी बनकर गरजने लगती है। उसकी आँखों से क्रोधाग्नि की ज्वाला निकलने लगती है। किसी शक्ति का रुप धारण करके पूजिया का कोलर पकड़कर उससे कहती है–

> **"मुझे लज्जित करने वाले तेरी माँ ने सवा सेर सोंठ खाई हो तो मुझे अपनी पत्नी बना। नहीं तो तू किसी बेशर्म का बेटा हो तो मेरा दूध पीकर, फिर शर्मखाकर, माँ कहकर चलता बन।"**104

यहाँ केशली एक कर्मठ नारी के रुप में हमारे समक्ष आती है। उसके वाक्य अश्लील लगते हैं, किन्तु एक अनपढ़ स्त्री जिसके पास सबसे कीमती वस्तु उसका चारित्र्य है, ऐसी स्त्री के चरित्र पर कोई कलंक लगाना चाहे, तब वह ऐसी नहीं तो फिर कैसी प्रतिक्रिया देगी ? लेखक ने भी जो अनुभव न किया है, उसी समाज का हमारे समक्ष चित्रात्मक रुप से वर्णन किया है, फिर सभ्य समाज को वह अरुचिकर भी लगे तो इसमें लेखक का क्या दोष है ?

दीपा ने कल्पना भी नहीं की थी, कि केशली उसके प्रणय निवेदन का इस तरह गालियों की बौछार से उत्तर देगी। वह तो उसके शब्द सुनकर स्तब्ध ही रह गया। परिस्थिति की गंभीरता को देखते हुए उससे यह कहकर माफी माँगने लगा कि उससे बड़ी भूल हो गई, अब वह कभी ऐसी गलती नहीं करेगा। दीपा बार–बार उससे विनती करता है, किंतु केशली अपनी बात पर डटी रहती है, कि या तो तू मुझे अपनी मॉ बना या पत्नी। जिस पर दीपा का उत्तर था–

> **"मैं तुझे ले जाऊँ तो तुम्हारा पति आतिया मुझे तो मन का छः शेर ही करके रख देगा ?"**105

यहाँ दीपा की कायरता प्रकट होती है। वह तो केशली को मात्र एक रात के लिए पाना चाहता था, जीवन भर उसके साथ नहीं रहना चाहता। लेखक ने यहाँ जन समाज की कहावतें और रुढिप्रयोग का प्रयोग किया है, उदा. "मन का छः शेर कर देगा" लेखक की भाषा स्थल, काल और वातावरण के अनुरुप है, जिससे हमारी दृष्टि के समक्ष सारे दलित समाज का चित्र उभर कर आता है।

केशली के इस विद्रोही रुप को देखकर गाँव के सभी लोग वहाँ एकत्र हो जाते हैं। कई लोग दीपा की गलती को माफ करने की सलाह देते हैं, किंतु केशली अपनी जिद् पर अड़ी रहती है। अंत में एक बुजुर्ग के कहने पर वह दीपा को छोड़ देती है। केशली अपनी प्रादेशिक बोली में दीपा को अश्लील गालियाँ देती है। जिसे सुनकर दीपा के होश उड़ जाते हैं। दीपा की राती रायण, केशली उसे धूल चटाकर छोड़ती है। केशली दीपा जैसे चरित्रहीन, लंपट व्यक्ति को ऐसा सबक सीखाती है, कि वह दोबारा न तो केशली को छेड़ सके और न ही गाँव की अन्य स्त्रियों को छेड़ने की हिम्मत जुटा सके। वह तो दीपा को छठी का दूध याद दिलाकर ही छोड़ती है।

3. 'मेना' – बी. केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् की **'मेना'** कहानी की नायिका मेना अन्याय के समक्ष लड़ने वाली स्त्री है। जिस तरह घोर अंधेरा, अन्याय के अमावस को एक टिमटिमाता दीपक दूर कर देता है, उसी प्रकार मेना जैसी स्त्री दुःख और अत्याचार के अंधकार भरे जीवन में आत्मविश्वास और परिश्रम रुपी दीपक को जलाए रखती है। मेना एक दलित विधवा है। अपने एक बच्चे और बूढ़ी सास के साथ सगर्भा मेना सुर्योदय से लेकर सुर्यास्त तक काम करती है। प्रतिवर्ष नदी में से रेती को निकालकर नमी वाली जमीन खोजकर वह उसमें सब्जी, खरबूजा, तरबूज आदि लगाती है। यह जमीन मेना और कई दलितों को सरकार ने खेती के लिए दी थी। मेना का पति मणी बाढ़ में मृत्यु को प्राप्त हो गया था। गर्भवती मेना यदि परिश्रम न करे तो अपना परिवार कैसे पाले ? गर्भावस्था के नौवें महीने में भी मेना दिन–रात खेती के काम में लगी रहती है।

मेना यह परिश्रम इसलिए भी करती है, क्योंकि शहर के व्यापारी से पिछले साल आलू की खेती के लिए उसने बीज लिए थे। खेती तो बाढ़ में खराब हो गई, किन्तु व्यापारी का कर्ज़ा उसके सिर आ गया था। पति की मृत्यु के बाद वह व्यापारी के गंदे इरादे को समझ गई थी। वह गलत कार्य करके अपना घर नहीं चलाना चाहती थी। व्यापारी की हवस का शिकार न बनना पड़े इसलिए वह टोकरी में सब्जियाँ लेकर शहर में बेचने जाती थी, क्योंकि गाँव में एक दलित स्त्री से कोई सब्जी नहीं लेता था। उसके इस परिश्रम को देखकर गाँव वाले दाँतों तले ऊँगलियाँ दबा लेते थे। पर मेना थी, कि रुकने का नाम नहीं लेती थी। उसकी सास उसकी दशा को देख–देख कर दुःखी होती थी, किंतु चाहकर भी उसे काम करने से नहीं रोक पाती थी।

व्यापारी के गंदे मनसूबे जब पूरे होते नज़र नहीं आते तो वह पैसों के बहाने मेना पर दबाव डालना चाहता है, ताकि मजबूर होकर मेना उसके समक्ष समर्पण कर दे। मेना उसके इशारे को समझ जाती है, और फावड़ा हाथ में लेकर उसे मारने दौडती है। व्यापारी और उसका नौकर घबराकर भाग जाते हैं, किंतु मेना से बदला लेने की ठान लेते हैं।

उस गाँव में सभी की दशा मेना जैसी थी। सभी गरीब, भुखमरी, अन्याय, अत्याचार जैसे दूषण के शिकार थे। कोई किसी की मदद नहीं कर सकता था। मजबूरन खेती के लिए खाद या बीज व्यापारियों से उधार लेना पड़ता। पैसों के बदले व्यापारी उनकी खेती की सब्जियाँ उनसे मुफ्त में ले लेते और गरीब दलितों के हाथ परिश्रम करके भी खाली ही रहते। व्यापारी वह सब्जियाँ दुगने भाव में बेचकर दुबारा उनका शोषण दुगने जोश से करने को तैयार हो जाते। कड़ी धूप में सुबह से शाम तक परिश्रम करने वाले दलितों के घर में रखा–सूखा भोजन भी वड़ी मुश्किल से मिलता औश्र ठड़क में आराम से बैठे व्यापारी दलितों के परिश्रम से मौज करते इतना ही नहीं दलितों की स्त्रियों का जातीय शोषण भी करते।

मेना अपने पुत्र पसला को पढ़ाना लिखाना चाहती है, किंतु आस–पास कोई स्कूल नहीं थी। वह खेती का काम छोड़ दे तो पुत्र को पढ़ाने भेज सकती थी, किंतु यदि वह यह खेती न करे तो घर कैसे चले ? इसी चिंता में मेना थी कि अचानक वहाँ व्यापारी के कुछ आदमी आधमकते हैं। वह जबरन कागज पर अंगूठा लगवाने के बहाने मेना को उठाकर ले जाना चाहते हैं। इस पर मेना कहती है।

"मुझे हाथ लगाकर देखो, छठी का दूध याद न करा दूँ तो देखना।"[106]

यहाँ गर्भवती स्त्री जिसे नौवा महिना चल रहा है, ऐसी मेना अपनी आत्मरक्षा के लिए फावडा उठाकर उस व्यक्ति पर प्रहार करती है, जो उसे पकड़ना चाहता है। वह व्यक्ति घायल होकर गिर जाता है। आखिर चार–पाँच पुरुषों के समक्ष एक गर्भवती स्त्री कितना लड़ सकती थी। एक व्यक्ति उसे पकड़ ही लेता है। उसके पैर खींचकर उसे रेती में घसीटने लगता है। इसी बीच मेना को प्रसव पीड़ा उठती है और उसके बच्चे का जन्म वहीं हो जाता है। व्यापारी के सारे चेले वहाँ से भाग जाते हैं।

यहाँ पर लेखक ने दलित स्त्री की दशा कैसे दुर्दशा में तबदील होती है, यह बताया है। जिस समय एक गर्भवती स्त्री को सबसे ज्यादा सँभाला जाता है, उसी समय दलित होने की वजह से मेना जैसी विधवा स्त्री की यह दुर्गति होती है, कि जिसे सुनकर भी शरीर के रोंए खड़े हो जाते हैं। आखिर यह शोषण कब तक चलेगा ? कब तक मेना जैसी स्त्री अपने पर होने वाले अन्याय के लिए लड़ती रहेंगी ? कब तक मेना के नवजात शिशु को धरती पर जन्म लेने से पहले, जन्म लेते समय और जन्म लेने के बाद तथा जीवन पर्यन्त ऐसे अत्याचार को झेलना पड़ेगा ?

4. 'जोगन'– बी. केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् की **'जोगन'** कहानी में गैर दलित द्वारा दलित स्त्री का जातीय शोषण किया जाता है, किंतु कहानी की नायिका वाली शोषण के प्रति विद्रोह प्रकट करके आत्मरक्षा करती है। वाली विधवा स्त्री है, उसका पति कालाजी की मौत आरक्षरण मुद्दे पर हुए दंगे में हो गई थी। वाली अपने दस महीने के पुत्र कनु और ससुर रुपाजी के साथ शहर में रहती थी। पहले हाथलारी बाप–बेटे खींचते थे, अब बहू और ससुर खींचने लगे। ससुर और माता–पिता के लाख समझाने पर भी वाली दूसरा विवाह नहीं करना चाहती। वह अकेले ही अपने बेटे का पालन–पोषण करके उसे उच्च शिक्षा देना चाहती है।

एक दलित सुन्दर स्त्री के लिए अकेले जीवन काटना मुश्किल था। एकांत का लाभ लेकर कोई उसे परेशान न करे इसलिए वह ससुर और दुनिया के समक्ष लंबा घुंघट निकालती है। वह अपने रुप को छिपाकर रखना चाहती है। वह नहीं जानती थी कि घुंघट से उसका रुप और अधिक निखरने लगता था। रुपाजी भी अपनी बहू और पोते की चिंता में डूबा रहता था, उसके बाद वाली कैसे जीवन बीताएगी ? कौन उसकी रक्षा करेगा ? वगेरे प्रश्न उसे परेशान कर देते थे।

एक बार एक व्यापारी वाली की आबरु लूटना चाहता है। गाँव से आई वाली पहले तो ऐसे व्यक्तियों से चिढ़कर उनसे झगड़ा कर लेती थी, किंतु धीरे–धीरे उसने ऐसे माहौल में अपने आप को ढ़ाल लिया था। यदि कोई उससे मजाक करता तो वह हँसकर टाल जाती। अपने मन के विद्रोह को प्रकट नहीं होने देती। किंतु व्यापारी पहले उसे बहाने से अपने घर किताबें रखने बुलाता है और बाद में उस पर हमला करता है। वाली समझ जाती है कि अब उसकी इज्जत नहीं बच सकती, वह दौडकर बाल्कनी में जाती है, जब व्यापारी उसके पास आता है तो वह गुस्से में आकर उसके दोनों पैर पकडकर ऊँचा कर देती है, जिससे व्यापारी पाँचवी मंजिल से नीचे गिर जाता है। घबराई हुई वाली नीचे दौड़कर आती है लेकिन अपने ससुर से इस विषय की चर्चा नहीं करती। वर्षा की डरावनी रात थी, चारों ओर अंधकार फैला था। काले बादलों में

रह–रहकर बीजली चमक रही थी। भयभीत करने वाले वातावरण में भक्त कवयित्री पानबाई की एक पंक्ति–

"बीजली की चमक में मोती पूरे पानबाई"107

वाली और उसके ससुर की चेतना में प्रकट होकर समग्र स्थिति को एक नया अर्थ देती है। जिस तरह बीजली का जीवन क्षणिक होता है, उसी तरह मनुष्य का जीवन भी क्षणिक है। पानबाई क्षणिक जीवन को सार्थक करना चाहती है। दलित नारी वाली भी उसी तरह जीवन की क्षणभंगुरता के बीच अपनी अस्मिता के मोतियों की माला पूरने का आग्रह करती है। उसी में वह अपने जीवन की सार्थकता समझती है। दलित जीवन की अपमानपूर्ण स्थिति के बीच पानबाई के आध्यात्मिक सत्य की यह एक बिल्कुल नई और विशिष्ट प्रतीति है।

दलित स्त्री वाली को अपने किए पर कोई पछतावा नहीं था, उसने वही किया था, जो किसी भी स्त्री को अपनी आत्मरक्षा के लिए करना चाहिए। चिंतित ससुर से वह कहती है–

> **"आप मेरी चिंता न करें। मुझे या कनु को कुछ नहीं होगा। मेरे पास मारने के लिए कुछ नहीं होगा तो भी यह मेरे दाँत और यह नाखुन तो हैं न ? ये मेरे त्रिशुल हैं।"108**

यहाँ हम दलित स्त्री में शोषण के प्रति विद्रोह के भाव को देख सकते हैं। रुपाजी को आज वाली किसी देवी के समान लगती है। उसके तेज के समक्ष बीजली की चमक भी फीकी लगने लगती है। यह चमक अत्याचार के समक्ष विद्रोह से उत्पन्न आत्मविश्वास की शक्ति से उसे प्राप्त हुई थी। अपने क्षणिक जीवन को अब वह डरकर या शोषण सहकर नहीं बीताना चाहती थी, वह तो अब स्वाभिमान के साथ निडर बनकर अपने कर्त्तव्य का पालन करती हुई अपने जीवन को सार्थक करना चाहती है। प्रस्तुत कहानी में नारी चेतना की बात आती है। नारी यदि जगदंबा बने, उसका जोगिन रुप व्यक्त करे तो उसके समक्ष आने वाले को दंडित कर सकती है, यह इस कहानी से प्रकट होता है।

5. 'साकडा' (पायल)–विट्ठलराय श्रीमाली

लाली एक दलित स्त्री है। वह सुंदर, परिश्रमी, साहसी है। वह घर के कार्य में निपुण है, साथ ही पति शना की लम्बी बीमारी के कारण खेती की जिम्मेदारी भी निपुणता से निभाती है। वह बीमार पति को बैल–गाड़ी में बिठाकर अपने साथ खेत में ले जाती है। पति की सेवा और बाहरी जिम्मेदारी निभाते हुए वह गॉव की स्त्रियों का आदर्श बन जाती है। गाँव के सरपंच तो उसकी तारीफ करते नहीं थकते। बैलगाड़ी चलाती हुई जब वह गाँव से खेत की ओर जाती है, तो गाँव के सारे पुरुष उसे देखते ही रह जाते हैं।

लाली की हिम्मत एवं परिश्रम का परिणाम उसे अच्छा मिलता है। उसकी खेती अच्छी होती है, जबकि गाँव के अन्य घरों में पुरुष स्वयं खेती पर इतना ध्यान नहीं देते थे, इसलिए उनकी खेती उतनी अच्छी नहीं हुई। सरपंच लाली के परिश्रम का उदाहरण देकर गाँव के भीमा को मेहनत करने की सलाह देते हैं। भीमा, लाली के

सौन्दर्य से प्रभावित होता है और उस पर कुदृष्टि रखता है। एक रात लाली खेत से लौट रही थी। उसके अकेलेपन को देखकर भीमा उसकी साडी पकड़ता है। भीमा सोचता है कि लाली का पति मरीज है, लाली पति की कमजोरी की वजह से किसी पर पुरुष का साथ स्वीकार लेगी। भीमा की सोच गलत निकलती है। लाली का पति भले ही मरीज हो, किन्तु वह उससे अत्यंत प्रेम करती है, उसकी सेवा करने में वह अपना पूरा जीवन समर्पण कर सकती थी। लाली, भीमा की आवाज़ पहचान जाती है और उससे डरे बिना, उसे कहती है कि यदि तुम्हारी माँ ने सवासेर सोठ खाई हो तो, तू भागना मत। लाली हसिया लेकर उसे मारने दौड़ती है। भीमा घबराकर भाग जाता है।

लाली का पति उसे एक किलो की पायल दिलाता है, जिसे पहनकर उसकी सुंदरता और निखर जाती है। लाली स्वयं का असली गहना पति को ही मानती है, किन्तु स्त्री होने के कारण उसकी एक प्रबल इच्छा थी कि उसके पास एक सुंदर, वजनदार पायल हो। यह पायल उसी के परिश्रम के कारण खरीदी जा सकी थी।

खेत में काम करती लाली पर भीमा पीछे से हमला करता है। पहले तो लाली संभल नहीं पाती, किन्तु अपनी लाज बचाने के लिए वह रौद्र रुप धारण कर लेती है। भीमा स्त्री को अबला समझ रहा था, किन्तु हर स्त्री अबला नहीं होती, यह उसके जीवन की बहुत बड़ी भूल सिद्ध होती है। लाली के पति ने उसे जो पायल दिलाई थी, वह पायल मात्र शृंगार ही नहीं उसके हथियार की तरह काम में आती है। लाली ने भीमा को पायल के प्रहार से तोड़ डाला। दूसरी बार किसी स्त्री को परेशान न कर सके, इसलिए उसने भीमा की कमर ही तोड दी।

भीमा की कमर तोड़ने वाली लाली एक सबला नारी होने का परिचय देती है। एक स्त्री के लिए उसकी पवित्रता से बढ़कर कुछ नहीं होता। दलित स्त्री जी–तोड़ मेहनत करके अपना गुजर कर सकती है, क़िन्तु अपनी पवित्रता नहीं खोना चाहती।

6. 'वंटोड'–भी.न.वणकर

भी.न.वणकर की **'वंटोड'** कहानी में दलित जीवली अकेले ही फतेसंग–शंकरीया जैसे सवर्ण पुरुषों का मुकाबला करती है। गरीब, दलित जीवली आत्मरक्षा के लिए हवसखोरों को सबक सीखाती है। जीवली सवर्णों के गंदे इरादों को नाकाम कर देती है और कहती है–

> **"गरीब हूँ, अछूत हूँ और अबला हूँ इसलिए किसी के पैर के नीचे पीस नहीं जाऊँगी। समझे ! तुम जाओ, शर्मनाक जीवन जीने से तो मैं लड़ लूँगी।"**109

ऐसा प्रतिकार करने वाली जीवली से हारकर सवर्ण दलितवास में आग लगा देते हैं। जीवली को हासिल न कर पाने पर वे उसे जलती ज्वालाओं के बीच फेंक देते हैं। कहानी का ऐसा करुण अंत अप्रतीतिकर लगता है। जीवली का एक रुप सबला का, तो दूसरा अबला नारी का दिखाया गया है। कहानी के अंतिम अनुच्छेद में–

> **"सूरज साक्षी है परंतु वह भी अभी क्षितिज में डूब जाएगा और सर्वत्र.... अनावश्यक है।"**110

प्रस्तुत कहानी प्रतीकात्मक है। अनेक अर्थ निष्पन्न होते हैं। एक

तो प्रकृति में उठाने वाला 'बंवडर'(वंटोड) तो है ही। इसके अतिरिक्त जीवली को देखकर फतेसंग शंकरीया में उठने वाला वासनारुपी बवंडर, जीवली में इन पापियों के समक्ष उठने वाले कोध का बवंडर, दलितवास में आग लगाई गई इस घटना से जीवली में उठने वाला प्रतिकार का बवंडर। डॉ.शरीफा बीजलीवाला ने लिखा है कि–

> **"वन में घुमनेवाला बवंडर अंत में आग के तांडवरुप बवंडर में परिवर्तित हो जाता है।"**[111]

7. 'रुपा का पानी'–बी. केशरशिवम्

प्रस्तुत कहानी में लेखक बी. केशरशिवम् ने मुख्यतः रोटी, कपड़ा और मकान की प्राथमिक आवश्यताओं की बात के साथ–साथ दलितों के लिए प्राथमिक आवश्यकता पानी को महत्त्व दिया है। कहानी की नायिका रुपा नलसरोवर के नज़दीक के गाँव में अपने पति ओधड़ के साथ रहती थी। गाँव में पीने के पानी की समस्या थी। तीन गाँव पार करके सवर्ण रामजी नामक व्यक्ति के हेन्डपंप से पानी लाना पड़ता था। रामजी अपने हेन्डपंप से पानी नहीं देना चाहता है। जिसे पानी चाहिए उसे राजमी के खेत में मुफ्त में मजदूरी करनी पड़ती थी। स्त्रियों का वह शारीरिक शोषण भी करता है। मजबूरी में दलित स्त्री–पुरुष रामजी के अत्याचार को सहते थे, क्योंकि उससे दुश्मनी करने का नतीजा बूंद–बूंद पानी के लिए तरसना था। एक बार ओधड़ को पानी भरते समय रामजी ने धक्का दे दिया था, तब से वह वहाँ पानी भरने नहीं जाता था, किन्तु जीवन के लिए अति–आवश्यक वस्तु पानी के बिना कोई जीवित नहीं रह सकता इसलिए रुपा वहाँ पानी भरने जाती है।

रामजी रुपा की मजबूरी जानता था। मौके का फायदा उठाकर वह रुपा को आँख मारता, तो कभी उसका स्पर्श करता। रुपा को यह सब अच्छा नहीं लगता था। अपने पति से वह सारी बातें बताती है। गाँव में पानी खारा था, इसलिए ओधड़ भी रामजी के समक्ष आवाज नहीं उठा सकता था। वह जानता था कि रुपा हिम्मती है, वह डरने वाली नहीं। वह सोचता है–

> **"वैसे तो रुपा कोई डर जाय ऐसी नहीं। यदि कोई उसका स्पर्श करेगा तो उसके सिर पर घड़ा मारकर आए ऐसी है।"**[112]

रुपा जितनी सुंदर थी उतनी ही, सजग भी थी। वह जानती थी कि रामजी के मन में क्या चल रहा है। रामजी दलित स्त्रियों को लालच देकर किस तरह उनका शारीरिक शोषण करता है, उन्हें खेत में बेगार की मजदूरी करवाता है, यह सब से रुपा ने अपने आपको तकलीफों का सामना करने के लिए तैयार कर लिया था। रुपा बलवान और बहादूर थी। उसके पति को भी उस पर विश्वास था, कि वह किसी का अत्याचार नहीं सहेगी बल्कि उसे सबक सीखाकर आएगी।

दलितों को भर पेट खाना नसीब नहीं होता था, तो घर की तो बात ही क्या ? किन्तु बाड में रुपा और ओधड की झोंपडी बह गई थी, इसलिए सरकार ने उन लोगों की झोंपड़ी पर घांस की जगह विलायती कवेलु लगवाये थे। रुपा और ओधड की खुशी का ठिकाना न था। रुपा के चार बच्चे थे, किन्तु मोहल्ले में अधिकतर दलितों के लगभग दस–दस बच्चे थे। एक ओर गरीबी दूसरी ओर उस पर इतनी बड़ी फौज का भरण–पोषण करना उनके समक्ष बहुत बड़ा प्रश्न था। भूमि के खारे होने से सुअर बेचकर

ही भरण–पोषण करते थे। खाने मे बंटी (एक प्रकार का अनाज) की रोटी साथ ही नल सरोवर में से मछली, बतक, तालाब की मूर्गी मारकर उनका उपयोग करते थे।

एक बार ओधड़ को पुलिस ने तालाब में से चोरी करते हुए पकड लिया था और उसे इतना मारा था कि वह खडा नहीं हो सकता था। उस दिन से उसने चोरी करना बंद कर दिया था।

जयमाल ओधड़ का मित्र है जिसे सरकार से पचास प्रतिशत सबसिडी से जीप मिली थी। अर्जुन सिंह जयमाल को पाँच सौ रुपये देकर अंगूठा लगवा लेता है और बैंक में हफ्ता भरकर जीप पर अपना कब्जा कर लेता है। दलितों की दयनीय स्थिति सुधारने के लिए सरकार जो नियम बनाती है उसका लाभ उन दलितों से अधिक सवर्णों को मिल जाता है। जयमाल की आर्थिक स्थिति में सरकारी रजिस्टर में सुधार देखा जा सकता है, किन्तु वास्तविकता कुछ और थी, कि उसके पास एक मटका खरीदने के भी रुपये न थे। सरकारी नियमों के अनुसार जो दलितों को आर्थिक मदद मिलती है, उसमें भी रिश्वत देनी पड़ती है, अन्यथा वह आवेदन–पत्र आगे बढ़ता ही नहीं, रोक दिया जाता है।

मित्र से बात करते हुए भी ओधड़ का मन बैचेन था। रुपा पानी लेकर नहीं लौटी थी। चिंता में वह इधर–उधर मंडराने लगा। दूर से वह रुपा को बिना घड़े के आते देखता है। रुपा उसका हाथ पकड़ कर उसे झोंपड़े में लेजाकर हाँफते–हाँफते कहती है–

> **"आज पानी भरने के बाद उस रामजी ने मेरी आबरु लेने के लिए मुझे अपनी बाहों में ले लिया। आस–पास कोई नहीं था। मुझे वह नहीं छोड़ रहा था। उसने मेरा ब्लाऊज फाड़ दिया।"113**

एकलता का लाभ उठाकर रामजी रुपा पर हमला करता है, उसके कपड़े फाड़ता है, उसके इस व्यवहार से रुपा अबला का रुप छोड़कर सबला, बहादुर स्त्री बन जाती है। क्रोध में उसकी आँखें लाल हो जाती हैं और वह रामजी का गला घोटकर उसकी जान ले लेती है। रुपा की आँखों में ओधड़ को तमतमाते हुए सूर्य के तेज से भी अधिक गर्माहट दिखाई दे रही थी, जिसमें ओधड़ भी जलने लगा था।

यहाँ रुपा का चरित्र स्त्री शक्ति को प्रस्तुत करता है। नारी के दोनों रुपों में से रुपा सबला नारी बनकर अपनी आत्मरक्षा करती है और रामजी जैसे व्यक्ति जो अपने नाम की भी मर्यादा नहीं रखते ऐसे राम के रुप में रावण की हत्या कर देती है।

9. 'शहर की बहू'– बी. केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् की प्रस्तुत कहानी की नायिका कमू शहर में रहती थी, किंतु उसका विवाह गाँव में किया जाता है। शहर के स्वच्छंद वातावरण में पढ़ी–लिखी कमु गाँव की गरीब, अनपढ़ स्त्रियों की दशा को तब समझती है, जब वह स्वयं गाँव में दलित स्त्री को किस तरह की मुश्किलों का सामना करना पड़ता है, यह देखती है। जब गाँव का सवर्ण व्यक्ति गरबड़ उसे छेड़ता है और उसका हाथ पकड़ लेता है, कहानी में इसका वर्णन इस प्रकार है–

> **"उसने कमु का हाथ पकड़ा। करशन ने कमु हाथ छुडाने के लिए उसके हाथ पर काट लिया।.... करशन की चीख सुनकर कमु ने उसके सिर पर**

रखा मटका उस गरबड़ के सिर पर मार दिया। गरबड़ नीचे गिर गया। कमु तुरंत उसकी छाती पर चढ़ बैठी। वह लगातार उसे मुक्का मारने लगी। गरबड़ के होठ और दांत पर चोट लगने से उसके मुँह से खून निकलने लगा।''114

नौ वर्षीय करशन अपनी मुँहबोली भाभी कमु को बचाने के लिए गरबड़ को काटता है। तब तक कमु अपने हाथ को छुड़ाने का प्रयत्न करती है किंतु जैसे ही गरबड़ करशन को चोट पहुँचाता है, कमु, में न जाने कहॉ से शक्ति आ जाती है। वह गरबड़ को उसके किए की सज़ा उसकी पिटाई करके देती है। कमु उस समय चण्डी का रुप धारण कर लेती है।

कमु के इस साहस भरे काम से उसका परिवार और दलित समाज संकट में आ जाता है। गरबड़ अपने साथियों को लेकर कमु को सजा देने आता है। बहुत गालियाँ देता है, बड़ी मुश्किल से उसे वहॉ से यह कहकर लौटाया जाता है कि अब दोबारा ऐसी गलती नहीं होगी। कमु का पति उससे नाराज़ होता है। वह गुस्से में कमु पर हाथ उठा देता है। दुःखी होकर कमु अपने मायके चली जाती है। उसके जाने के बाद गाँव में सारा मामला ठंडा हो जाता है। कमु को भी अपने पति एवं परिवार के प्रति अपने कर्त्तव्य का अहसास होता है। इसलिए जब वह अपने ससुराल लौटती है, तो वह पहले वाली शहर की कमु नहीं रहती, वह एक गरीब, दलित वर्ग की स्त्रियों की तरह अपने हुनर और परिश्रम का परिचय इस प्रकार देती है–

''वह कवेलु के टुकड़े बिन लाती और घर के सामने ढ़ेर लगाती जब मजदूर प्लास्टर करने के लिए टुकड़े लेने आते तब वह सबसे पहले टोकरी लेकर दौड़ती। एक टोकरी के दो या तीन आने मिलते। रेलवे की पटरी पर से आधे जले कोयले और कोयले का चूरा ले आती। तालाब में से मिट्टी लाकर उसके साथ यह कोयले के चूरे को मिलाकर उसके उपले बनाकर सूखाती। उसे सिगड़ी में जलाती कपास के छिलके न फेंककर, गोबर के साथ मिलाकर, उसके उपले बनाकर सूखाती.... कमु अब तो जैसे पहले की कमु ही न रही थी।''115

कमु के परिश्रमी जीवन की कडवी वास्तकिकता के साथ समस्त दलित समाज की कड़वी सच्चाई का चित्र उभरकर आता है।

पुरानी बातों को भूलकर कमु नए सिरे से अपने जीवन को जीना चाहती है, किंतु आरक्षण के प्रति विद्रोह हुआ जिसमें करशन फँस गया। करशन की माँ पूंजी को परेशान देखकर कमु उसे बचाने के लिए पूंजी के साथ जाती है। करशन को लेकर जैसे ही वे दोनों लौटती हैं कि रास्ते में दंगाई उन्हें घेर लेते हैं। करशन को चोट से बचाने के लिए कमु पहले तो स्वयं उस पर लेट जाती है और लाठियों की बरसात सहती है। लेकिन जब एक लाठी करशन के सिर पर लगती है, तो उसकी चीख सुनकर कमु जैसे अपनी सुध–बुध खोकर करशन को मारने वाले व्यक्ति गरबड़ को पकड़ लेती है। एक बार फिर वही व्यक्ति उसके समक्ष था जिसे वह पहले घायल कर चुकी थी। कमु के शरीर में गरबड़ को देखकर कपकपी दौड़ गई। उसकी आँखें और चेहरा लाल हो गया। उसकी नाक से गरम हवा निकलने लगी। उसका शरीर साक्षात् जगदंबा जैसा लगने लगा, केवल उसके हाथ में त्रिशूल ही नहीं था। वह कहती है–

"उस दिन तो वह रबारी आ गया था इसलिए तू बच गया था। आज देखती हूँ तुझे कौन बचाएगा ?"116

कमु का यह विद्रोही रुप कुछ समय के लिए लुप्त हो गया था, किन्तु वह खत्म नहीं हुआ था। विपरीत परिस्थिति में उसका यह जगदम्बा का रुप फिर से जागृत हो जाता है। वह गरबड़ के शरीर के अंग जैसे नाक, कान को अपने दाँतों से काटकर फैंक देती है। आज वह उसे किसी शेरनी की तरह खा जाना चाहती थी। कमु के इस विद्रोही रुप को देखकर कोई उसके पास फटकने की हिम्मत नहीं जुटा पाता। कमु क्रोध से काँप रही थी और कहती जा रही थी–

"मैं देवी हूँ, खप्पर लेनेवाली देवी। आओ मेरे पास। अभी तो मुझे तुम्हारा खून पीना है। यह मेरे दाँत और नाखून मेरे त्रिशूल हैं।"117

कमु ने अपना एकमात्र भाई ऐसे ही आरक्षण के झगड़े में खो दिया था। भाई के समान करशन की जान जब खतरे में आती है तो कमु के अचेतन मन पर छाई हुई देवी शक्ति जागृत हो जाती है। यह शक्ति उसे अन्याय, अत्याचार के विरुद्ध लड़ने की शक्ति प्रदान करती है। यहाँ कमु नारी में रहे शक्ति रुप को प्रकट करती है।

<u>9. 'खील'–बी. केशरशिवम्</u>

बी. केशरशिवम् की प्रस्तुत कहानी **'खील'** पानी और उका नामक पति–पत्नी के जीवन–संघर्ष को प्रस्तुत करती है। दलित उका जिस गाँव में रहता था वहाँ पर घोर अस्पृश्यता के साथ–साथ सवर्णों द्वारा दलितों पर अत्याचार करना आम बात थी। सवर्णों का दबदबा इतना अधिक था कि यदि दलित के पास पैर में पहनने के लिए चप्पल हो तो भी वह नंगे पैर चलने के लिए मजबूर थे।

फ्लेश बेक पद्धति का प्रयोग प्रस्तुत कहानी में किया गया है। नायक उका उन बीती बातों का याद करता है जो बचपन में उसने अपने दलित होने के कारण भोगी थी। आज वह शहर में रहता है और अपने परिवार का भरण पोषण करने के लिए कचरे में से पोलीथीन बेग, पुरानी स्लीपर, लोहा, लकड़ी आदि इकट्ठा करके उन्हें बेचकर अपना जीवन–यापन करता है। उसके पैर में दो रंग की चप्पलें देखकर मोहल्ले के दो बच्चे उसका मजाक उडाते हैं। जीवन भर नंगे पाँव चलने वाला उका, अपने बचपन की उन कड़वी यादों में खो जाता है, जिस दिन उसने चाचा द्वारा दी गई चप्पल पहली बार जीवन में पहनी थी। वह बहुत खुश था। गाँव के जोइताजी से उसकी यह खुशी बर्दाश्त नहीं हुई कि उनके समक्ष एक दलित ने चप्पल कैसे पहन ली ? उन्होंने एक लकड़ी दूर से ऐसी फेंकी कि उसके घुटनों पर जोर से लगी। उका वहीं गिर पड़ा। जोइताजी ने उससे कहा

"अब रोए बिना चप्पल निकाल दे नहीं तो पैर तोड़ दूँगा।"118

गाँव में सवर्णों के समक्ष कोई दलित यदि चप्पल पहनता था, तो उसकी ऐसी दुर्गती होती थी। इसलिए दलित चप्पल पहने हुए हों भी तो दूर से किसी सवर्ण को आता देखते, तो चप्पल उतारकर अपनी टोकरी में रख देते। तेज धूप, कांटे, पत्थर, कंकड आदि में नंगे पाँव चलना उनकी विवशता थी। गरीबी के कारण चप्पल खरीदने की शक्ति उनमें वैसे भी नहीं थी, किन्तु यदि वे खरीद भी लेते थे तो पहनने का

अधिकार उन्हें नहीं दिया गया था। उका को याद आता है कि एक बार बिना चप्पल पहने वह पानी के साथ ईधन के लिए लकड़ियॉ लेकर गाँव लौट रहा था। पानी ने चप्पल पहन रखी थी। उका के पैर में काँटा लगा गया। पानी उसकी वेदना देखकर गुस्से से उसे कहती है कि–

"मैं कब से कह रही हूँ चप्पल पहन लो।"119

इस पर उका कहता है–

"मैं तेरी चप्पल पहनूँ तो फिर तू क्या पहनेगी ? मुझे लगा ऐसा कांटा तुझे न लगता ?"120

पति–पत्नी के इस प्रेम भरे वार्तालाप को दिलूभा जैसे सवर्ण व्यक्ति की नज़र लग जाती है। वह पानी पर बूरी नज़र डाले एक महीने से फिराक में था। पानी और उका इस बात की भनक पड़ते ही उसकी मजदूरी करना छोड़कर, उससे दूर रहते हैं। किन्तु एक बार उका की मौजूदगी में ही दिलूभा पानी पर हमला करता है। उका स्तब्ध रह जाता है, किन्तु वह अपना होश संभालकर दिलूभा के पैर पकड़ लेता है और पानी को वहाँ से भागने को कहता है। पानी जब तक घर ने पहुँच जाए तब तक वह उसके पैर नहीं छोड़ता। दिलूभा अपने हाथों से उका को इतना मारता है फिर भी उका जोंक की तरह उससे चिपट जाता है। बाद में वह दिलूभा के इस अपराध के लिए उसे दंड देता है। पहले उसकी नाक, फिर आँख और बाद में उसका गला दबा देता है। उका उससे कहता है–

"मैं मर जाऊँ तो परवाह नहीं परंतु तुझे तो मार ही दूँगा। लोग भी जानेंगे कि मेरे जैसे उका के हाथों तेरी मौत हुई है। फिर मुझे उसकी कोई चिंता नहीं। भले ही मुझे जेल जाना पड़े।"121

उका अपनी पत्नी की रक्षा के लिए दिलूभा की हत्या कर देता है। किसी का शोषण सहकर जीवन जीने से अच्छा अपनी आत्मरक्षा करते हुए मर जाना यह उसे ज्यादा उचित लगता है। गाँव में उसका रहना उचित नहीं था, इसलिए वह रातों रात पानी को लेकर कंकर, पत्थर, काँटों में दौड़ता हुआ शहर आ गया था। यहॉ का जीवन भले ही संघर्षों से दूर न था किन्तु गाँव जैसी दुर्दशा यहाँ नहीं थी।

पानी और उका को अपना गॉव छोडना पड़ता है। संपूर्ण जीवन अभावों में रहकर भी पैर में उका एक जोड़ी चप्पल खरीदने में असमर्थ है। चाहे गॉव हो या शहर दलितों की स्थिति में ज्यादा अंतर नहीं, फिर भी गॉव के दलितों से शहर के दलित आज अधिक सुखी हैं। प्रस्तुत कहानी में ग्रामीण समाज में दलितों के प्रति होने वाला अत्याचार, भेदभाव, शोषण आदि पर प्रकाश डाला गया है। भाषा में प्रादेशिकता देखी जा सकती है। उका द्वारा आत्मरक्षा के लिए उठाया गया कदम दलित चेतना, दलित शक्ति, स्वाभिमान, निडरता को प्रस्तुत करता है।

10 'डाईंग डेक्लेरेशन'–बी. केशरशिवम्

प्रस्तुत कहानी **'डाईंग डेक्लेरेशन'** दलित नारी के जीवन की पीड़ा को प्रस्तुत करने वाली है। कहानी की नायिका मणी और उसकी पुत्री जड़ी एक सवर्ण मालिक के घर काम करने जाते हैं। यह मालिक गरीब दलितों को आवश्यकता पड़ने पर कर्ज़ देता था और बदले में मजदूरी करने आए पुरुष और स्त्री का शोषण करता था। सुंदर स्त्रियों का शारीरिक शोषण होने से दलित पति--पत्नी के बीच दूरियाँ आती है। पति शराब पीने लगता है और पत्नी को पीटकर अपना क्रोध शांत करता है। वह मालिक के समक्ष अपना विरोध प्रकट नहीं कर सकता था, इसलिए अपने आपको कष्ट देता है।

मणी का पति धनिया ऐसी ही स्थिति का सामना करता है। मालिक ने उसकी शादी में एक हजार रुपये कर्ज़ दिया था। बदले में उसका ससुर, धनिया उसके घर और खेत में हाडतोड़ मेहनत करते थे, किन्तु मूल कीमत वहीं की वहीं रहती है। समाज में अंधविश्वासपूर्ण रीतिरिवाज और झूठे दिखावे के कारण व्याज पर लिए गए रुपयों के बोझ से उनकी आर्थिक स्थिति बिगड़ती जाती है और उसकी भरपाई करने के लिए स्त्री को मजबूरन मालिक के समक्ष समर्पण करना पड़ता है।

यह दुःख उस गाँव में मात्र मणी का नहीं उसकी सहेली खली के साथ भी यह समस्या थी। उसका पति भी उसे पीटता और उसकी पत्नी को चरित्रहीन समझकर दुःखी रहता। मणी रवली की पीड़ाजनक बातें सुनकर अपने भूतकाल में खो जाती है। उसे याद आता है कि धनिया भी मालिक के साथ उसके (मणी के) अनैतिक संबंधों को जानकर दुःखी हुआ था। उसे पीटकर शराब के नशे में डूबकर वह अपने दुःख को दूर करना चाहता है। एक बार मालिक की पत्नी धनिया को प्रेम संबंध स्थापित करने का अवसर देती है। बदले की भावना से धनिया उससे शारीरिक संबंध स्थापित करता है। मालिक को एक दिन इस बात की जानकारी हो जाती है। वह धनिया को बूरी तरह पीटता है। धनिया को कोई अफसोस नहीं था। वह मणी पर हुए अत्याचार का बदला ले चुका था, यदि उसे इस कार्य के लिए कठोर दंड दिया जाय तो वह स्वीकारने को तैयार था। अपनी पत्नी के स्वाभिमान को वह न बचा पाया था, इसलिए वह मालिक को भी उसी आग में जलते देखना चाहता है, जिसमें वह स्वयं कब से जल रहा था। क्योंकि वह गरीब, निःसहाय था किन्तु मालिक उसे मरवाकर जमीन में गाड़ देता है। मणी सब कुछ जानकर भी कुछ नहीं कर पाती। इतना ही नहीं मालिक मणी के ससुर पर अपनी पत्नी की हत्या का आरोप भी लगाता है और उसे जेल की सज़ा हो जाती है।

मणी की सास और मणी पर चोरी का इल्जाम लगाकर उन्हें चोरी कबूल करने के लिए विवश किया जाता है। न स्वीकारने पर उनकी यौनी में मीर्च डाली जाती है। दलित यदि चोरी न भी करे तो भी उन्हें उस चोरी के करने का दंड दिया जाता है, वे गूँगे बनकर सब कुछ सहन करने के लिए विवश थे। बूढ़ी सास इतनी पीड़ा सहन नहीं कर पाती और कुछ दिनों में मर जाती है।

अब अकेली मणी अपनी जवान होती पुत्री जड़ी के साथ मालिक के घर में ही काम करने लगती है। उसे जडी की चिंता है, वह उसके हाथ पीले करना चाहती है, क्योंकि मालिक का छोटा भाई गोपाल जड़ी पर बुरी दृष्टि डालता है। गोपाल की पत्नी जड़ी से वैर करती है और पति के साथ मिलकर जड़ी को जहर खिला देती है। दुःखी मणी अपनी मरती हुई बेटी को अस्पताल ले जाती है। पुलिस उसका बयान लेती है

जिसमें जड़ी कहती है कि मालीक और गोकुल की पत्नी ने जहरीली दवा पीलाकर मेरी बेटी को मारने की साजिश की है।

जड़ी निर्दोष थी किन्तु गोपाल के दुष्कृत्य की सज़ा उसे दी जाती है। गोपाल को सुधारने की जगह उसकी पत्नी जडी का अंत करके उसे रोकना चाहती है। जड़ी के भावि पति के कारण पुलिस थाने में शिकायत दर्ज की जाती है और मेजिस्ट्रेड के सामने जड़ी का बयान लिया जाता है। गोपाल और उसकी पत्नी को दोषी पाया जाता है और सज़ा हो जाती है।

जड़ी की मृत्यु हो जाती है। उसके विवाह का सपना, सपना ही बन जाता है। उसकी मेहंदी देखकर मणी फूट–फूट कर रोती है। मणी का बेटा बुधिया अपनी बहन के मृत देह के साथ वह मेंहदी बांध देता है। उसे मेंहदी के साथ–साथ जड़ी के सुहागन होने का सपना बुधिया को अग्नि में जलता दिखाई दे रहा था।

प्रस्तुत कहानी में दलित धनिया की पत्नी मणी, जड़ी, खली, उसके सास–ससुर सभी सवर्णों के शारीरिक, मानसिक, आर्थिक शोषण के झेलते हैं। अंधविश्वास, अशिक्षा, बाह्यआडंबर दलितों को कर्ज़ लेने के लिए विवश करते हैं, जिसमें फँसकर वे अपना वर्तमान तो जीते हैं किन्तु भविष्य चौपट कर देते हैं। मालिक का अत्याचार स्त्री–पुरुष दोनों को सहना पड़ता है। अंत में मणी अपनी बेटी के लिए इंसाफ पाना चाहती, है और दोषी को सज़ा दिलवाती है। इस तरह 'सौ सुनार की एक लुहार की' वाली बात यहाँ मणी करती है। अब बहुत हो चुका यह सोचकर मणी नई पीढ़ी को उसे अत्याचार से मुक्त करने का नया मार्ग बनाने का प्रयास करती है।

3.5 दलित महिलाओं का पारिवारिक शोषण

1. 'इसमें सीता का क्या दोष' – विठ्ठलराय श्रीमाली

प्रस्तुत कहानी में भीखा नामक दलित व्यक्ति अपनी पत्नी दो बेटे और एक बेटी सीता के साथ रावणवास नामक गंदी बस्ती में रहता है। गधों पर सामान की हेरा–फेरी करके किसी तरह अपना गुजारा चलाता है और शाम को तंबूरा बजाकर गीत गाकर अपना तथा गाँव वालों का मनोरंजन करता है। पन्द्रह वर्षीय सीता अपने माता–पिता की सहायता और घर के काम में मदद भी करती है। सीता की सुंदरता को देखकर गाँव का ही एक सवर्ण युवक धीरा उस पर बुरी नज़र रखता है। एक रात मौका पाकर वह घर की खिड़की से भीतर आकर सीता का स्पर्श करता है। सीता जाग जाती है। बाहर बैठा भीखा बेटी की आवाज सुनकर भीतर आता है, तब तक धीरा रफुचक्कर हो जाता है।

भीखा एक गरीब, दलित पिता है। वह धीरा के विरुद्ध कुछ नहीं कहना चाहता। सारा गाँव धीरा की बुरी आदतों से वाकीफ है, वह किसी भी सुंदर स्त्री को देखकर उसे पाने के लिए आतुर हो जाता है। कई बार उसे इसी वजह से मार भी खानी पड़ी, किन्तु वह सुधरा नहीं। इस घटना के बाद भीखा की तो नींद ही हराम हो गई। आज अचानक सीता उसे युवा लगने लगी। सीता के विवाह की चिंता में उसे रात–भर नींद नहीं आई। बेटी की बदनामी न हो इसलिए भीखा गम खाकर रह गया। यदि वह पटेल के विरुद्ध आवाज भी उठाएगा तो उसकी रोजी–रोटी और दूसरा व्यवहार

भी बंद हो जाएगा। सब कुछ समझकर वह निर्णय लेता है कि जल्द–से–जल्द सीता का विवाह कर देना चाहिए।

दूसरे दिन सुबह भीखा पास के गाँव में विवाह की बात करने जाता है। सीता कुएँ से पानी भरकर लौट रही थी। धीरा अपने मित्रों के साथ वहाँ खड़ा था। वह सीता का हाथ पकड़ लेता है और कहता है कि यह घड़ा मेरे घर उतार और मेरे घर चल। बस सीता को क्रोध आ गया उसने हाथ छुड़ाकर, घड़ा नीचे रखा और धीरा के बाल पकड़कर उसे चार तमाचे गाल पर जमा दिये। ये दृश्य देखकर धीरा के मित्र वहाँ से फरार हो जाते हैं। सीता के पराक्रम की बात पूरे गाँव में फैल जाती है। सीता के जवाब से मन–ही–मन सभी स्त्रियाँ प्रसन्न होती हैं। साथ ही सीता की माँ की चिंता और बढ़ जाती है। शाम को भीखा सीता का विवाह तय करके लौटता है तो पत्नी उसे सारी बात बताते हुए चिंतित होकर कहती है।

> **"सीता के पराक्रम की बात पूरे गाँव में फैल गई है। उसमें हमारी औरतें तो, मुझे एक जगह बैठने भी नहीं देती। वे कहती है कि हमारी दबी हुई कोम, हमारी लड़की से ऐसा हो सकता है ? अब क्या होगा ? गाँव को छोड़कर जाने का समय आ गया है।"** [122]

बेटी की बहादुरी की तारीफ सुनकर भीखा की चिंता बढ़ जाती है। जो समस्या सीता के समक्ष थी। वही समस्या सारे गाँव की युवतियों के समक्ष भी थी, किन्तु सीता धीरा को ईंट का जवाब पत्थर से देती है। ऐसा कार्य करने का साहस गाँव की किसी दलित स्त्री में नहीं था। भीखा की चिंता और बढ़ जाती है। जल्दबाजी और मजबूरी में वह उस युवक से सीता का विवाह कर देता है, जो शराबी था। सुहाग की सेज पर सीता अपने पति का इंतजार कर रही थी। पति मुलजी मित्रों के साथ भजन गाने चला जाता है। धीरा मौके और अंधेरे का फायदा उठाकर सीता के कमरे में चला जाता है। सीता धीरा को अंधेरे में पहचान नहीं पाती और अपना पति समझकर उसके समक्ष समर्पण कर देती है। थोडी देर में धीरा वहाँ से भाग जाता है और मुलजी सीता के पास आता है। उसकी बातों से मुलजी को पता चल जाता है कि उससे पहले कोई पुरुष सीता के साथ था। बस सुबह होते ही वह पिता से शिकायत करता है, कि सीता चरित्रहीन है, मुझे ऐसी पत्नी नहीं चाहिए।

पूरे समाज को बुलाकर सीता और मूलजी का तलाक करा दिया गया। रामायण की सीता की तरह यह सीता भी निर्दोष थी, किन्तु उसकी निर्दोषता को कौन स्वीकार करता ? सीता को दोहरा आघात लगता है। उसकी जिंदगी तहस–नहस हो जाती है। उसका सर्वस्व लुट चुका था। वह पागलों की तरह हँसने लगती है। वह चीख–चीख कर धीरा को गालियाँ देने लगती है। यहाँ सीता का जातिगत शोषण तो होता ही है, उसका पारीवारिक शोषण भी किया जाता है जिसके कारण वह अपना मानसिक संतुलन खो बैठती है।

2. <u>'भूल किसी की भोगे कोई'– विट्ठलराय श्रीमाली</u>

प्रस्तुत कहानी की नायिका हीरा 13–14 वर्ष की नाबालिक लड़की है। हीरा का पिता गरीब है और खेत में मजदूरी करता है। पिता यह सोचता है कि बेटी को अच्छा घर मिल रहा है, यह सोचकर रुपये लेकर एक मील मजदूर के साथ हीरा का विवाह कर देता है। हीरा सातवीं तक पढ़ी थी, वह अपनी आगे की पढ़ाई करना चाहती

है, किंतु पिता अपनी जिम्मेदारी को जल्द निपटाने की सोचकर बिना सोचे समझे बेटी का विवाह कर देता है। गाँव के साधारण वातावरण में पली–बढ़ी हीरा शहर पहुँच जाती है।

हीरा का पति मोहन उससे उम्र में 11–12 वर्ष बड़ा था। मोहन को अपनी पत्नी से कई अपेक्षाएँ थी, कि वह शहरी लड़कियों की तरह सज–धज कर रहे। उसे अच्छा भोजन बनाकर खिलाए, साथ ही उससे प्रेमपूर्ण वार्तालाप करे। हीरा, पति की अपेक्षाओं को पूर्ण नहीं कर पाती। वह एक निर्दोष बच्ची थी। पति को कैसे खुश किया जाता है, कैसे सज–धज कर उसे मोहित किया जाता है। ये सारे गुणों के लिए वह न तो शारीरिक रुप से तैयार थी, न ही मानसिक रुप से। मोहन हीरा को पत्नी के रुप में पाकर खुश नहीं होता। अपनी मॉ से वह कहता है कि–

> **"यह गँवार औरत मेरे गले किसने बाँध दिया ? कुछ समझती ही नहीं। यह तो पत्नी है या गधी ? पूरे गाँव की गँवार आई है।"**123

गाँव की अबोध हीरा, पति के स्वभाव और अपेक्षाओं को समझ नहीं पाती। मोहन भी अबोध हीरा से प्रेम से नहीं बल्कि अत्यधिक कठोर व्यवहार करता है। मोहन, हीरा को गालियाँ देता है, उसे अपमानित करता है। मोहन की माँ अपने बेटे का साथ देती है। वह भी हीरा को अपशब्द कहती है। स्त्री होते हुए भी उसमें स्त्री सुलभ प्रेम और भावुकता या समझदारी बिल्कुल नहीं थी। वह हीरा से कठोर व्यवहार करती है। हीरा अबोध बाला है उसे घर–गृहस्थी को समझने में थोडा समय देना चाहिए, ऐसी समझदारी उसमें नहीं थी। वह तो हीरा से ऐसे बातचीत करती है जैसे वह कोई उम्र में बड़ी और अनुभवी युवती हो। एक नाबालिग लड़की से अपने बेटे का विवाह करने वाली माँ अपने बेटे के दोष को छिपाती है, और बेटे को सज़ा देने की जगह अबोध हीरा को गालियाँ देती है।

मोहन अपने मित्रों के साथ शराब पीकर आता है और घर पर खीचड़ी बनी है, यह सुनकर हीरा को गालियाँ देता है। बाद में हीरा को जोर से ढ़केल देता है, जिससे हीरा चूल्हे की आग से जल जाती है। गौने की पहली रात को ही वह ऐसे अत्याचार का शिकार बनती है। मोहन मिल में मजदूरी करता है, इसलिए वह अन्य मजदूरों की तरह अपनी पत्नी को पैर की जूती के अतिरिक्त कुछ नहीं समझता। शराब के नशे में चूर मोहन हीरा को इतना पीटता है कि वह बेहोश हो जाती है।

रात को तीन बजे तिस्कृत हीरा का मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है। मोहन और उसकी माँ हीरा के रौद्र रुप को देखकर घबरा जाते हैं। उन्हें लगता है, हीरा पर माताजी सवार हो गई है। हीरा माताजी के रुप में कहती है कि–

> **"बेचारी अभी तो बाला है। उसे संसार का क्या अनुभव। मोहनिया आ...आ तू काहे को पति बनकर बैठा है। और हीरा से पत्नी का हक माँगता है। तू पच्चीस वर्ष का गधा यह मात्र 12 वर्ष की। बिल्कुल कच्ची कली जैसी गरीब बाप की बेटी। हउस, हउस"**124

गरीब हीरा के अरमान उगे और खिलने से पहले ही मुरझा गए। हीरा देवी का रुप धरण करके मोहन और उसकी माँ को उनकी गलतियों को ऐहसास दिलाती है। हीरा का भूत उतारने किसी तांत्रिक को बुलाया जाता है, वह तांत्रिक हीरा को खूब पीटता है, हीरा अधमरी सी हो जाती है।

अपमान, तिरस्कार, पारिवारिक अत्याचार, गरीबी, असलामती से हीरा का मानसिक संतुलन बिगड जाता है। उसके कोमल ह्रदय पर इतना आघात लगा कि वह उसे सहन न कर सकी। इसमें किसकी भूल है ? एक भूल हीरा के पिता ने की थी। अपनी अबोध बेटी का विवाह करने की। दूसरी भूल मोहन की थी। अपने से 13 वर्ष छोटी लड़की से विवाह करके ? इस बाल विवाह और अनमेल विवाह की वजह से हीरा जैसी कई बालाएँ अनेक प्रकार की यातनाएँ सहती आई हैं और आज भी सहन कर रही हैं। उसमें उसका क्या दोष है। दोष तो हमारे समाज का है जो ऐसे विवाह पर प्रतिबंध नहीं लगा पाता। जब तक हमारे समाज में बाल विवाह या अनमेल विवाह को रोका नहीं जाएगा, तब तक हीरा जैसी कितनी ही बालाएँ पारिवरिक अत्याचार के कारण यातनाएँ सहेंगी। आखिर ऐसी हीरा का साथ कौन देगा ?

मोहन, हीरा को उसके पिता के घर छोड़ आता है। प्रश्न यह उठता है कि क्या हीरा अपने जीवन की इस घटना को भूल पाएगी ? उसका दूसरा विवाह हो पाएगा? क्या अब समाज में बाल विवाह नहीं होंगे ? क्या ऐसे अनमेल विवाह रोके जा सकेंगे ? क्योंकि ऐसे विवाह में भूल किसी ओर की होती है और उसकी सज़ा किसी और को भोगनी पड़ती है।

3. 'गाठाण'–प्रवीण गढ़वी

प्रवीण गढ़वी की **'गांठाण'** सर्वथा उपेक्षित स्त्री–पुरुष के संघर्ष के बाद करुण अंत की कहानी है। जीवली की एक आँख में रोशनी नहीं है और एक पैर से भी अपाहिज है, किन्तु उसका रुप किसी बनिये की बेटी जैसा था। बोली में मीठी किन्तु थोड़ा तोतला बोलती थी। काम करने में वह बहुत फुर्तीली थी। उसका विवाह हुलामणा नाम से चर्चित गाठाण नामक व्यक्ति से होता है। गाठाण कृष्ण जैसा रुपरंग में सुंदर था, किन्तु अठारह अंग वक्र होने से तीस वर्ष की उम्र में जीवली के साथ उसका विवाह होता है।

गाठाण मरे हुए प्राणी ढुँढकर उसके चमड़े में से कमिशन लेता था और बाल्टी भरकर मांस मिल जाने पर तो दो–तीन दिन के भोजन का काम चलता है, बचा हुआ मांस सुखा देता है। इस तरह उनका वैवाहिक जीवन सुखी था।

सुबह में ही गाठाण लकड़ी लेकर मरे हुए प्राणी ढुँढ़ने जाता है और जीवली गोबर बीनने, और मजदूरी करने निकल जाती थी।

जीवली खेतों में से हाथ डालकर भूमरा (ईंधन की सूखी लकड़ी) इकट्ठा करने में मशगूल थी। चैत्र की धूप थी, वहीं गीध की तरह घूमने वाला हालाजी का बेटा पीरुजी आ जाता है। जीवली खडी हो जाती है और घुंघट निकालकर कहती है,

"नमस्कार बापु, माई बाप" तब पीरुजी कहता है–
"सालो तुम्हारी जात, जंगल में एक भी जंगली पौधे रहने मत दो"[125]

कहता हुआ वह घोड़ी पर से नीचे उतरता है। जीवली बड़े अनुनय के साथ कहती है कि–

"घर में चूल्हा जलाए बिना रोटी कैसे बना सकते हैं ?"[126]

इस पर पीरुजी क्रोधित होकर उसे डाँटता है और दो थप्पड जड़ देता है। जीवली नीचे गिर जाती है। पीरुजी को इस पर भी तसल्ली नहीं होती, वह जीवली की साडी खींच लेता है, जीवली के सवर्णों स्त्री से सुंदर मुख को देखकर वह स्तब्ध रह जाता है। इस पर जीवली एक भी शब्द नहीं बोल सकी।

घर आकर भी जीवली कुछ कहती नहीं सिर्फ रोती जाती है। उसकी ऐसी स्थिति देखकर गाठाण परेशान हो जाता है। पूरी रात पूछने के बाद जीवली उसे अपने अपमान की बात बताती है। गाठाण यह सुनकर काँप जाता है। जीवली और गाठाण इस बात को जानते हैं कि दलित वर्ण में जन्मे वे इस अपमान को सहने के अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकते। गाठाण उसे समझाता है। कि–

> **"हम नीची जात हैं, खून ठंडा गरम हो जाए तो भी क्या करें ? उन लोगों के समक्ष लड़ना कोई बच्चों का खेल नहीं।"**127

पीरुजी और उसके परिवार का इतना दबदबा था, उस गाँव के दलितों पर कि अपनी बहन–बेटी–पत्नी की लाज बचाना मुश्किल था। जब चाहें वे किसी भी स्त्री को उठाकर ले जाते थे। इसलिए गाठाण ऐसी परिस्थिति को जीवली के साथ घटने नहीं देना चाहता। जीवली. को वह इस घटना को भूलने की सलाह देता है और कहता है–

> **"इस बात को भूल जाना। ऐसे देखने जाएँ तो मोहल्ले में कोई अछूता नहीं है। डाया की बेटी को लेकर चला गया था, उसे सप्ताह के बाद दिया था।"**128

दलितों की स्त्रियों का जातीय शोषण करना, उन पर अत्याचार करना, सवर्णों का शोख बन गया था। जिसे चाहते उसे अपनी हवस का शिकार बनाने के लिए निकल जाते। जीवली अपने पर बीती हुई घटना को भूल नहीं पाती। बार–बार दोहराती है।

राहत का काम शुरु हुआ था। जीवली वहॉ जैसे–जैसे मजदूरी करने जाती है। दोपहर को गाठाण घर आता है तो जीवली बेहोश थी। पूरा मोहल्ला उसकी झोपड़ी में आ गया था। जीवली को जीन्न (भूत) चढ़ गया है। चौराहे पर खोदने का काम कर रही थी, वहाँ काँच के शिशे पर कुदाल लगा। वह फूटा और उसमें से जीन्न सीधा जीवली के पेट में गया। तभी से जीवली बेहोश हो गई।

दस दिनों तक ओझा ने जीवली का भूत उतारने के लिए प्रयास किया। मुसलमान के पीर की दरगाह पर ले गए, जीवली को सीकड़ से मारा। गाठाण यह सब देखकर दुःखी होता। वह कहता है कि–

> **"अरे कहता हूँ कि जीन–फीन कुछ नहीं। यह तो साले का बेटा पीरुजी......"**129

किन्तु पुरी बात कह नहीं पाता। उसकी अंतर्रात्मा उसे सच कहने से रोकती है, क्योंकि सच सुनने के बाद भी कोई उसकी बात स्वीकार नहीं करेगा। इस बात को वह जानता था।

जीवली को तरह–तरह की यातनाएँ दी गई। ओझा कभी बर्फ जैसा ठंडा पानी उस पर डालता, कभी गर्म तेल के छींटे डालता, दस दिनों तक गाठाण सोता नहीं

है। बिना खाए–पीए जीवली अशक्त हो जाती है। ठाकुर और भरवाड का ओझा उसके पास से मुर्गा, नारियल, दाल आदि चींजे माँगते हैं। वे भी छुआ–छूत में विश्वास रखते हैं। दूर से ही जीवली पर मंत्र–तंत्र करते हैं, किन्तु गाठाण की दी हुई सामग्री को वे अवश्य स्वीकार लेते हैं, क्योंकि यही उनकी आमदनी थी।

अनेक यातनाओं को दस दिनों तक सहने के बाद जीवली हाड़पिंजर जैसी बन जाती है। इसके बावजूद वह पीरुजी का नामोल्लेख नहीं करती। मोहल्ले में आग लगा दी जाती है। दस दिनों तक अन्न का एक दाना उसके मुँह में नहीं गया उस पर ओझाओं की जानवरों के समान मार–पीट जीवली नहीं सह पाती और उसके प्राण पखेरु उड़ जाते है। गाठाण की आँखों में आँखों में आँसू आ जाते हैं, वह अपनी पीडा को इन शब्दों में व्यक्त करते हुए कहता है–

> **"इसे जलाना नहीं है। जानवरों की तरह चीरकर उसका माँस साले के घर भेजो। और कहना कि, खिला अपने बेटे को....।"**130

यहाँ गाठाण के शब्द सवर्णों की वास्तविक रुप को चित्रित करते हैं। पीरुजी और अन्य सवर्ण उनके जैसे दलितों का वैसा ही शोषण करते हैं, जैसे कोई गीध अपने शिकार को खाता है। जीवली मर गई किन्तु उसकी मौत का असली जिम्मेदार पीरुजी था। वह उस अपमान को नहीं झेल पा रही थी, न ही व्यक्त कर पा रही थी। वह अपने प्राण वह दे देती है।

कहानी में दलितों की भीरुता, अशिक्षा, अंधश्रद्धा, रीति–रिवाज आदि देखने को मिलते हैं, जिसकी वजह से जीवली अपने अपमान का बदला न लेते हुए अपने जीवन का अंत कर देती है। गाठाण भी जीवली को न्याय नहीं दिला पाता, शारीरिक, मानसिक, आर्थिक और सामाजिक रुप से वह पीरुजी का सामना किसी भी दृष्टि से करने में असमर्थ पाया जाता है।

<u>4.'दीकरा नी बहु' (बेटे की बहू)–प्रवीण गढ़वी</u>

प्रवीण गढ़वी की **'दीकरा नी वहू'** और रमेश दवे की 'मोक्ष' शीर्षक कहानी विशिष्ट प्रकार की है। दोनों कहानियों में अत्यंत महत्त्वपूर्ण बात यह है कि, सवर्णों के हृदय में दलितों के प्रति सद्‌भावना एवं प्रेम है। 'दीकरा नी वहू' कहानी में एक ब्राह्मण बुजुर्ग की मनोदशा का चित्रण है। बुढ़ा ब्राह्मण इसलिए समाज से बहिस्कृत किया जाता है, क्योंकि समाज के नियमों को तोडकर उसने अपनी जवान विधवा पुत्री का पुर्नविवाह करने की हिम्मत की थी। उसके इस साहस से वह अपनी बेटी की ज़िंदगी में खुशियाँ लाना चाहता था। बेटी का एक पुत्र है, उसके विवाह के लिए भी समस्या यह रहती है, कि कोई अपनी पुत्री उस घर में ब्याहना नहीं चाहता। बूढ़ी माँ अपने पुत्र की बहू को देखने के लिए सपने संजोए रहती है। परिवार की ईच्छाओं की पूर्ति के लिए शिवशंकर जाति–पाति पूछे बगैर बहू का सौदा करके अर्थात् खरीदकर एक लड़की को अपनी पत्नी के रुप में घर में ले आता है। जिस घर में छुआछूत का अधिक पालन किया जाता था, ऐसे घर में एक दलित लडकी बहू बनकर आती है। उसके व्यवहार, कामकाज, साफ–सफाई, अच्छे भोजन बनाने के गुणों से परिवार के सभी सदस्य अत्यंत प्रसन्न रहने लगते हैं। जैसी बहू की उन्होंने कामना की थी मंगू बिल्कूल वैसी ही थी।

पाँच छः महीने के बाद पुलिस मंगू की तलाश करते हुए शिवशंकर के घर पहुँच जाती है, तब बूढे पिता को पता चलता है कि उनकी बहू तो नीची जाति की है।

नीची जाति की बहू के हाथों का बना खाना खाने से पिता को शरीर अशुद्ध होने का पाप लगता है। पत्नी और शिवशंकर उसे मनाने का प्रयास करते हैं, किन्तु वह नहीं मानता। बुढ़ी पत्नी जब अपने पति का मनपंसद भोजन बैंगन की सब्जी बनाकर उसे खिलाती है, तो पहले निवाले को मुँह में रखते ही नीची मानी हुई बहू के हाथ की बनी बैंगन की सब्जी का स्वाद याद आ जाता है और बूढ़ा रो पड़ता है। बूढ़े का यह रोना नीची जाति की बहू को माफ करना एवं स्वयं का प्रायश्चित कहा जा सकता है। ब्राह्मण समाज की रुढ़िगत परंपरा को तोडकर दलित स्त्री के प्रति जागा प्रेमभाव ही सबसे महत्त्वपूर्ण बात है। कहानी में जिस रीति का इस्तेमाल किया गया है, वह विशिष्ट प्रकार की है।

कहानी के अंत में बूढ़े ब्राह्मण को पश्चाताप के आँसू बहाते हुए दिखाकर उसको ह्रदय का परिवर्तन होते दिखाया है। यदि ऐसा अंत न होता और बूढ़ा बहू को ही कोसता, तो कहानी में नयापन भला क्या होता ?

मंगू का चरित्र परिश्रमी एवं शांत स्वभाव का है। गरीब दलित स्त्री होने के कारण उसे बेच दिया जाता है। दलित होने के बावजूद वह ब्राह्मण परिवार की बहू के सारे कर्त्तव्यों का पालन करती है और उस परिवार को दिल से अपना लेती है। पुलिस उसे वहाँ से ले जाती है। मंगू को सुख न तो अपने दलित होने पर मिला था और न ही सवर्ण से विवाह करने पर ही। एक स्त्री होना और उसमें भी एक दलित स्त्री होने से उसका दोहरा शोषण होता है। कहानी में दलित युवतियों की खरीद–फरोख की जटिल वर्तमान समस्या पर भी प्रकाश डाला गया है।

3.6 दलित महिलाओं की आर्थिक समस्याएँ

1. 'रोटलो नज़राई गयो' जोसेफ मेकवान

हेता दलित वर्ग की स्त्री है, जिससे वह प्रतिदिन चार बाजरी की रोटी बनाती है। उसका परिवार इसी रोटी को कभी लहसून से तो कभी चटनी के साथ खाता है। तीन रोटी पोटली में बांधकर पति के लिए रखती है और एक रोटी के दो समान टुकड़े करके उसमें से एक भाग स्वयं खाती है और दूसरा टुकड़ा अपने पुत्र रघु को देती है। रघु यह रोटी शीघ्रता से खा जाता था, परंतु अपनी माँ के विषय में सोचकर आधी रोटी में ही संतोष कर लेता था। रघु स्कूल में रोटी ही लेकर जाता था। स्कूल में अन्य विद्यार्थियों के बीच वह भी नाश्ता करने बैठता। खाते समय वह आस–पास ध्यान न देता, किंतु पिछले चार–पाँच दिनों से वह देख रहा था कि उसके सहपाठी उसका मजाक उडाते हैं। बिच्छू के डंख जैसे उनके शब्द रघु को दुःखी करते हैं। सहपाठी रघु के लिए नाश्ता करने की जगह भी नहीं रखने लगे। सभी सहपाठी एक–दूसरे के नाश्ते की बड़ाई करते हैं, किंतु रघु की रोटी की कोई प्रशंसा नहीं करता बल्कि उसकी रोटी को हीन दृष्टि से देखते हैं। इससे रघु स्कूल में नाश्ता ले जाना बंद कर देता है। हेता को समझ में नहीं आता कि वह स्वयं अपने हाथों से पीसकर, संपूर्ण जीव डालकर रोटी बनाती है, और फिर भी बेटे को क्या हो गया है, वह रोटी क्यों नहीं लेकर जाता ?

पति कानजी मजदूरी करने जाता है। पहले तो सरकार ने ऐसा नियम बनाया था जिसके तहत मजदूरों को जमीनदार दोपहर को रोटी या चावल, अरहर की दाल देता था। पुरुषों को दो रोटी (मक्का की) और स्त्रियों को डेढ़ रोटी, जिससे साथ जाने वाले बच्चों का भी पेट भर जाता था। अब सरकार ने गरीबों के लिए यह कानून

बंद कर दिया है। इन सारी बातों के बारे में सोचकर हेता कई बार चिंता में डूब जाती थी। वह स्वयं अपने पेट पर पट्टा बांधकर अपने पुत्र को शिक्षा दिलाना चाहती है। उसने जैसी कमर–तोड मजदूरी की है, वैसी मजदूरी पुत्र को न करनी पड़े, ऐसी उसके हृदय की महत्त्वाकांक्षा है। उसके पास रुपये नहीं हैं, इसलिए कंजूसी से बाजरी की रोटी बनाती है। अब रघु वह रोटी नाश्ते में लेकर जाना नहीं चाहता, जिससे हेता को अपने पुत्र की लालीमा सुखती नज़र आती है। हेता को शंका होती है कि–

"उसकी रोटी को किसी की नज़र लग गई है ?"[131]

इससे उसका रोटी के प्रति मोह कम होता जा रहा है। हेता रघु की नज़र लाल मीर्च से उतारती है और आधी रोटी ब्राह्मण को तथा आधी रोटी गाय को खिलाती है। अपने पुत्र के लिए ईश्वर से प्रार्थना भी करती है। पुत्र के अजीब व्यवहार से वह असमंजस में पड़ जाती है। रघु पहले तो अपने घर में अपनी पढ़ाई की बातें करता था, तब हेता प्रसन्नता का अनुभव करती है। रघु अपने घर को अंग्रेजी में 'हाऊस' नहीं किंतु 'हट' कहा जाएगा, ऐसा कहता है, तब रघु की आवज़ में कुछ हीन भाव के दर्शन हेता को परेशान कर देते है। बेटा रघु स्कूल में रोटी नहीं ले जाता और घर पर खाता भी है, बिना मन के कुछ बोलता भी नहीं, यह सब हेता अपने पति से कहती है। वह पूरी रात सोती नहीं। रघु के पिता के कहे अनुसार वह गुड और रोटी उसे नाश्ते में ले जाने को देती है तब रघु कहता है रोटी के अलावा दूसरा तुझे क्या आता है, सुबह भी और शाम को भी रोटी ही। तब रोती आँखों से हेता उसे देखती रह जाती है। एक प्रश्न दिनभर उसे घुन की तरह चूसता रहता है। अच्छा–अच्छा भोजन वह कैसे बनाए ? वह कंट्रोल की दुकान से मिले गेहूँ निकालती है। उसे पीसकर दलीया बनाती है और आधे का हलवा बनाती है, पुत्र से कहती है–

> **"तुम्हारे लिए कुछ नया बनाया है, अन्नदेव का अनादर नहीं करना चाहिए।"[132]**

रघु गरम–गरम दो–चार निवाले खाता है और कहता है कि गेहूँ की रोटी यदि तुम बनाकर दो तो मैं स्कूल लेकर जाऊँगा। हेता समझ जाती है कि पुत्र को क्या परेशानी है, किंतु निःश्वास छोड़कर पुत्र को समझाती है, कि गेहूँ रोटी तेल के साथ ही अच्छी लगती है, गरम होती है तो ही खाई जा सकती है। हमारे पास रोज़ तेल के लिए रुपये नहीं हैं, जबकि बाजरी की रोटी हमारे लिए अनुकूल है, क्योंकि नमक डाली रोटी को पानी के साथ भी खाया जा सकता है। पहले कष्ट उठाकर पढ़ लो फिर सब अच्छा होगा। दूसरे दिन उसके पति को बुखार आ जाता है और रघु को एस.टी. बस पास के लिए पैसे चाहिए थे, तब हेता चूल्हे में जलती अग्नि की ओर देखती है और बचाए हुए 15 रुपये और पाँच रुपये अपने पडोसी से उधार मांगकर रघु को देती है। तब उसका चेहरा उतरा हुआ था। रुपये न होने से पति की सेहत बिगड़ती जा रही थी। तीन दिन मजदूरी पर न जाने की वजह से गेहूँ के आँटे की राब बनाती है। रघु उसे नहीं खाता तब वह चिढ़कर, रोष में कह उठती है।

> **"तू जब पढ़ लिख कर लाड साहब बनना, तब अपना मन पसंद खाना, खाना अभी हमारा खून मत पी।"[133]**

रात को तीनों जागते हैं। धनजी बुखार के कारण, हेता पुत्र पर रोष करने के कारण और रघु कभी चोरी करके किसी का नाश्ता नहीं खाना चाहिए यह सोचकर। सुबह रघु नाश्ते के लिए हेता से बाजरी की रोटी माँगता है तब हेता कहती है कि तीन दिनों से तुम्हारे पिता मजदूरी पर नहीं गए, इसलिए घर में आँटा नहीं है। कल तुझे रोटी बनाकर दूँगी। इस तरह हेता अपने पुत्र में आए बदलाव को महसूस करती है। वह इस बदलाव से खुश हो या दु:,खी उसे समझ में नहीं आता।

प्रस्तुत कहानी में दलितों की अत्यंत दयनीय स्थिति, गरीबी, आर्थिक विपन्नता आदि को चित्रित किया गया है साथ ही बाल मनोविज्ञान का भी प्रयोग देखा जा सकता है। हेता और रघु की गरीबी की समस्या को चित्रित करके लेखक ने उन तमाम दलित माता एवं पुत्र की मूलभुत समस्या पर प्रकाश डाला है।

2. 'मुंझारो'–दलपत चौहान

दलपत चौहान द्वारा रचित **'मुंझारो'** कहानी की नायिका का नाम जीवी और उसके पति का नाम रणछोड़ है। दलित होने के कारण मजदूरी करने के साथ–साथ गाँव के मृत पशुओं को उठाना उनका कार्य था। गाँव के लगभग सभी दलित मरे हुए पशुओं के मांस को पकाकर बड़े चाव से खाते भी थे। किसी एक को यदि मृत पशु मिलता तो, वह अन्य लोगों को बांटकर पकाकर खाया जाता। गरीब जीवी बड़ी मुश्किल से अपनी गृहस्थी चलाती है। ऐसे में रणछोड़ की अनुपस्थिति में उसे लवजीभा, जो कि गाँव के धनी व्यक्ति थे उनके घर से मृत पाडे को लाने का संदेश मिलता है। जीवी शीघ्र ही उनके घर पहुँचती है। वहाँ पहुँचकर उसे पता चलता है कि पाडा तो अभी जीवित है। जीवित पाडे को वह नहीं लेकर जा सकती। किंतु लवजीभा की माँ मणिमां ने उससे कहा कि इसे ले जाओ रास्ते में मर जाएगा। जीवी का मन फिर भी जीवित पाडे को लेकर जाने का न हुआ, आखिर दलितों के भी कुछ नियम–कानून होते हैं। अंत में मणिमां बीमार पाडे से छुटकारा पाने के लिए जीवी को लालच देती हैं कि यदि इस पाडे को तुम ले जाओगी तो मैं तुम्हें पाँच किलो बाजरी दूँगी। न चाहते हुए जीवी पाँच किलो बाजरे को पाने के लिए जीवित पाडे को घसीट कर ले जाती है।

जीवी जानती थी कि उसका पति रणछोड़ इस बात से नाराज़ होगा, इसलिए वह रणछोड़ से यह बात छुपाती है, कि पाड़ा अभी जीवित है। रणछोड जब उस पाडे को काटने के लिए औजार से वार करता है, तो वह जीवित होने के कारण छटपटाने लगता है। रणछोड़ स्तब्ध रह जाता है, थोडी देर में पाड़ा मर जाता है। रणछोड़ ने अंजाने में एक जीव की हत्या कर दी थी, जिसका उसे बडा दु:ख हो रहा था। रएाछोड जीवी पर नाराज़ होता है, किंतु जीवी ने यह कार्य मजबूरी में पाँच किलो बाजरे की लालच में किया था। रणछोड़ एक पशु को मारने के कारण अपने आपको पाप का भागी समझता है।

रणछोड़, लवजीभा से इस बात की पूछ–परछ करने के लिए लाठी लेकर चलने लगता है तो जीवी घबराकर कहती है–

> **"देखो.......देखो..... कोई झगड़ा न करना, प्रभु सब देखते हैं, हमने कोई पाड़ा नहीं मारा।"**
> **"चुप रह, प्रभुवाली, खाना बना, मैं अभी आया।"**

"मैंनें क्या कहा झगड़ा करना ठीक नहीं। अकेला लवजीभा नहीं, पूरी बिरादरी पाड़ा मारती है।"134

गरीब जीवी पति की नाराज़गी को समझती है, किंतु वह जानती है कि सवर्णों की जाति में जीवित पशु को कसाई को सौंपना कोई नई बात नहीं है। लवजीभा ही नहीं उनके जैसे अन्य लोग बीमार, अंतिम सांसे लेते पशुओं की देखभाल न करके उसे जीवित ही कसाई–खानों में भेजकर उससे मुक्ति पा जाते हैं। रणछोड़ ने भले ही अंजाने में पाड़ा था, फिर भी दूसरों की गलतियों को वह अनदेखा नहीं करना चाह रहा था।

लवजीभा के सामने आते ही रणछोड़ घबरा जाता है। उसका सारा क्रोध गायब हो जाता है। आखिर लवजीभा के समक्ष उसकी औकात ही क्या थी, जो वह उनसे कोई सफाई माँग सकता ? बिना कुछ कहे वह वहाँ से लौट आता है जीवी ने उस पाडे की सब्जी बनाई थी, किंतु रणछोड़ उसे देखकर घबरा जाता है, बार–बार उसे पाड़ा जीवित और छटपटाता हुआ नज़र आता है। अंजाने में किए अपराध के लिए वह उस दिन उपवास करके प्रायश्चित करता है। दूसरी ओर लवजीभा अपराध करके भी प्रायश्चित नहीं करते बल्कि खुशी में एक नई भेंस खरीद लाते हैं।

प्रस्तुत कहानी में जिस परिवेश का वर्णन किया गया है, वहॉ सिर्फ सवर्णों का ही बोल–बाला था। दलित उनके इशारे पर कार्य करने के लिए विवश थे। सवर्ण यदि कोई पाप भी करे, तो उनके लिए कोई नियम–कानून नहीं था। साथ ही वे दलितों को पाप करने के लिए विवश करते थे। गरीबी के कारण जीवी जीवित पाडे को लेकर आती है और पति से इस बात को छुपाती है, यहाँ एक दलित स्त्री की मनोदशा, परेशानी, गरीबी, भुखमरी आदि स्थिति पर प्रकाश डाला गया है। सवर्ण दलितों की मजबूरी और गरीबी को जानते हैं, इसलिए जो पाप वे स्वयं नहीं करते वे दलितों के हाथों करवाकर खुद बच जाते हैं। दलित रणछोड़ द्वारा उपवास करके अपनी गलती का प्रायश्चित करना दूसरी ओर सवर्ण लवाजीभा का अपराध करके भी नई भेंस लाकर खुशी मनाना, यहाँ कहानीकार ने दलित और सवर्ण की सोच पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। एक अपरिचित पाडे को मारने का रणछोड़ को गम होता है, किंतु स्वयं के पालित पशु की मृत्यु से सवर्ण लवाजीभा प्रसन्न होता है।

3.'हड़सेलो'–मणिलाल न. पटेल 'जगतमित्र'

दलितवास में रहने वाला मंगा लंगडा और अशक्त था। उसकी पत्नी टी. बी. मरीज थी। उसकी तीन बेटियाँ अरुणा, कुसुम और कोमल तथा छोटा बेटा था। गाँव में सरपंच की सीट आरक्षण कोटे में दूसरी बार आती है। अशोक नामक सवर्ण व्यक्ति इस सीट के लिए मंगा को चुनाव में खड़ा करना चाहता है। ऐसा करके वह नाम मंगा का और काम स्वयं का करने की चाल चलता है। इसके लिए वह मंगा से मीठी–मीठी बातें करके उसके घर का पानी पीकर पहले उसका भरोसा जीतता है, बाद में अपनी बात रखता है।

मंगा की बड़ी बेटी अरुणा सुंदर थी। अशोक उसे जब देखता है, तो उसकी आँखें लोहचुम्बक की भाँति अरुणा के सौन्दर्य से हटती नहीं। मंगा से वह अरुणा के विषय में जाल बिछाते हुए कहता है–

"आपकी अरुणा के लिए नौकरी की चिंता मत करो। इडर में मेरे एक मित्र के चाचा की ऑफिस में उसे लगा देंगे। वह नौकरी करने लगेगी तो अच्छा वर–घर मिल जाएगा।"[135]

वास्तव में अशोक एक ओर सरपंच के चुनाव में मंगा को जीताकर उसका लाभ स्वयं लेना चाहता है और दूसरी ओर अरुणा को नौकरी का लालच देकर उसके सौंदर्य को लूटना चाहता है। ऐसा करके उसके दोनों हाथों में लडडू आ गए थे।

गरीब, अनपढ़, दलित मंगा पूर्व दलित सरपंच चमन से दुश्मनी नहीं मोल लेना चाहता था, किन्तु अशोक ने उसे ऐसा जाल में फँसाया कि वह ना न कर सका। चुनाव में मंगा पॉच वोटों से जीत गया। अशोक की मेहनत का फल उसे मिल गया। साथ ही इस दरम्यान उसने अरुणा को भी अपने जाल में फँसा लिया था।

अशोक मंगा को पाँच हजार रुपये दवा खर्च के रुप में और दो हज़ार रुपये घर खर्च के लिए देता है। ऐसा करके वह मंगा के परिवार में अपनी अच्छाई का प्रदर्शन करता है। उनकी नज़रों में महान बनना चाहता है, किन्तु वास्तव में वह अरुणा से शारीरिक संबंध बनाता है और उससे मिले सुख के बदले में उन्हें रुपये देता है।

अरुणा को एक अदृश्य भय खाए जा रहा था। वह गर्भवती थी। उसके अरमानों की होली जल रही थी। अपने अपाहिज पिता के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाने के लिए उसने अपना सर्वस्व होम कर दिया था। एक बार शारदा के समक्ष वह रो पड़ी थी। उसकी माँ शारदा भी उसकी स्थिति समझती थी, वह रोते हुए कहती है–

"बेटी, तेरे पिता पैर से लाचार हैं नहीं तो मैं तुझे न करने जैसा काम नहीं करने देती।" अरुणा उत्तर देती है–
"माँ, मेरा तो जो होना था वह हो चुका, मुझे अब शादी नहीं करनी..... किन्तु कुसुम और कोमल का क्या होगा ?....मेरे पाप से वे बेचारी......... और यदि मुआ अशोक।"[136]

अशोक अरुणा का एबोर्शन करवा देता है। अरुणा नहीं चाहती थी, कि उसकी जैसी दशा उसकी छोटी बहनों की हो। माता–पिता की गरीबी और लाचारी के लिए वह स्वयं तो भस्म हो जाती है किन्तु उसे अब चिंता अपनी नहीं अपनी बहनों की थी।

अशोक की दानत अब अरुणा की छोटी बहन कंकु पर बिगड़ती है। वह कंकु को फॅसाना चाहता है। अरुणा और अशोक के संबंध की चर्चा पूरे गाँव में थी। इसलिए अरुणा का विवाह होना मुश्किल था। ऐसा ही व्यक्ति अब उसे मिल सकता था, जिस में स्वयं में कोई खोट हो अर्थात् किसी अपाहिज के साथ ही अब उसका विवाह हो सकता था। अरुणा तो बदनाम हो चुकी थी, उसका भविष्य अशोक ने नष्ट कर दिया था। उसकी पवित्रता को नष्ट करके उसने अरुणा को किसी की पत्नी बनने के लायक नहीं छोड़ा था। स्वयं अरुणा भी शादी करके किसी को धोखे में नहीं रखना चाहती थी। अरुणा अशोक को लेकर सुरेश्वर की बड़ी केनाल (नहर) पर आती है। अशोक को अरुणा का कोमल स्पर्श बहुत भाता है। अशोक अब अरुणा को हासिल कर चुका था, इसलिए उसके निशाने पर अब कुसुम थी। वह अरुणा से बड़ी चालाकी से अपनी बात करते हुए कहता है–

"हाँ' अरु, हमें तो जो करना है, कर ही डालना है......कुछ हो तो फिर अस्पताल नहीं जा सकते क्या ? किन्तु अरु, एक बार कुसुम को....मेरे साथ....कुछ नहीं मात्र मस्ती, समझाना उसे......समझी ?"137

अरुणा की बहन कुसुम से मजाक–मस्ती की बात का अर्थ वह खूब समझती थी। अशोक ने उसके साथ भी शुरुआत ऐसे ही की थी। अरुणा उसका उत्तर तो सहमती में देती है, लेकिन इसके साथ ही वह अशोक को केनाल में धक्का दे देती है। अशोक डूबकर मर जाता है। अरुणा उसे मरते हुए देखती रहती है और कहती जाती है–

"मेरी सास दीमक.......लेती जा लड्डू मेरी दुश्मन.....लेती जा लड्डू, मेरी सास दीमक.... ।"138

यहाँ अरुणा के घर में लगी दीमक उसे अशोक के रुप में अपने जीवन को धीरे–धीरे खाने वाली लगती है। दीमक और अशोक की साम्यता यहाँ दिखाई गई है। अशोक को दीमक की उपमा दी गई है दोनों का कार्य धीरे–धीरे किसी चीज़ को नष्ट करना है। अशोक भी मंगा के परिवार का धीरे–धीरे मंद गति से अपनी चपेट में लेता है और उन्हें विवश कर देता है, कि वे अपना सब–कुछ उसे समर्पित कर दे।

अरुणा अपने जीवन को बर्बाद कर चुकी थी, इसलिए वह अपनी बहन कुसुम को अशोक से बचाना चाहती थी। अशोक को केनाल में धक्का देकर वह अपनी बहन को बचा लेती है। इस तरह वह अशोक से प्रतिशोध ले लती है। अशोक रुपी दीमक को अपने और अपने परिवार के जीवन से वह जड़ से निकालकर दूर फेंक देती है।

प्रस्तुत कहानी में अरुणा दलित परिवार की बेटी है, किन्तु माता–पिता की गरीबी और अत्याचारी वश वह अपने आपको अशोक के समक्ष समर्पित करती है। ऐसा करके वह एक ओर अपने परिवार का सहारा बनती है, किन्तु दूसरी ओर अपना विनाश कर देती है। अरुणा अशोक से प्रेम नहीं करती। वह अशोक के हाथ की कठपुतली बनना नहीं चाहती। वह अपने परिवार की बड़ी बेटी नहीं बडा बेटा बनकर अपनी छोटी बहन की रक्षा करने के लिए अशोक का विनाश कर देती है। कहानी में प्रादेशिक बोली का प्रयोग किया गया है।

4.'कमली'–बी. केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् की प्रस्तुत कहानी **'कमली'** रोजी–रोटी के लिए आदिवासी प्रजा के भटकते जीवन को चित्रित करती है। कमली एक आदिवासी स्त्री है, जो अपने पति और तीन महीने के बच्चे के साथ शहर में मजदूरी की तलाश में आई है। उसका पति सुबह आठ बजे से रात के आठ बजे तक मजदूरी करता है। उसकी गैरमौजूदगी में कमली अपने दो बच्चों का ख्याल रखती है। सर पर छत नहीं है, ओढ़ने के लिए गर्म कपड़े नहीं हैं और न ही पेट भरकर खाना है। कमली ऐसी स्थिति में भी घबराती नहीं। एक कांट्राक्टर कहानीकार को सलाह देता है कि–

"साहब, अभी हमने वॉचमेन रखा नहीं है। वह औरत घर और सामान भी सँभालेगी।"139

कडकड़ाती ठंड़ी में तीन महीने के बच्चे को लेकर ठिठुरती हुई कमली पर कॉंट्राक्टर को दया आती है। लेखक ने उसका वर्णन इस प्रकार किया है।

> **"मैंनें उस आदिवासी औरत को देखा। उसने आधी बाहीं का ब्लाउज पहना था। कंधे पर और एक बाहीं का कपड़ा फटा हुआ था। उसके ब्लाउज का दो बटन खुला था। अभी ही उसने अपने बच्चे को स्तनपान कराया होगा। उसके मातृत्व के समक्ष उसकी जवानी की मानो उसे कोई सुध नहीं थी।"**[140]

कमली इतनी ठंडी में भी फटेहाल जीवन जीने के लिए विवश है। अपने बच्चों की जिम्मेदारी वह अकेले ही उठा रही है। वह घर से निकल पड़ी है और शहर में पहुँचकर जीवन जीने के लिए संघर्ष कर रही है। वह एक माँ है, इसलिए अपने कर्त्तव्य का पालन कर रही है। आदिवासी महिलाओं में अधितर यह दृश्य देखा जाता है, जो लेखक ने भी देखा। कमली की असहाय करुण दशा को देखकर लेखक ने उसे अपने बन रहे नए घर में रहने और काम करने की इज़ाजत दे दी।

सिर पर छत मिलते ही कमली अपने परिश्रमी होने का परिचय देती है। वह दिन में चार बार दीवारों पर पानी डालती है और घर की देख–रेख अच्छी तरह करती है। उसका काम देखकर लेखक प्रसन्न थे। जिस मोटर से वह पानी छांटती थी उसका स्वीच खराब और खुला हुआ था। लेखक को कमली के लिए चिंता थी, सो कॉंट्राक्टर के लापरवाही करने पर वह स्वयं वह स्वीच बनवाते हैं। स्वयं कमली भी डरती नहीं थी। अपनी धुन में वह काम में लग जाती थी, तो रोते हुए बच्चे को भी काम पूरा करने के बाद ही गोद में लेती है। जिस खुले वायर को लेकर लेखक चिंतित थे, कमली उससे बेफ्रिक थी। उसे खुले वायर से करंट लगने का कोई डर नहीं था। आए दिन यह अखबार में पढने को मिलता है, कि मजदूर को करंट लग गया और वो मर गया। ऐसी लापरवाही के कारण आदिवासी मजदूरों की मृत्यु आम बात हो गई है, किन्तु इसमें कॉंट्राक्टर की लापरवाही की सज़ा निर्दोष मजदूरों को मिलती है और उसका कोई वजीफ़ा भी उन्हें नहीं मिलता।

आदिवासियों में होली के त्यौहार का बड़ा महत्त्व होता है। काम–काज छोड़कर पन्द्रह दिनों के लिए सभी मजदूर अपने गाँव लौटकर आते हैं। कमली भी गाँव जाती है। उसकी जगह जो दूसरा वॉचमेन आता है उसकी पत्नी दरवाजे में बैठकर ही नहाती है, जो लेखक को बड़ा बुरा लगता है। उस समय उन्हें कमली की याद आती है। उसके काम के लिए लेखक को कभी शिकायत का मौका नहीं मिला था।

लेखक के घर के गृहप्रवेश के अवसर पर कॉंट्राक्टर उन्हें बताता है कि जो कमली उनके घर में काम करती थी वह मारबल घीसने की मशीन चला रही थी उसमें इलेक्ट्रिक वायर लूज था, जिससे उसे करंट लग गया और उसकी मौत हो गई। रोजी–रोटी के लिए अज्ञात जीवन जीने वाले आदिवासी कई बार ऐसे कार्य करते हैं जिसका अनुभव उन्हें नहीं होता और न ही उससे होने वाली दुर्घटना का अहसास उन्हें होता है। ऐसी स्थिति में कॉंट्राक्टर की गैरजिम्मेदारी की सज़ा मजदूर वर्ग को उठानी पड़ती है। लेखक को जिस बात का डर था वही होता है। परिश्रमी कमली अपने कार्य के प्रति इतनी समर्पित थी, कि इस समर्पण भाव में वह यह भूल गई कि अपनी सुरक्षा का ख्याल उसे रखना है। अनपढ अनजान कमली का करुण अंत लेखक को स्तब्ध कर देता है।

प्रस्तुत कहानी में आदिवासी प्रजा का शहर की ओर मजदूरी के लिए पलायन बताया गया है। मजदूरी की तलाश में आदिवासी कई बार बिना ट्रेनिंग लिए, बिना ज्ञान के ऐसे काम भी करने लगते हैं, जिसमें उनकी जान को खतरा होता है। कॉंट्राक्टर कम मजदूरी देकर ज्यादा काम करवाते हैं और अनुभवहीन लोगों से खतरे का काम भी करवाते हैं, परिणामस्वरुप कमली जैसे लोगों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ता है। आदिवासी स्त्रियों का रहन–सहन, वेश्भूषा, खान–पान, भाषा आदि का चित्रण लेखक ने बखूबी किया है।

5. 'आँख खुल गई'–बी. केशरशिवम्

कहानी की नायिका गज़रा के पिता अहमदाबाद की एक मिल में काम करते थे। माता–पिता मिलनसार और परिश्रमी थे। एक छोटा भाई भी था। उनका जीवन सुखी एवं शांतिमय रुप से बीत रहा था। गजरा का विवाह बड़े धूम–धाम के साथ किया गया। मिल के बंद हो जाने से पिता बेरोजगार हो गए। बस्ती में अब खुशहाली नहीं. भूख का नग्न तांडव हो रहा था। दलित वर्ग अगरबत्ती बनाकर, प्लास्टिक बीनकर बडी मुश्किल से दिन काट रहे थे। पहले आनंद के लिए कांकरिया जाते थे, किन्तु अब आत्महत्या करने वहाँ लोग जाने लगे।

गजरा के विवाह को वर्षो बीत गए उसका छोटा भाई पढ़–लिखकर ऊँचे ओहदे पर नौकरी करने लगा। दोनों वर्षों तक एक दूसरे से मिल नहीं पाते। गजरा के सीरियस होने की सूचना मिलते ही छोटा भाई अपनी पत्नी और बच्चों को घर छोड़कर अपनी गाड़ी लेकर निकलता है। उस बीच उसे भूतकाल की बातें याद आती हैं। बचपन में बडी बहन से उसकी अधिक घनिष्टता थी। बड़ी बहन की शादी और बिदाई का दृश्य आज भी उसकी यादों में ताज़ा था। गजरा के जन्म के बाद उनके घर में आर्थिक सुधार हुआ था और जाने के बाद खुशहाली चली गई थी।

शादी के कुछ दिनों बाद गजरा पति से झगड़ा करके मायके आई थी। पति ने उसे पीटा था वह बहुत रो रही थी, किन्तु पिता उससे कहते हैं–

> **"जिस रास्ते आई है उसी रास्ते लौट जा। अब तेरा घर तेरे ससुराल में है।"**[141]

जो माता–पिता अपनी बेटी को बडे लाड–प्यार से पालते हैं। जो पिता अपनी अंगुली पकडाकर उसे दुनिया दिखाते है आज वह पिता बेटी के विवाह के बाद, उसके संकट के समय उसे वही अंगुली दिखाकर ससुराल को उसका घर कहकर घर से निकाल देते हैं। गजरा की माँ रोती रही किन्तु पति के समक्ष बेटी का पक्ष नहीं ले सकती थी। गजरा रोती–रोती ससुराल चली जाती है।

उसके बाद वह जब भी मायके आई हँसते हुए ही आई। बेटियों को विवाह के बाद दुःख होता भी है, तो वह माता–पिता से नहीं कहती क्योंकि उनका आखरी घर तो पति का ही होता है। उसी घर को वे अपने जीवन का अंतिम ठीकाना मानकर संतोष प्राप्त करती हैं। गजरा अपने छोटे भाई की पढाई में सहयोंग देती है। मेट्रीक की परीक्षा देने के लिए माँ–बाप के पास रुपये नहीं थे, तब गजरा का पति उसके गहने बेचकर छोटे भाई की फीस भरता है ताकि वह आगे पढ़ सके, कुछ बन सके। होता भी यही है छोटा भाई मैट्रीक पास करके क्लर्क की नौकरी के साथ–साथ पढ़ाई भी करता है और एक दिन बड़ा अधिकारी बन जाता है। समाज और ऑफिस में उसे बहुत मान–सम्मान

मिलता है। पत्नी–बच्चे और ऑफिस ही उसके जीवन का केन्द्र बन जाते हैं। वह अपनी बहन और परिवार से धीरे–धीरे दूर होता जाता है। क्योंकि जिस ऊँची सोसायटी में वह रहता था, वहाँ उसने सभी से अपने दलित होने की बात छिपाई थी।

गजरा अपने बड़े बेटे से कई बार छोटे भाई को पत्र लिखवाती है, जिसमें उसके पति को टी.बी. की बीमारी और आर्थिक स्थिति खराब होने की बात लिखवाती है। छोटा भाई न तो पत्र का उत्तर देता है, न ही मिलने जाता है। पति की मृत्यु के बाद गजरा टूट जाती है। छोटा भाई इतना व्यस्त रहता है कि बहन का दुःख भी उसके कठोर हृदय को पीघला नहीं पाता। एक वर्ष में गजरा की हालत भी खराब हो जाती है। उसका पुत्र मामा को पत्र में लिखता है–

> **"पूज्य मामाश्री, मेरी माँ की तबीयत बहुत खराब है आपको एक बार आँखों से देखने की उनकी इच्छा है। समय निकालकर आ जाओ तो अच्छा होगा, आपको बहुत याद करती हैं। यह पत्र उन्होंने आग्रह करके लिखवाया है।"**[142]

लायक भाई के होने के बावजूद गजरा उससे मदद तो दूर उसे देखने के लिए भी तरसती है। छोटा भाई उसके सीरियस होने के तार मिलते ही घर से निकलता है। गजरा जैसे उसके आने का इंतजार ही कर रही थी। वर्षों बाद छोटे भाई को देखकर वह खुश तो होती है लेकिन उठकर बैठ भी नहीं सकती। वह कहती है–

> **"भाई, आपके बहनोई के देहांत के समय भी आप नहीं आए। आपको बहुत काम रहता होगा न। आपकी मैट्रीक की परीक्षा थी तब, आपके बहनोई ने मेरी चेन बेचकर आपकी फीस के रुपये दिए थे। आपको इसकी जानकारी नहीं है। आपके बहनोई ने यह बात आपको कहने से मना किया था इसलिए यह बात तुम्हें कहाँ से पता होगी ? आए होते तो उनकी आत्मा को शान्ति मिली होती।"**[143]

छोटा भाई बड़ी बहन गजरा के त्याग को भूल जाता है, उसके सहयोग को अनदेखा करता है। सभी संबंधियों से नाता तोड़ देता है, ताकि हाई सोसायटी के लोगों के बीच जाति छिपाकर मान–सम्मान पा सके या उसे खोने से बचा सके। इस झूठी शान–बान, दिखावे की दुनिया के लिए वह उन लोगों को दुःख पहुँचाता है जो उसे ऊँचाई तक पहुँचने में सीढी बने थे। बडी बहन की मदद से ही वह उच्च पद पर आसीन था। गजरा की आँखें हमेशा के लिए बंद हो जाती हैं किन्तु छोटे भाई की ऑखे खुल जाती हैं। भाई अपनी गलती के लिए पछताता है।

प्रस्तुत कहानी में भूख, गरीबी और अस्पृश्यता जैसी दलितों की मूल समस्या पर प्रकाश डाला गया है। यह समस्याएँ दलितों को अपनो से भी दूर करके दुःख पहुँचाती है। मिल में भी दलितों के साथ अस्पृश्यता का व्यवहार किया जाता है गजरा अपने आर्थिक संकट के समय छोटे भाई की मदद पाना चाहती है, किन्तु छोटा भाई उससे जाति छिपाने के कारण संबध नहीं रखना चाहता। एक बहन के लिए इससे अधिक पीड़ा की बात क्या होगी ? गजरा को उससे बहुत उम्मीदें थीं, किन्तु भाई उन पर खरा नहीं उतरता वह स्वयं की प्रगति तो करता है, किन्तु समाज की प्रगति में सहायक नहीं बनना चाहता। अस्पृश्यता, जातिगत भेदभाव मनुष्य से उसकी मानवता जैसे अमूल्य वस्तु भी उससे छीन लेती है। खून के रिश्ते भी यहाँ कमजोर पड़ जाते हैं।

दलित शिक्षित वर्ग में वर्तमान समय में जातिगत हीन भावना आज देखने को मिल सही है परिणाम स्वरुप दलितों के लिए आदर्श एवं प्रेरणा जो बन सकते हैं ऐसी नयी पीढ़ी के युवा दलित वर्ग जातिगत हीन भावना से ग्रस्त होने के कारण अपने मुलभूत कर्त्तव्य से भटक गये हैं।

6. 'पोक'—बी. केशरशिवम्

'पोक' कहानी मथुर और धनी के जीवन की कहानी है। मथुर गरीब दलित है, किन्तु स्वाभिमानी, निडर और संतोषी स्वभाव का है। जबकि धनी परिश्रमी, सहनशील और समझदार स्त्री है। दोनों गरीबी में रहते हुए भी एक दूसरे के साथ से खुश थे। मथुर को कभी—कभी इस बात का खेद होता था कि हमें और हमारे मोहल्ले के लोगों को कठोर परिश्रम करने के बाद भी पेटभर भोजन नहीं मिल पाता है। रात की रुखी रोटी और कभी—कभी तो तीन दिनों की बासी रोटी खाकर भी लोग मजदूरी करते है, पसीना बहाते हैं। इस पर भी मालिक गाली और अपमानित किए बिना उनसे बात नहीं करता है। मथुर स्वाभिमानी है, इसलिए मालिक की चार बातें सुनने से अच्छा कम पैसों के कार्य को चुनता है। वह एक थैले में प्लास्टिक के टुकड़े, पोलीथीन बेग, पुराने स्लीपर, चप्पल आदि बटोरकर, उन्हें बेचकर आठ रुपये जितनी कमाई कर लेता है। धनी उससे खेत में मजदूरी करने के लिए कहती तब उसका विचार इस प्रकार का होता था—

> **''काली मजदूरी करने के लिए वह तैयार था, किन्तु खेतवालों की गाली सुनते ही उसका खून उबलने लगता था। गाँव में और खेतों में बचपन से इस तरह की अवहेलना और गालियों को वह सुनता आया है। उसके स्वाभिमानी मानस पर जैसे हथौड़े पड़ने लगते थे। इससे अच्छा दो—चार रुपये कम मिलें किन्तु स्वाभिमान से खा तो सकते हैं, इसलिए उसने खेत में मजदूरी करनी छोड़कर थैला कंधे पर डाला था।''**[144]

मथुर ने बचपन से ही सवर्णों द्वारा अत्याचार और अवहेलना को सहा था, किन्तु अब वह स्वाभिमान के साथ जीवन जीना चाहता है। धनी अपने पति के स्वाभिमान की कद्र करती है, किन्तु घर की आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण वह उसे खेत में मजदूरी करने की सलाह देती है। मथुर के इंकार करने पर वह स्वयं खेत में मजदूरी करती है और उससे मिलने वाले रुपयों से ही घर का खर्च जैसे—तैसे चल रहा था। धनी को कई बार ऐसा लगता है कि मथुर अपने घमंड के कारण खेत में मजदूरी करने नहीं जाता, वह बासी रोटी खाने में नखरे करने वाले मथुर से कहती है—

> **''आपको भी थैला कंधे पर डालकर घूमने की आदत पड़ गई है। इससे तो अच्छा होता आप मेरे साथ खेत में आते तो एक बार दिन में बैंगन की सब्जी रोटी तो खाने को मिल ही जाती। किन्तु यह तो फिर शेर की गुफा है। इन्हें तो किसी के द्वारा कही गई बातें सुनना अच्छा नहीं लगता।''**[145]

धनी के समक्ष एक ओर आर्थिक समस्या है दूसरी ओर पति का स्वाभिमानी स्वभाव वह एक को महत्त्व देने जाती है तो दूसरा छूट जाता है। वह भी अपने घर में रोटी के साथ सब्जी खाना चाहती है, किन्तु पति के स्वाभिमान को ठेस न पहुँचे इसके लिए रुखी रोटी खाकर जीवन गुजारती है।

गाँव में सवर्णों का अत्याचार इतना अधिक था कि दलितों को वे मनुष्य समझते ही नहीं थे, पशुओं की भाँति उनसे परिश्रम करवाते थे। दलित जाति में पैदा होना उनके लिए किसी अभिशाप से कम नहीं था। अनपढ़ दलितों की मजबूरी थी, इसे सहने की। पढ़े–लिखे दलित भी बेरोजगारी के कारण मजदूरी करने के लिए विवश थे।

धनी को मथुर की चिंता है, क्योंकि आरक्षण के दंगे कल से शुरु हो गए हैं, किन्तु मथुर निडर और बेफिक्र है उसे कौन–सी नौकरी लेनी है सरकार से ? मथुर थैला लेकर अपने काम पर निकल जाता है और धनी भी खेत चली जाती है। आरक्षण के विरोधी टोले के लोग मथुर को पीटते है और उसे सिर पर गंभीर चोट लगती है। समाचार मिलते ही धनी सिविल अस्पताल मथुर के पास पहुँचती है। मथुर की बुरी हालत देखकर धनी जोर से चीखती है। उसकी यह चीख चारों दिशाओं में गूँजती है।

जिस स्थिति का सामना धनी ने किया वह कोई पहली बार नहीं हुआ था। आरक्षण के दंगों में हमेशा से निर्दोष लोगों की जाने ली गई हैं, ली जाती है। मथुर जैसा गरीब दलित होने की सज़ा भुगतता है और धनी अपने पति को घायल देखकर चीखने के अतिरिक्त कर ही क्या सकती है ? कौन उसकी चीख सुनकर उसकी मदद करने आएगा ? कौन उसके दुःख से पिघल जाएगा ? प्रस्तुत कहानी में लेखक ने आरक्षण के आंदोलन, दंगें, बेरोजगारी, गरीबी और सवर्णों के अत्याचार जैसी गंभीर समस्या पर एक साथ प्रकाश डाला है। गाँव की प्रादेशिक बोली से कहानी अधिक यथार्थ के वातावरण में रंग गई है। कहानी की नायिका धनी सशक्त नारी पात्र न होकर असहाय विवश, मजबूर स्त्री के रुप में चित्रित की गई हैं।

7.'लोही की लागणी'–डेनियल मेकवान

प्रस्तुत कहानी की नायिका मंगु है। कुबेर की पुत्री मंगु अपने छोटे सात भाई–बहनों के लिए अपनी पढ़ाई छोड़कर खेतों में मजदूरी का काम करने लगती है। उसे अपने से अधिक फिक्र अपने छोटे भाई बहनों की है क्योंकि विकराल मुँह खोले हुए गरीबी उसके समक्ष तांडवनृत्य कर रही थी। ऐसी स्थिति में यदि वह स्वयं परिवार को आर्थिक मदद नहीं करती है, तो उनको न तो शिक्षा मिल पाएगी न ही उनकी प्रगति हो सकेगी। पिता को मंगु की चिंता है, क्योंकि उसने सबके कल्याण के लिए बलिदान दिया है, पिता को चिंता मुक्त करते हुए वह कहती है–

"मेरी बात छोड़ो पिताजी। दूसरी भाई–बहनों की चिंता करो।"146

अपनी बडी बेटी के इस उच्च, आदर्श और त्यागमय स्वभाव को देखकर कुबेर की खुशी का ठीकाना नहीं रहता। उसकी छाती अपनी बेटी के गुणों को देखकर फूलने लगती थी। मंगु के विषय में वह सोचता–

> **"संसार है तो उसके योग्य पति उसे मिल जाएगा परंतु उसके त्याग से अन्य भाई–बहन तो पढ़ेंगे न। इससे तो वे तो सुखी होंगे न।"**147

कुबेर को ईश्वर पर विश्वास है कि बेटी मंगु के बलिदानी और सुंदर विचार हैं, तो उससे मेल खाने वाला जीवनसाथी उसे अवश्य मिल जाएगा। उसके सहयोग से अन्य बच्चे पढ़–लिख गए तो वे भी सुखी ही रहेंगे। अपने परिवार को सहयोग देना, यह मंगु की सबसे बड़ी खुशी थी।

मंगू परिश्रमी होने के साथ–साथ निडर और साहसी भी थी। खेत से लौटते समय एक दिन गॉव के सवर्ण भलाभाई का भतीजा उसे एकलता का लाभ लेकर उसका दाहिना हाथ पकड़ कर उसे खेतों के बीच बनी झोपड़ी में ले जाना चाहता है। रुपयों का लालच देकर वह मंगु को अपना शिकार बनाना चाहता है। गाँव में गरीबी इतनी थी कि गाँव की अन्य युवतियाँ थोड़े से रुपयों के लिए अपना शरीर बेचने को तैयार हो जाती थी। मंगु उन सबसे अलग थी। वह परिश्रम करके रुपये कमाना चाहती है, न की किसी का शोषण सह के। वह दिपला की दी गई लालच को ठुकराते हुए कहती है–

> **"दिपला। यह दाहिने हाथ का हसिया तेरा संबंधी नहीं रहेगा। तेरी मा–बहन है कि नहीं ?"148**

मंगु अपने हसिये को दिखाकर दिलीप को चेतावनी देती है कि, वह उसके रुपयों के लोभ में नहीं आने वाली है, साथ ही अपना बचाव भी वह कर सकती है। दिलीप फिर भी उसे नहीं छोड़ता तब वह हसिये से उसके हाथ और कंधे पर वार करती है। दिपला जैसे ही उसकी ओर हाथ बढ़ाता है, मंगु हसिए की नोक उसमें चुभा देती है। दिलीप ने कल्पना नहीं की थी, कि मंगु उस पर वार करने का साहस कर सकती है। वह मंगु के रौद्र रुप को देखकर, साथ ही घायल होकर वहाँ से भाग जाता है। इस तरह मंगु स्वयं अपनी रक्षा करती है।

मंगु के साहस से दिलीप और उसका परिवार बदले की आग में जलने लगा। रात होते ही वे लोग मंगु के मोहल्ले में हथियार लेकर आ पहुँचते हैं। दलितों का यह मोहल्ला सवर्णों के समक्ष कायर बन जाता था। उनका सामना करने का साहस किसी में नहीं था। जेठा नाम का युवक ही था, जो सवर्णों के अत्याचार और शोषण के खिलाफ विद्रोह करना चाहता था। उसका साथ देने वाला कोई नहीं था, किन्तु वह अकेला ही निर्णय ले लेता है कि वह सवर्णों के अत्याचार के खिलाफ असहाय नहीं बनेगा उनका सामना करेगा। वह कूद पड़ता है मंगु की रक्षा करने। उसके साहस को देखकर दलितवास के अन्य लोग धीरे–धीरे निकलने लगते है। जेठा पर वार कर रहे लोग इस चमत्कार को देखकर घबरा जाते हैं और दलितों के समूह से बचकर भाग जाते हैं। इस मोहल्ले में पहली वार किसी दलित ने शोषण के खिलाफ आवाज़ उठाई थी।

जेठा को इस घटना को बाद भी तसल्ली नहीं मिली थी। वह सवर्णों को ऐसी सज़ा देना चाह रहा था, जिससे भविष्य में वे दलितों की बहू–बेटियों पर अत्याचार करने का साहस न कर सकें। संतोक भलाभाई की पुत्री और दिलीप की बहन थी। सवर्णों में उसके जैसी सुंदर, बुद्धीशाली युवती नहीं थी। जेठा उसका अपहरण करके सवर्णो को अपमानित करने की ठान लेता है। वह मौके की तलाश में कई दिनों तक रामपुरी चाकू लेकर घूमता है। उसे ईश्वर से नाराज़गी है वह कहता है–

> **"उपरवाला ? कहाँ है उपरवाला ? होता तो यह दुःख ही नहीं होता, ना पीडा, ना दुविधा, ना अग्नि, ना जलन होती। अपमान और नीची जाति, अछूत का भेदभाव नहीं हो ता।"149**

अछूतों की पीडा यही थी कि जन्म लेते ही उन्हें जीवनभर दुःख झेलने के लिए मजबूर किया जाता था। अपमानित होना, शोषण सहना जैसे उनकी नियति बन गई

थी। जेठा एक दिन संतोक से बदला लेने के लिए उसे अकेले में मिल ही जाता है। जैसे ही वह उसके नजदीक जाना चाहता है, दो अनजान युवक संतोक पर हमला कर देते हैं। संतोक उनसे बचने के लिए जेठा से कहती है–

"जेठा भाई...जेठा भाई.....तुम्हारी बहन पर यह......... ।"151

ऐसा कहती हुई संतोक भक्षक को रक्षक समझकर उससे मदद माँगती है। संतोक पर आई मुसीबत जेठा को अपनी ही लगती है। वह उन दोनों युवकों की पीटाई करता है और स्वयं घायल भी हो जाता है। जेठा आज संतोक के लिए किसी भगवान से कम नहीं था। उसके कारण गाँव की इज्जत बच जाती है। जेठा को उकसाने वाला दिनिया जब अस्पताल में उससे मिलता है तो जेठा कहता है–

> **"दिनिया। तुम सच कहते हो। वैसे भी अपना खुन हल्का तो हल्का ही, दूसरा क्या हो सकता है ?"**151

बदले की भावना में जलने वाला जेठा संतोक को मुसीबत में देख उसकी रक्षा करता है। वह भक्षक नहीं रक्षक बन जाता है। यहाँ मानवता का धर्म जेठा के लिए अपने बदले की भावना से ऊँचा बन जाता हैं, बदला स्थूल अर्थ में नहीं होता।

प्रस्तुत कहानी में मंगु अपने आपको बचा लेती है, किन्तु उसके अपमान को जेठा पूरी बस्ती का अपमान समझता है। दूसरी ओर सवर्ण मंगु को दोषी समझते हैं क्योंकि विद्रोह करने वाला दलित उनका दुश्मन है। जेठा की बदले की भावना परिस्थिति बदलने पर परिवर्तित हो जाती है। दलितों की दयनीय स्थिति, गरीबी, भुखमरी, सवर्णो के अत्याचार आदि के वातावरण के बीच मंगु के पिता का बच्चों को शिक्षित बनाने का सपना, मंगु का भाई–बहनों के लिए त्याग अंधकार में आशा की एक किरण के रुप में हमारे समक्ष आता है। कहानी का शीर्षक 'लोही की लागणी' उचित है, किन्तु 'मैं' कथन कई जगह दुविधाजनक लगता है।

8.'कुलदीपक'–शैलेषकुमार क्रिस्टी

शैलेषकुमार क्रिस्टी द्वारा रचित **'कुलदीपक'** कहानी दलितों के एक ऐसे मोहल्ले का चित्रण करती है, जो बेहद ही गंदगी से भरा है। जहाँ गरीबी, भूख, और विवशता इतनी अधिक है, कि स्त्रियाँ अपनी देह का व्यापार करके अपना तथा अपने परिवार का भरण–पोषण बड़ी मुश्किल से कर पाती हैं। कहानी की नायिका सवली उनमें से एक है। उसका पति नौकरी करने बम्बई गया है। पति की अनुपस्थिति में एक बच्चे के साथ अपना जीवन बसर करना उसके लिए मुश्किल हो जाता है। एक दलाल की मदद से वह भी देह–व्यापार से जुड़ जाती है।

सवली भले ही वेश्या का काम करती है, किन्तु उससे पहले वह एक पत्नी और एक माँ है। अपने बीमार छोटे से पुत्र को छोड़कर वह किसी ग्राहक के पास नहीं जाना चाहती। झोंपडी में अकेली बीमार बच्चे के साथ वह चार दिन उसकी सेवा में गुजारती है, किन्तु वह ठीक नहीं होता। उसके पास इतने रुपये नहीं थे कि वह अपने बच्चे को अच्छे अस्पताल में ले जाए। दलाल उसे ग्राहक के पास ले जाना चाहता है, किन्तु वह नहीं जाना चाहती। बिना रुपयों के वह इलाज कैसे करवाएगी यह सोचकर वह ग्राहक को घर में भेजने की अनुमति विवशता में दे देती है।

एक ओर सवली का रोता हुआ बीमार बच्चा तो दूसरी ओर शराब के नशे में मदमस्त ग्राहक सवली को रातभर के लिए खरीदता है। ग्राहक ने सवली के लिए अधिक रुपये दिये थे, सो वह सवली पर अपना अधिकार जमाना चाहता है, हवस पूर्ति के लिए अपनी ओर उसे खींचता है तो दूसरी ओर रोता–बीलखता बीमार बच्चा अपनी माँ सवली को अपनी ओर बुलाता है। रात–भर सवली एक तरफ ममता और जिम्मेदारी तो दूसरी तरफ रुपये और मजबूरी के बीच झूलती है, अंत में ममता पर मजबूरी हावी हो जाती है और रोता बच्चा रोते–रोते दम तोड़ देता है। सुर्योदय होते ही कई रातों से जागी हुई सवली अर्धनिद्रा से उठकर अपने बच्चे के पास जाती है तो उसका कुलदीपक बुझ चुका होता है।

ग्राहक ने अपने रुपयों के बदले सवली के शरीर पर जीत हासिल कर ली थी, किन्तु जिस बच्चे के इलाज के लिए सवली ने अपना शरीर बेचना स्वीकार किया था, वह बच्चा रोते–रोते मर चुका था। ग्राहक के दिए हुए नोट पर सवली रोते हुए गाली देकर कहती है–

> **''लेता जा तेरे रुपये......जिसके लिए बैठी थी...वह दीपक बुझ गया, तो यह कागज का क्या करुँगी........ ।''**152

बेटे की दवा के लिए बिकने वाली दलित सवली उसी कारण अपने पुत्र को खो देती है। उसकी करुण स्थिति को लेखक ने चित्रित किया है। कहानी में घटना और स्थिति को उसकी भावभिव्यंजकता की दृष्टि से अधिक प्रभावक नहीं बना पाए हैं लेखक, किन्तु दलितवास के वातावरण, परिवेश को बड़ी सुक्ष्मता से प्रस्तुत किया है।

कहानी के शीर्षक 'कुलदीपक' को झोंपड़ी के लालटेन तथा स्ट्रीट लाइट के बुझने, सूरज का बादलों के बीच ढँकना जैसे किया सादृश्यों तथा सवली ग्राहक और कुतीया–कालीया के कथाघटकों के बीच के सादृश्य की रचना का थोड़ा बहुत प्रयास अवश्य किया है।

9.'भोरींग'–बी. केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् की प्रस्तुत कहानी **'भोरींग'** में गरीब दलितों की तनतोड़ महेनत करने के बाद भी पेटभर भोजन न मिलने की स्थिति को प्रस्तुत किया गया है। कहानी में मगन और पूंजा दोनों घनिष्ट मित्र हैं। रंग–रुप में दोनों एक जैसे हैं और एक ही पिता की संतान लगते हैं। वास्तव में पूंजा की माँ और मगन के पिता के बीच अनैतिक संबंध थे, दोनों एक ही पिता की संतान थे, ऐसा गाँव वाले और सोमला स्वयं भी सोचता है। दलित वर्ग में जातीय शोषण या स्वेच्छा से अन्य पुरुष के साथ शारीरिक संबंध की घटना कोई नई बात नहीं थी। सोमला की शंका गलत नहीं थी। उसे अपनी पत्नी से नाराज़गी है।

आठ वर्षीय मगन और पुंजा इन बातों से बेफिक्र अपने बचपन को जी रहे थे। दलितवर्ग में इतनी गरीबी थी कि घर में चावल का बनना किसी उत्सव से कम नहीं था। चावल उनके लिए घी के लड्डू के समान थे। इसलिए माताजी को प्रसाद में चढ़ाया जाता था। गाँव का एक वृद्ध व्यक्ति जला अपनी पत्नी से इसलिए झगड़ा करता है, क्योंकि वह उसे रोज़ बाजरी की रोटी और राब खिलाती है, उसकी मनपंसद, वस्तु चावल नहीं बनाती। जला की पत्नी पर नाराज़ होता है। जला की पत्नी अपने पति की तीव्र इच्छा को पूरा करना चाहती है, किन्तु उसके पास चावल खरीदने के लिए रुपये

नहीं हैं। भूख और अस्पृश्यता इस कहानी का केन्द्र विषय रहा है। यह प्रश्न दलित समूह का प्राणप्रश्न है।

मगन और पूंजा हरपल अपने जीवन में भूख और अस्पृश्यता जैसे दूषण का सामना करते हैं। भूख और अस्पृश्यता से दलित समाज जीवनभर जूझता है किन्तु उससे मुक्ति नहीं मिलती। आठ वर्षीय पूंजा दो दिनों से भूखा था, किन्तु अपने मित्र के कहने पर भी चोरी करके भोजन नहीं खाना चाहता। यहाँ बाल मनोविज्ञान का प्रयोग लेखक ने किया है। पूंजा बच्चा है, किन्तु उसके संस्कार अच्छे हैं।

जला की पत्नी अपने पति की छोटी सी इच्छा को पूर्ण नहीं कर पाती, क्योंकि उस मोहल्ले में तनतोड मेहनत करने के बावजूद किसी के घर इतना भोजन नहीं बनता कि सभी सदस्य पेट भर भोजन कर सकें। एक समय बड़ी मुश्किल से थोड़ा सा भोजन मिल सकता था। ऐसे लाचार, भूखे दलितों को सवर्णों की सेवा के बदले में मात्र गालियाँ और अपमान ही मिलता था। सवर्ण दलितों की मजबूरी का भरपूर लाभ उठाते थे।

एक ओर पूंजा जला के लिए कहीं से चावल लेकर आता है दूसरी ओर जला की वृद्ध पत्नी अपने पति की इच्छा पूर्ति के लिए घर के बर्तन को बेचकर एक कटोरी चावल को पकाती है। वह प्रसन्न थी, क्योंकि जला चावल खाने के लिए तडप रहा था। वह अपने पति के लिए चावल लेकर खेत में उसे खिलाने जाति है, किन्तु जला अपनी चावल खाने की तीव्र इच्छा को पूर्ण किए बिना ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। दो लोग जला के लिए चावल लाते हैं, परंतु जला नहीं खा पाता।

'भोरींग' (सर्प) के डंख से जला की मृत्यु हो जाती है, पाठकों के मन में 'भोरींग' प्रतीकात्मक रुप में आता है। कहानी में प्रादेशिक शब्दों के प्रयोग से वातावरण जीवंत बन जाता है। एक दलित पत्नी की समस्या थी कि वह अपने पति को भर पेट भोजन न बनाकर खिला सके। उसकी मृत्यु के बाद जीवनभर इस दुःख को लेकर जीना कितना कष्टकर हो सकता है, यह इस कहानी में देखा जा सकता है।

10.'रामली'–बी. केशरशिवम्

बी. केशरशिवम् द्वारा रचित **'रामली'** कहानी में कहानीकार ने सफाई कर्मचारी के जीवन की सूक्ष्मता को मार्मिकता से प्रस्तुत किया है। कहानी की नायिका रामली नगरपालिका में सफाई कर्मचारी है। कुछ महीने पहले उसके पति की मृत्यु हो जाती है। परिवार में उसका पाँच महीने का पुत्र के अतिरिक्त और कोई नहीं है। वह अपने बच्चे को एक पड़ोसी बूढ़े के पास छोडकर स्वयं सफाई का काम करने जाती है। यदि वह काम न करे तो घर में चूल्हा नहीं जलेगा। एक ओर मासूम बच्चा दूसरी ओर पेट की आग। गरीब रामली एक परिश्रमी और स्वाभिमानी स्त्री है। वह दूसरा विवाह करने से इंकार कर देती है और अपने पुत्र को अकेले ही पालने का निर्णय लेती है।

रामली जिस शहर में रहती थी, वहाँ चारों ओर प्लेग की बीमारी फैल जाती है। रामली अपने कर्त्तव्य से डरती नहीं और प्लेग से भयभीत होने के बावजूद वह अपने सफाई कार्य में लगी रहती है। यदि वह सही ढंग से कार्य नहीं करेगी तो उसकी नौकरी जा सकती है। यदि नौकरी नहीं रही, तो उसकी आमदनी का जरीया खत्म हो जाएगा। वह सस्पेन्ड नहीं होना चाहती। इसलिए जब उसे पता चलता है कि पाँच लोगों को अच्छा कार्य न करने पर सस्पेन्ड किया गया है, तो वह डर जाती है और सोचती है कि–

"उनमें वह स्वयं तो नहीं होगी ? यदि निकाल देंगे तो वह क्या खाएगी ? और अपने बच्चे के लिए दूध कहाँ से आएगा ? उसे भी तो बड़ा करके पढ़ाना है और बड़ा अफसर बनाना है।"153

रामली की गरीबी उसकी मौत के लिए कारण बनती है। अपने कर्त्तव्य के प्रति ईमानदार रामली प्लेग का शिकार हो जाती है। टी. वी. समाचार में 'रामली' के नाम का उल्लेख कहीं नहीं होता। कहानी के अंत में लेखक ने समाज पर कटाक्ष करते हुए तंत्र की जडता की घोर उपेक्षा रामली जैसे कर्मचारियों के प्रति व्यक्त की है।

निष्कर्ष

कहानियों के अध्ययन के लिए निर्धारित मुद्दों के आधार पर विवेचन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि हिन्दी और गुजराती की दलित कहानियों में भाषा और भौगोलिकता का अलगाव अवश्य हो सकता है, लेकिन सारी जीवन स्थितियाँ हर जगह एक–सी हैं। चाहे गुजरात हो या राजस्थान, बिहार हो या उत्तर प्रदेश, पंजाब हो या मध्यप्रदेश भारतीय समाज में दलित नारी के प्रश्न, समस्याएँ, दुविधा एवं मौजूदा स्थितियों में कोई खास अंतर नहीं है।

विवेच्य कहानियों में दलित नारी की संवेदना की दृष्टि से सवर्णों द्वारा जातीय शोषण को झेलने वाली दलित नारिया हैं तो उस शोषण के प्रति कुछ दलित नारियों का विद्रोह भी देखा जा सकता है। अस्पृश्यता से पीड़ित दलित नारी की संवेदनाएँ हैं, तो सवर्णों की स्वार्थी मनोवृत्ति को भी देखा जा सकता है। दलित नारी की आर्थिक समस्याएँ हैं, पारिवारिक शोषण को वे झेलती हैं फिर भी उनमें स्वाभिमान, प्रेम, पतिपरायणता, संस्कार, परिवार के प्रति प्रेम, भारतीय नारी के गुणों से युक्त दलित नारी का रुप भी प्रकट होता देखा जा सकता है। परिवार को आर्थिक रुप से सहायता करने वाली दलित नारी है। रुढ़िवादी परंपरा जिससे स्त्रियों को परतंत्र रखा जाता है, उस पर रीतिरिवाजों को थोपा जाता है, दलित नारियाँ उनके प्रति विद्रोह करती देखी जा सकती हैं। बहुधा दलित नारी लाचार दयनीय, व्यथीत–पीड़ित, दुःख, ताप, अन्याय का भोग बनती देखने को मिलती हैं। देश को स्वतंत्रता मिले वर्षों बीत गए किन्तु इस स्तंत्रता का लाभ दलित नारी को कितना प्राप्त हुआ है ? वह यदि स्वतंत्र हुई तो क्या होगा ? गुलाम रहे तो क्या होगा ? दलित स्त्री को अन्न, वस्त्र के अभावपूर्ण जीवन एवं अपने आबरु खोने की गुलामी में से कब मुक्ति मिलेगी ?

प्रस्तुत अध्याय में ग्रामीण परिवेश की कहानियों की बहुलता है जिसमें नारी–जीवन के जो विविध रुप हमें प्राप्त होते हैं, वह हमें उस प्रदेश एवं क्षेत्र के सामाजिक जीवन एवं परिवेश को भली–भाँति समझने में सहायक हो सकते है। शहरी परिवेश की कहानियों में नारी संवेदना को प्रस्तुत करने वाली कहानियाँ आंशिक पाई गई है।

दलित नारी की संवेदना की दृष्टि से श्रेष्ठ कहानियों में मोहन परमार की 'थड़ी', बी.केशरश्विम् की 'राती रायण की रताश', 'मेना', 'मंकोड़ा', हरीश मंगलम् की 'दायण', दलपत चौहान की 'गंगामॉ', विठ्ठलराय श्रीमाली की सांकड़ा', 'रोटलो नजराई गयो' जैसी कहानियों में दलित स्त्री के सकारात्मक व्यक्तित्व को प्रस्तुत किया गया है। प्रवीण गढ़वी की 'दरुपदी' एवं पुष्पा माधड की 'गोमती' कहानियों में मिथ के माध्यम से दलित नारी की संवेदना को प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रकार संपूर्ण अध्याय में दलित नारी की एक ऐसी छबी हमारे समक्ष आती है, जो परंपरागत रुप से पुरुष प्रधान भारतीय समाज द्वारा शोषित होती आई है। दलित नारी को मात्र बाह्य व्यक्तियों से ही नहीं उसे अपने पारिवारिक सदस्यों से भी संघर्ष करना पड़ता है। वह अपने घर में एक सफल गृहिणी के कर्त्तव्य को निभाती है, तो साथ ही मजदूरी, परिश्रम करके आर्थिक रुप से भी अपने परिवार के लिए सहायक बनती है। इन सबके बावजूद समाज एवं परिवार में उसे वह मान–सम्मान एवं स्वतंत्रता नहीं मिलती, जिसकी वे हकदार हैं। स्वाभिमान एवं आत्मसम्मान से जीने की उसकी साधरण सी इच्छा को सवर्ण अपने पैरों तले कुचलने के लिए आतुर रहते हैं। वह हर तरह के अत्याचार और अन्याय को सह रही है, किंतु वह निराश बिल्कुल नहीं हुई है। उसे विश्वास है कि शिक्षा एवं आत्मनिर्भरता से उसे वे सारे अधिकार एवं स्वतंत्रता मिल सकेंगी जिसे पाने के लिए सदियों से दलित स्त्री जूझ रही है। अब यह अत्यंत आवश्यक है कि उनकी स्थिति में सकारात्मक सुधार आए। अपने अधिकारों के प्रति दलित नारी में आई जागृति आज भले की संख्या की दृष्टि से आंशिक हों, किन्तु भविष्य में जागृति की इस रोशनी से संपूर्ण दलित नारियों को रोशनी से परिपूर्ण किया जा सकता है। जिस प्रकार यदि जलता हुआ एक दीपक हो तो उससे कई दीपकों को प्रज्वलित करना संभव होता है, उसी प्रकार आज की ये जागृत दलित नारियाँ कम हैं, किन्तु आने वाले कल में वे ऐसी असंख्य नारियों के लिए प्रेरणा बनेंगी।

संदर्भ सूची

1. दलित साहित्य आंदोलन डॉ. चनद्रकुमार वरठे पृ. सं. 31
2. वही पृ. सं. 31
3. 'मंकोड़ा' – दलित चेतना की कहानियाँ–सं. भार्गव ओमगुरु पृ. सं. 6
4. वही पृ. सं. 8
5. वही पृ. सं. 9
6. 'लाखु' (लक्षण) – वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 147
7. वही पृ. सं. 147
8. वही पृ. सं. 148
9. वही पृ. सं. 149
10. वही पृ. सं. 150
11. वही पृ. सं. 150
12. वही पृ. सं. 151
13. वही पृ. सं. 151
14. 'थणी' (दहलीज) – वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 132
15. वही पृ. सं. 135
16. वही पृ. सं. 137
17. वही पृ. सं. 139
18. वही पृ. सं. 141
19. फा.गु.सा. त्रैमासिक जनवरी–मार्च 1998 पृ. सं. 63
20. 'सोमली' – वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 236
21. वही पृ .सं. 236
22. वही पृ. सं. 236
23. वही पृ. सं. 237
24. वही पृ. सं. 239–240
25. वही पृ. सं. 240
26. 'रखोपा का साँप' – गुजराती दलित वार्ता पृ. सं. 73
27. वही पृ. सं. 79
28. 'भींस' – सं.मौलिक बोरीजा पृ. सं. 2
29. वही पृ. सं. 5
30. 'दरुपदी' – अंतरव्यथा–सं. प्रवीण गढ़वी पृ. सं. 12–13
31. 'छगना को न समझ में आते सवाल' – दलित वार्तादृष्टि–सं. मोहन परमार पृ. सं. 33
32. 'कडण' – कुभी–सं. मोहन परमार पृ. सं. 195
33. वही पृ. सं. 195
34. प्रत्यक्ष जुलाई–सितंबर 1997 पृ. सं. 37
35. वार्ता संदर्भ–सं. शरीफा वीजलीवाला पृ. सं. 127
36. 'अधूरा पुल' – गुजराती दलित कहानी–सं. मोहन परमार पृ. सं. 158
37. 'मेली मथरावटी' – गुजराती दलित वार्ता–सं. मोहन परमार पृ. सं. 117
38. वही पृ. सं. 115

39. वही पृ. सं. 172
40. वही पृ. सं. 117
41. वही पृ. सं. 110–111
42. वही पृ. सं. 219
43. 'झाड़' – वार्तालोक–सं. हसमुख वाघेला पृ. सं. 311
44. वही पृ. सं. 315
45. वही पृ. सं. 316
46. वही पृ. सं. 316
47. वही पृ. सं. 316
48. वही पृ. सं. 317
49. वही पृ. सं. 317
50. वही पृ. सं. 316
51. वही पृ. सं. 317
52. वही पृ. सं. 317
53. 'गोमती' – वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 120
54. वही पृ. सं. 120
55. वही पृ. सं. 120
56. वही पृ. सं. 121
57. 'सगपण' (सगाई) – वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 114
58. वही पृ. सं. 114
59. 'दाई'– वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 25
60. 'नवी'– नवी–सं. योगेशजोषी, हयाती वर्ष 1 अकं 1 मार्च 1998–सं. मोहन परमार पृ. सं. 61
61. वही पृ. सं. 61
62. वही पृ. सं. 63
63. 'फुट रे भुंडा' – वार्तालोक–सं. प्रीतम लखमाणी पृ. सं. 92
64. वही पृ. सं. 94
65. वही पृ. सं. 94
66. वही पृ. सं. 94
67. वही पृ. सं. 96
68. वही पृ. सं. 97
69. 'कदाच' (शायद) – वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 219
70. वही पृ. सं. 220
71. वही पृ. सं. 220
72. वही पृ. सं. 222
73. 'रोकडी'– चकु का वर–सं. चंद्राबेन श्रीमाली पृ. सं. 104
74. वही पृ. सं. 74
75. 'गोरुचंदन' – विलोपन–सं. भी.न.वणकर पृ. सं. 50
76. वही पृ. सं. 74
77. 'एबोर्शन' – तलप–सं. हरीश मंगलम् पृ. सं. 77
78. 'गंगामा' – मुंझारो–सं. दलपत चौहान पृ. सं. 6

79. वही पृ. सं. 98
80. वही पृ. सं. 99
81. 'रेड कार्पेट' – वार्तालोक–सं. विट्ठलराय श्रीमाली पृ. सं. 332
82. वही पृ. सं. 332
83. वही पृ. सं. 332
84. वही पृ. सं. 332
85. 'राजीनामा' (इस्तीफा) – राती रायण नी रताश–सं. बी.केशरशिवम् पृ. सं. 329
86. वही पृ. सं. 340
87. वही पृ. सं. 341
88. 'गूँगी चीख'– गुजराती दलित वार्ता पृ. सं. 108
89. 'बोटेली वस' –वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 39
90. वही पृ. सं. 39
91. 'शैली का व्रत' –साक्षी साबर नी –सं. विट्ठलराय श्रीमाली पृ. सं. 132
92. 'नरक'– नरक–सं. धरमाभाई श्रीमाली पृ. सं. 1
93. वही पृ. सं. 2
94. वही पृ. सं. 2
95. वही पृ. सं. 5
96. 'होड़' – हयाती मार्च 1998–सं. मोहन परमार, मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 73
97. वही पृ. सं. 77
98. 'दो बीघा जमीन' – वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 96
99. वही पृ. सं. 97
100. वही पृ. सं. 98
101. 'मुखिया का भांजा' – साक्षी साबरनी–सं. विट्ठलराय श्रीमाली पृ. सं. 34
102. वही पृ. सं. 35
103. 'जेल की रोटी '– दलित चेतना की कहानियाँ–सं. भार्गव ओमगुरु पृ. सं. 69
104. 'राती रायण की रताश' – दलित चेतना की कहानियाँ–सं. भार्गव ओमगुरु पृ. सं. 48
105. वही पृ. सं. 49
106. 'मेना' – दलित चेतना की कहानियाँ–सं. भार्गव ओमगुरु पृ. सं. 87
107. 'जोगन' – दलित चेतना की कहानियाँ–सं. भार्गव ओमगुरु पृ. सं. 79
108. वही पृ. सं. 79
109. 'वटोड'– विलोपन–सं. भी.न.वणकर पृ. सं. 22
110. वही पृ. सं. 22
111. वार्ता संदर्भ–सं. डॉ.शरीफा वीजलीवाला पृ. सं. 85
112. 'रुपा का पानी' – राती रायण की रताश–सं. बी.केशरशिवम् पृ. सं. 312
113. वही पृ. सं. 317
114. 'शहर की बहू' – दलित चेतना की कहानियाँ–सं. भार्गव ओमगुरु पृ. सं. 59
115. वही पृ. सं. 58
116. वही पृ. सं. 59
117. वही पृ. सं. 59
118. 'खील'– रातीरायण की रताश–सं. बी.केशरशिवम् पृ. सं. 321

119. वही पृ. सं. 324
120. वही पृ. सं. 324
121. वही पृ. सं. 327
122. 'इसमें सीता का क्या दोष' – साक्षी साबरनी–सं. विट्ठलराय श्रीमाली पृ. सं 70
123. 'भूल किसी की भोगे कोई'– साक्षी साबरनी–सं. विट्ठलराय श्रीमाली पृ. सं. 137
124. वही पृ. सं. 139
125. 'गाठाण'– वार्तालोक–सं. हरीश मंगलम् पृ. सं. 48
126. वही पृ. सं. 48
127. वही पृ. सं. 48
128. वही पृ. सं. 49
129. वही पृ. सं. 49
130. वही पृ. सं. 50
131. 'रोटलो नज़राई गयो' – वणबोटी वारताओ–सं. मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 56
132. वही पृ. सं. 57
133. वही पृ. सं. 60
134. 'मुंझारो'– वार्तालोक–सं. हरीश मंगलम् पृ. सं. 72
135. 'हडसेलो' – वार्तालोक–सं. हरीश मंगलम् पृ. सं. 202
136. वही पृ. सं. 202
137. वही पृ. सं. 207
1368. वही पृ. सं. 207
139. 'कमली' – राती रायण नी रताश–सं. बी.केशरशिवम् पृ. सं. 136
140. वही पृ. सं. 136
141. 'आँख खुल गई' – राती रायण की रताश–सं. बी.केशरशिवम् पृ. सं. 168
142. वही पृ. सं. 191
143 वही पृ. सं. 193
144. 'पोक' – राती रायण नी रताश–सं. बी.केशरशिवम् पृ. सं. 85
145. वही पृ. सं. 84
146. 'लोही की लागणी'– वणबोटी वारताओ–सं.मधुकान्त कल्पित पृ. सं. 74
147. वही पृ. सं. 74
148. वही पृ. सं. 75
149. वही पृ. सं. 79
150. वही पृ. सं. 79
151. वही पृ. सं. 80
152. 'कुलदीपक' – गुजराती दलित वार्ता–सं. राजेन्द्र जाड़ेजा पृ. सं. 34
153. 'रामली'– रातीरायण नी रताश–सं. बी.केशर शिवम् पृ. सं. 67